छेद १.

बाल ब्रह्मचारी पंडित मुनि श्री अमोलक ऋषिजी महाराज कृत-

हिन्दी भाषानुवाद सहित.

व्यवहार सूत्र

प्रसिद्ध कर्ता-दक्षिण हैदराबाद निवासी.

राजा बहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी जौहरी

अमूल्य.

प्रत १०००

जैन शास्त्रोद्धार मुद्रालय सिकंदराबाद (दक्षिण.)

स्व. राजा बहादुर लाला सुखदेवसहायजी. आदि.

अमूल्य शास्त्र दानदाता.

जैन स्थम्भ दानवीर



स्व. राजा बहादुर लाला सुखदेवसहायजी. जौहरी

ज० सं० १९०३. स्वर्गस्थ सं० १९७४.

जैन शास्त्रोद्धार मुद्रालय, सिकंदराबाद, (दक्षिण.)

जैन प्रभावक धर्म धुरंधर



लाला ज्वालाप्रसादजी जौहरी.

जन्म सं० १९५०

सूचना

शास्त्रोद्धार कार्य के प्रारंभ में जब मैं आया तब महाराज श्री से विनंती कि–यदि आप की आज्ञा होतो सब शास्त्रों की १००—१०० प्रत मेरे लिये अधिक छपावूं, महाराज श्रीने लालाजी साहेब से पूछा तो लालाजी साहेब ने पहिले साफ इनकार कर दिया, तब महाराज श्रीने कहा कि ज्ञान वृद्धि के काम में किस लिये ना कहते हो ? महाराज श्री का यह वचन लालाजी साहेब उत्थाप सके नहीं, और मुझे अनुज्ञा दी तब मैंने सब शास्त्रों की १००-१०० प्रत ज्यादा निकाली. प्रथम एक बत्तीसी की निछरावल (मूल्य) रु० १०० रखे थे. परंतु पीछे से युरोप महा युद्ध के प्रसगं से रु० १५० रखे गये हैं.

ता. १५-११-१०२०.
सीकंद्राबाद–दक्षिण.

माणिलाल शिवलाल शेठ,
झोवाला [काठीयावाड] वाला.
मैनेजर–जैन शास्त्रोद्धार कार्यालय,

मुख्याधिकारी

परम पूज्य श्री कहानजी ऋषिजी महाराज की सम्प्रदाय के शुद्धाचारी पूज्य श्री खुबा ऋषिजी महाराज के शिष्यवर्य स्व. तपस्वीजी श्री केवल ऋषिजी महाराज! आप श्रीने मुझ साथ ले महा परिश्रम से हैद्राबाद जैसा बड़ा क्षेत्र साधुमार्गीय धर्म में प्रसिद्ध किया व परमोपदेश से राजाबहादुर दानवीर लाला सुखदेव सहायजी ज्वाला प्रसादजी को धर्मप्रेमी बनाये. उनके प्रतापसे ही शास्त्रोद्धारादि महा कार्य हैद्राबाद में हुए. इस लिये इस कार्य के मुख्याधिकारी आपही हुए. जो जो भव्य जीवों इन शास्त्र द्वारा महालाभ प्राप्त करेंगे वे आपही के कृतज्ञ होंगे.

शिष्य-अमोल ऋषि

उपकारी-महात्मा

परम पुज्य श्री कहानजी ऋषिजी महाराज की सम्प्रदाय के कविवरेन्द्र, महा पुरुष श्री तिलोक ऋषिजी महाराज के पाटवीय शिष्य वर्य, पूज्यपाद गुरु वर्य श्री रत्नऋषिजी महाराज!
आप श्री की आज्ञासे ही शास्त्रोद्धार का कार्य स्वीकार किया और आप के परमाशिर्वाद से पूर्ण कर सका. इस लिये इस कार्य के परमोपकारी महात्मा आप ही हैं. आप का उपकार केवल मेरे पर ही नहीं परन्तु जो जो भव्यों इन शास्त्रोंद्वारा लाभ प्राप्त करेंगे उन सबपर ही होगा.

दास-अमोल ऋषि

सुखदेव सहाय ज्वालाप्रसाद

सुखदेव सहाय ज्वालाप्रसाद

आभारी-महात्मा

कच्छ देश पावन कर्ता मोटी पक्ष के परम पूज्य श्री कर्मसिंहजी महाराज के शिष्यवर्य महात्मा कविवर्य श्री नागचन्द्रजी महाराज!
इस शास्त्रोद्धार कार्य में आद्योपान्त आप श्री प्राचिन शुद्ध शास्त्र, हुंडी,गुटका और समय २पर आवश्यकीय शुभ सम्मति द्वारा मदत देते रहनेसेही मैं इस कार्य को पूर्ण कर सका. इस लिये केवल मैं ही नहीं परन्तु जो जो भव्य इन शास्त्रोद्वारा लाभ प्राप्त करेंगे वे सब ही आप के अभारी होंगे.

आपका अमोल ऋषि

हिन्दी भाषानुवादक

शुद्धाचारी पूज्य श्री खूबा ऋषिजी महाराज के शिष्यवर्य,आर्य मुनि श्री चेना ऋषिजी महाराजके शिष्यवर्य बालब्रह्मचारी पण्डित मुनि श्रीअमोलक ऋषिजी महाराज!आपने बडे साहस से शास्त्रोद्धार जैसे महा परिश्रम वाले कार्य का जिस उत्साहसे स्वीकार किया था उस ही उत्साह से तीन वर्ष जितने स्वल्प समय में अहर्निश कार्य को अच्छा बनाने के शुभाशय से सदैव एक भक्त भोजन और दिन के सात घंटे लेखन में व्यतीत कर पूर्ण किया. और ऐसा सरल बनादिया कि कोई भी हिन्दी भाषज्ञ सहज में समज सके, ऐसे ज्ञानदान के महा उपकार तल दबे हुवे हम आप के बडे अभारी हैं.

संघकी तर्फ से.

मुखदेव सहाय ज्वाला प्रसाद

सहायक मुनिमंडल

अपनी छती ऋद्धि का त्याग कर हैद्राबाद सीकन्द्राबादमें दीक्षा धारक बालब्रह्मचारी पण्डित मुनि श्री अमोलक ऋषिजीके शिष्यवर्य ज्ञानानंदी श्री देव ऋषिजी. वैय्यावृत्यी श्री राज ऋषिजी. तपस्वी श्री उदय ऋषिजी और विद्याविलासी श्री मोहन ऋषिजी. इन चारों मुनिवरोंने गुरु आज्ञाका बहुमानसे स्वीकार कर आहार पानी आदि सुखोपचार का संयोग मिला. दो प्रहर का व्याख्यान, प्रसंगोंसे वार्तालाप, कार्य दक्षता व समाधि भाव से सहाय दिया जिस से ही यह महा कार्य इतनी शीघ्रता से लेखक पूर्ण सके. इस लिये इस कार्य बदल उक्त मुनिवरों का भी बडा उपकार है.

सुखदेव सहाय ज्वाला प्रसाद

और भी-सहायदाता

पंजाब देश पावन कर्ता पूज्य श्री सोहनलालजी, महात्मा श्री माधव मुनिजी, शतावधानी श्री रत्नचन्द्रजी, तपस्वीजी माणकचन्द्रजी, कवीवर श्री अमी ऋषिजी. सुवक्ता श्री दौलत ऋषिजी. पं. श्री नथमलजी. पं. श्री जोरावरमलजी. कविवर श्री नानचन्द्रजी. प्रवर्तिनी सतीजी श्री पार्वतीजी. गुणज्ञ सतीजी श्री रंभाजी. धोराजी सर्वज्ञ भंडार, भीनासरवाले कनीरामजी बहादरमलजी बाँठीया, खीवडी भंडार, कुचेरा भंडार, इत्यादिक की तरफ से शास्त्रों व सम्मति द्वारा इस कार्य को बहुत सहायता मिली है. इस लिये इन का भी बहुत उपकार मानते हैं.

सुखदेव सहाय ज्वालाप्रसाद

शास्त्र-प्रकाशक

दक्षिण हैद्राबाद निवासी जौंहरी वर्ग में श्रेष्ट दृढधर्मी दानवीर राजा बहादुर लालाजी साहेब श्री सुखदेव सहायजी ज्वालाप्रसादजी!

आपने साधु सेवा के और ज्ञान दान जैसे महालाभके लोभी बन जैन साधुमार्गीय धर्म के परम माननीय व परम आदरणीय बत्तीस शास्त्रों को हिन्दी भाषानुवाद सहित छपाने को रु. २००००, का खर्चकर अमूल्य देना स्वीकार किया और युरोप युद्धारंभ से सब वस्तु के भाव में वृद्धि होने से रु. ४०००० के खर्च में भी काम पूरा होनेका संभव नहीं होते भी आपने उस ही उत्साह से कार्य को समाप्त कर सबको अमूल्य महालाभ दिया, यह आप की उदारता साधुमार्गीयों की गौरव दर्शक व परमादरणीय है!

आश्रयदाता

धोराजी (काठीयावाड) निवासी धर्म प्रेमी कार्यदक्ष कृतज्ञ मणिलाल शिवलाल शेट! इनोंने जैन ट्रेनिंग कालेज रतलाम में संस्कृत प्राकृत व अंग्रेजी का अभ्यास कर तीन वर्ष उपदेशक रह अच्छी कौशल्यता प्राप्तकी. इन से शास्त्रोध्धार का कार्य अच्छा होगा ऐसी सूचना गुरुवर्य श्री रत्न ऋषिजी महाराज से मिलने से इन को बोलाये, इनोंने अन्य प्रेस में शुद्ध अच्छा और शीघ्र काम होता नहीं देख शास्त्रोध्धार प्रेस कायम किया और प्रेस के कर्मचारियों को उत्साही कार्य दक्ष बना काम लिया. तैसे ही भाषानुवाद की प्रेसकोपी बनाइ, यद्यापि यह माह पगार से रहे थे तथापि इनोंने इस कार्य की सेवा वेतन के प्रमाण से अधिक की. इस लिये इनको भी धन्यवाद देते हैं.

व्यवहार सुत्र की प्रस्तावना.

प्रणम्य श्री महावीरं, तीर्थेशं सुखदं विभो । क्रियते बाल बोधाय, व्यवहार भाषावरा ॥ १ ॥

इष्टितार्थ की सिद्धी के लिये चारों तीर्थ के ईश्वर अनन्त चतुष्टय रूप विभूती के धारक सर्व सुख के अर्पक श्री महावीर स्वामी को नमस्कार करके चार छेद सूत्रों में का प्रथम छेद श्री व्यवहार सूत्र का हिन्दी भाषानुवाद करता हूं. श्री जिनेश्वर भणित जैन धर्म मुख्यता में द्वी विभाग में विभाजित किया गया है तद्यथा—१ निश्चय और २ व्यवहार. इस में निश्चय हेतु साधक है और व्यवहार निश्चय साधक है. अर्थात् व्यवहार साधते निश्चय साधता है और निश्चय साधने से इष्टितार्थ सिद्ध होता है. इस लिये कार्यार्थ साधक को प्रथम व्यवहार साधने की परमावश्यकता है. वे आत्मार्थ के साधने के व्यवहार पांच कहे हैं तद्यथा—१ आगम व्यवहार, २ श्रुत व्यवहार, ३ आज्ञा व्यवहार, ४ धारणा व्यवहार और ५ जीत व्यवहार. इन में से यह शास्त्र श्रुत व्यवहार रूप कथन कथक है. इस वक्त आगम व्यवहारी १ केवल ज्ञानी, २ मनःपर्यव ज्ञानी, ३ अवधि ज्ञानी, ४ चउदे पूर्वपाठी और ५ अभिन्न दश पूर्वपाठी का तो अभाव ही हो गया है. इस लिये आत्मार्थ (मोक्षपथ) साधक मुनिवरों का मुख्य कर्तव्य है कि— इस श्रुत व्यवहार में कथित प्रवृत्ति में प्रवृत्त करे.

सप्तमोद्देशा.

अष्टमोद्देशा,

नवमोद्देशा,

दशमोद्देशा.

इत्यनुक्रमणिका.

चतुर्विंशतितम्-व्यवहार सूत्र-प्रथमच्छेद.

॥ प्रथमोद्देशा ॥

जेभिक्खू मासियं परिहारठाणं पडिसेवित्ता आलोएज्जा अपलिओचियं आलोएमाणस्स मासियं, पलिओचियं आलोएमाणस्स दोमासियं ॥ १ ॥ जेभिक्खू दोमासियं परि-

जो कोई साधु एक मासिक प्रायश्चित आवे, ऐसा दोष स्थानक का सेवन कर उसकी आचार्यादि के पास आलोचना करे ते जो वह माया कपट रहित आलोचना करे तो उस को एकही महीने का प्रायश्चित आवे और जो वह माया-कपट युक्त आलोचन करे तो उस को (दुगुना) दो महीने का प्रायश्चित आवे + ॥१॥ जो कोई साधु दो मासिक प्रायश्चित आवे ऐसा दोष स्थान सेवन कर आलोचन करता हुवा

+कोइ तपस्वी फलादिके लिये नदी तटपर फिरते मच्छी का क्षभ किया जिस से उस के व्याधी हुइ. वैद्य के पूछ ने से लज्जा के वश मच्छी का नाम न लेते कन्द का नाम वताया, वैद्यने घृतपान करनेका कहा. जिससे अधिक व्याधी बढी तब फिर वैद्यने पूछा जो खाया हो, वह सच्चा कहने सेही व्याधी जायगी, तब उसने लज्जा त्याग मच्छ भक्ष का कहा,. तब वैद्यने कोठक शोधनकर उपचार से आरामकिया ऐसेही निष्कपट आलोचन करने सेही आचार्यजी प्रायश्चितादि द्वारा शुद्धकरसकते हैं.

हारठाणं पडिसेवित्ता आलोएज्जा, अपलिओचियं आलोएमाणस्स दोमासियं, पलिओचियं आलोएमाणस्स तिमासियं ॥ २ ॥ जेभिक्खू तिमासियं परिहारठाणं पडिसेवित्ता आलोएज्जा, अपलिओचियं आलोएमाणस्स तिमासियं पलिओचियं आलोएमाणस्स चाउमासियं ॥ ३ ॥ जेभिक्खू चाउमासियं परिहारठाणं पडिसेवित्ता आलोएज्जा, अपलिओचियं आलोएमाणस्स चाउमासियं, पलिओचियं आलोएमाणस्स पंचमासियं ॥ ४ ॥ जे भिक्खु पंचमासियं परिहारठाणं पडिसेवित्ता आलोएज्जा,

जो कपट रहित आलोचना करेतो दो महिने का प्रायश्चित आवे और कपट सहित आलोचना करेतो तीन महिने का प्रायश्चित आवे ॥ २ ॥ जो कोइ साधु तीन मासिक प्रायश्चित का स्थानक सेवन कर जो कपट रहित आलोचना करे तो तीन महिने के प्रायश्चित आवे और कपट सहित आलोचना कर तो चार महिने का प्रायश्चित आवे ॥ ३ ॥ जो कोई साधु चउमासिक प्रायश्चित का स्थान से वनकर कपट रहित आलोचना करे तो चार महिने का प्रायश्चित आवे और कपट सहित आलोचना करे तो पांच महिने का प्रायश्चित आवे ॥ ४ ॥ जो कोइ साधु पंचमासिक प्रायश्चित आवे एसा दोष स्थान सेवन करके जो कपट रहित आलोचना करे तो पांच महिने का प्रायश्चित आवे और जो कपट सहित आलोचना करे तो छ महिने का प्रायश्चित आवे- इस के उपरांत प्रायश्चित के स्थानक का सेवन कर कपट रहित या कपट

सूत्र अपलिओचियं आलोएमाणस्स पंचमासियं, पलिओचियं आलोएमाणस्स छमासियं ॥ तेणं परं पलिओचिएत्रा, अपलिओचिएत्रा आलोएमाणस्स तंचव छम्मासा॥५॥जेभिक्खू बहुसोवि मासियं परिहारठाणं पडिसेवित्ता आलोएज्जा अपलिओचियं आलोएमाणस्स मासियं, पलिओचियं आलोएमाणस्स दोमासियं ॥ ६ ॥ जे भिक्खू बहुसोवि दोमासियं परिहारठाणं पडिसेवित्ता आलोएज्जा, अपलिओचियं आलोएमाणस्स दोमासियं, पलिओचियं आलोएमाणस्स तिमासियं ॥ ७ ॥ जे भिक्खू

अर्थ सहित किसी भी प्रकार आलोचना करे तो छ ही महिने का ही प्रायश्चित आता है. क्यों कि छ महिने के ऊपरांत प्रायश्चित किसी भी तीर्थंकर के वारे में नहीं होता है. छ महिने का ही उत्कृष्ट तप है और उतनाही उत्कृष्ट प्रायश्चित होता है ॥ ५ ॥ [यह तो एक वक्त दोष लगाने आश्रिय कहा, अब बहुत वक्त दोष सेवन आश्रिय कहते हैं] जो कोई साधु बहुत वक्त (किसी कारन सिर तीन वक्त) एक मासिक का प्रायश्चित स्थान का सेवन कर जो कपट रहित आलोचना करे तो एक महिने का प्रायश्चित आवे और जो कपट सहित आलोचना करे तो दो महिने का प्रायश्चित आवे ॥ ६ ॥ जो कोई साधु बहुत वक्त दो मासिक का प्रायश्चित स्थान का सेवन कर उस की कपट रहित आलोचना करे तो दो महिने का प्रायश्चित आवे और जो कपट सहित आलोचना करे तो तीन महिने का प्रायश्चित आवे.

बहुसोवि तिमा . . . प हारठाणं पडिसेवित्ता आलोएज्जा, अपलिओचियं आलोएमाणस्स तिमासियं, पलिओचियं आलोएमाणस्स चउमासियं ॥ ८ ॥ जे भिक्खू बहुसोवि चाउमासियं परिहारट्ठाणं पडिसेवित्ता आलोएज्जा, अपलिओचियं आलोएमाणस्स चाउमासियं; पलिओचियं आलोएमाणस्स पंचमासियं ॥ ९ ॥ जे भिक्खू बहुसोवि पंचमासियं परिहारठाणं पडिसेवित्ता आलोएज्जा, अपलिओचियं आलोएमाणस्स पंचमासियं पलिओचियं आलोएमाणस्स छम्मासियं ॥ तेणं पर पलिओचियंवा अपलिओचियंवा आलोएमाणस्स तंचेव छम्मासा ॥ १० ॥ जेभिक्खू मासियंवा दोमासियंवा

॥ ७ ॥ जो कोई साधु बहुत वक्त तीन मासिक प्रायःश्चित्त स्थान सेवन कर कपट रहित आलोचना करे तो तीन महीने का प्रायःश्चित्त आवे और कपट सहित आलोचना करे तो चार महिने का प्रायःश्चित्त आवे ॥ ८ ॥ जो साधु बहुत वक्त चौमासिक प्रायःश्चित्त स्थान सेवन कर कपट रहित आलोचना करे तो चार महिने का प्रायःश्चित आवे और कपट सहित आलोचना करे तो पांच महिने का प्रायःश्चित्त आवे ॥ ९ ॥ जो कोई साधु बहुत वक्त पांच मासिक प्रायःश्चित्त स्थानक सेवन कर कपट रहित आलोचना करे तो पांच महिने का प्रायःश्चित्त आवे और जो कपट सहित आलोचना करे तो छ महिने का प्रायःश्चित्त आवे इस उपरांत किसी भी प्रायःश्चित्त का स्थानक सेवन करे और कपट सहित तथा कपट रहित

सूत्र

तिमासियंवा चाउमासियंवा पंचमासियंवा एएसिं परिहारठाणाणं अण्णयरं परिहारठाणं पडिसेवित्ता आलोएज्जा अपलिओचियं आलोएमाणस्स मासियंवा दोमासियंवा तिमासियंवा चाउमासियंवा पंचमासियंवा, पलिओचियं आलोएमाणस्स दोमासियंवा तिमासियंवा चाउमासियंवा पंचमासियंवा छमासियंवा. तेणंपरं पलिओचियंवा अपलिओचियंवा आलोएमाणस्स तं चेव छम्मासा ॥ ११ ॥ जेभिक्खू

अर्थ

किसी भी प्रकार आलोचना करे तो भी उसे छमहिने काही प्रायश्चित्त आता है. ॥१०॥ अब आगे उक्त सर्व प्रकार के प्रायश्चित्त को समुच्चय ही कहते हैं. जो कोई साधु एक मासिक का, दो मासिक का, त्रिमासिक का, चौमासिक का, पंचमासिक का, इन प्रायश्चित्त के स्थान में से हरेक प्रायश्चित्त का स्थान सेवन कर आलोचना करता हुआ जो कपट रहित आलोचना करे तो एक मासिकवाले को एक महिनेका, दो मासिकवाले को दो महिने का, त्रिमासिकवाले को तीन महिने का, चार मासिकवाले को चार महिने का और पांच मासिकवाले को पांच महिने का प्रायश्चित्त आता है. और जो कपट सहित आलोचना करे तो एक मासिकवाले को दो महिने का, दो मासिकवाले को तीन महिने का, त्रिमासिकवाले को चार महिने का, चौमासिकवाले को पांच महिने का और जिसने पांच मासिक का प्रायश्चित्त का स्थान सेवन किया उसे छ महिने का प्रायश्चित्त आता है. इस उपरांत किसी भी तप के प्रायश्चित्त के दोष स्थान सेवनेवाला कपट रहित व कपट सहित आलोचना करे तो छ महिने का ही प्रायश्चित्त आता है. ॥ ११ ॥

बहुसोवि मासियं, दोमासियंवा तिमासियंवा चउमासियंवा पंचमासियंवा एएसिं पडिहारट्ठाणाणं अण्णयरं परिहारठाणं परिसेवित्ता आलोएज्जा, अपालिओचियं आलोएमाणस्स मासियंवा दोमासियंवा तिमासियंवा चउमासियंवा पंचमासियंवा, पलिओचियं आलोएमाणस्स दोमासियंवा तिमासियंवा चाउमासियंवा पंचमासियंवा, छमासियंवा, तेणंपरं पलिओचियंवा अपालिओचियंवा आलोएमाणस्स

यह एक वचन आश्रिय कहा अब बहुत वचन आश्रिय कहते हैं- जो साधुने बहुत वक्त एक मासिक दो मासिक त्रिमासिक चौमासिक व पंच मासिक प्रायश्चित्त का स्थानक सेवन किया उस की जो कपट रहित आलोचना करे तो एक को एक, दो को दो, तीन को तीन, चार को चार और पांच वाले को पांच महिने का प्रायश्चित्त आता है. और जो वो साधु उक्त प्रायश्चित्त का स्थानक सेवन कर कपट सहित आलोचना करे तो एक मासिकवाले को दो महिने का, दो मासिकवाले को तीन महिने का, तीन मासिकवाले को चार महिने का, चार मासिकवाले को पांच महिने का और पंचमासिक वाले को छ महिने का प्रायश्चित आता है. उस उपरान्त किसी भी प्रायश्चित का स्थानक का सेवन करे और कपट सहित तथा कपट रहित किसी भी प्रकार आलोचना करे तो उसे छही महिने

सूत्र

तंचेव छम्मासा ॥ १२ ॥ जे भिक्खू चाउमासियंवा सातिरेग चाउमासियंवा पंचमासियंवा सातिरेग पंचमासियंवा, एएसिं परिहारठाणाणं अण्णयरं परिहारठाणं पडिसेवित्ता आलोएज्जा अपलिओचियं आलोएमाणस्स चाउमासियंवा सातिरेग चाउमासियंवा पंचमासियंवा सातिरेग पंचमासियंवा,पलिओचियं आलोएमाणस्स पंचमासियंवा

अर्थ

का प्रायश्चित आता है. ॥ १२ ॥ यह तो पूर्ण महिने आश्रिय प्रायश्चित का कहा. अब महिने आदि से कुछ अधिक प्रायश्चित का स्थानक सेवन कर उस आश्रिय कहते हैं—जो साधु चौमासिक प्रायश्चित का स्थानक सेवन करे अथवा चौमासिक से कुछ अधिक प्रायश्चित का स्थानक सेवन करे, पंचमासिक प्रायश्चित का स्थानक सेवन करे. तथा पंचमासिक से कुछ अधिक प्रायश्चित का स्थानक सेवन करे. उक्त प्रायश्चित के स्थान में से किसी भी प्रायश्चित का स्थानक को सेवन करे. जो कपट रहित आलोचना करने वाले को चार महिनेका, चौमासिक से कुछ अधिक वाले को कुछ अधिक चार महिनेका पंचमासिक वाले को पांच महिनेका और पंचमासिक से कुछ अधिक वालेको पांच महिने से कुछ अधिक का प्रायश्चित आता है. और कपट सहित आलोचाना करने वालेको चौमासिक वालेको पांच महिनेका, चौमासिकसे कुछ अधिक वालेको पांच महिनेसे कुछ अधिकका, पांचमासिक वालेको छ महिने का और पंचमासिकसे कुछ अधिक वाले को भी छ महिने का ही प्रायश्चित आता है. उस के उपरांत कितना भी प्रायश्चित का स्थानक सेवन कर

अ र्थ

सातिरेग पंचमासियंवा छमासियंवा, तेणपरं पलिओचियंवा अपलिओचियंवा, तंचेव छम्मासा ॥ १३ ॥ जे भिक्खू बहुसोवि चाउमासियंवा सातिरेगं चाउमासियंवा, पंचमासियंवा सातिरेग पचमासियंवा एएसिं परिहारठाणाणं अण्णयरं परिहारठाणं पडिसेवित्ता आलोएज्जा, अपलिओचियं आलोएमाणस्स चाउमासियंवा, सातिरेगं चाउमासियंवा, पंचमासियंवा सातिरेग पंचमासियंवा, पलिओचियं आलोएमाणस्स पंचमासियंवा सातिरेग पंचमासियंवा, छमासियंवा तेणपरं पलिओचियंवा

कपट सहित व कपट रहित आलोचना करने से छ महिने का ही प्रायश्चित आता है, इस उपरांत प्रायश्चित नहीं है ॥ १३ ॥ यह एक वचन आश्रिय कहा, अब बहुत वचन आश्रिय कहते हैं-जो साधु बहुत वक्त चौमासिक, चौमासिक से कुछ अधिक बहुत वक्त पंचमासिक पंचमासिक से कुछ अधिक का प्रायश्चितका स्थानक सेवन करे जो कपट रहित आलोचना करतो चौमासिक प्रायश्चित वालेको चार महिने का, चौमासिकसे कुछ अधिक वाले को चार महिने से कुछ अधिक पंचमासिक वाले का पंचमहिनेका और पंचमासिक से कुछ अधिक वाले को पांच महिने से कुछ अधिक का प्रायश्चित आता है और जो कपट सहित आलोचना करेतो चौमासिक वाले को पांच महिने का, चौमासिक से कुछ अधिक वाले को पांच महिने से कुछ अधिक का, पांच मासिक वाले को छ महिने का और पांच मासिक से कुछ अधिक वाले

सूत्र — अपलिओचियंत्रा आलोयमाणस्स तंचेव छम्मासा ॥ १४ ॥ जेभिक्खू चाउमासियंत्रा सातिरेग चाउमासियंत्रा पंचमासियंत्रा, सातिरेगं पंचमासियंत्रा एतेसिं परिहारठाणाणं अण्णयरं परिहारठाणं पडिसेवित्ता आलोएज्जा अपलिओचियं आलोएमाणस्स

अर्थ — को भी छ महिने का प्रायश्चित आता है उस के उपरांत किसि भी प्रायश्चित के स्थानक सेवनकर कपट रहित तथा कपटसहित किसि भी प्रकार आलोचना करो किन्तु छ महिने से अधिक तपका प्रायश्चित नहीं है ॥ १५ ॥ अब प्रायश्चित्त उतार के पुनः प्रायश्चित्त लगावे तो उस को प्रायश्चित्त देनेकी विधि बताते है. जो कोई साधु चौमासिक अथवा कुछ अधिक चौमासिक पंचमासिक अथवा कुछ अधिक पंचमासिक प्रायश्चित्त का स्थानक सेवन कर के आलोचना करता हुवा जो कपट रहित आलोचना करेतो जो उस ने सर्व संघ के जानने मे आया हो इस प्रकार प्रायश्चित का स्थानक सेवन किया हो अर्थात् प्रगट दोष लगाया हो तो सर्व संघ के सन्मुख प्रायश्चित दे जिस से दूसरों को भी भयोत्पन्न होवे कि हम भी दोष लगावेंगे तो हमारे को भी इस प्रकार जरूर प्रायश्चित्त आवेगा, और जो गुरु आज्ञा देवे कि यह कल्पास्थित है इस लिये इस का प्रायश्चित्त पूर्ण होवे वहां तक इस को वांचनादि की सहायता करो, तो सहायता करे, कितनेक अनुग्रहारी है परंतु दुःकल्पास्थित है अर्थात् जिन की समाचारी शुद्ध नहीं है उन के लिये भी गुरु आज्ञा दे तो वांचनादि की सहायता करें, और जो अणुपरिहारीक हाने

ठवणिज्जं ठवइत्ता करणिज्जं वेयावडियं ठाते तवि परिसेविता सेविकासिणे तथेव आरूहियव्वेसीया-पुव्वं परिसेविच्चं पुव्वं आलोइयं; पुव्वं परिसेवितं पच्छा आलोइयं, पच्छा पडिसेवियं पुव्वं आलोइयं, पच्छा पडिसेवियं पच्छा आलोइयं ॥ अपलिओ-

आये हों अर्थात् जिन का प्रायःश्चित्त समाप्त होने आया हो उन को वैयावृत्त करने स्थापन करे. और जो किसीने गुप्त (कोई भी न जाने इस प्रकार) दोष सेवन किया हो उस का दोष संघ सन्मुख प्रगट करे तो उतना ही प्रायःश्चित्त उस दोष प्रगट करता को आता है. बत्तीस बोल संग्रह की साक्षी से कदाचित् प्रायःश्चित्त तप में स्थापन किये बाद फिर प्रायःश्चित्त का स्थानक सेवन करलेवे तो जिस प्रकार का प्रायःश्चित्त का स्थानक सेवन किया हो उस प्रायःश्चित्त भी पहिले के प्रायःश्चित्त में वृद्धि करना ॥ अब आलोचना करने के चार भांगे-१ बहुत से दोष सेवन किये हैं. जिस में से १ पहिले दोष सेवन किया हो जिस की पहिले ही आलोचना करे २ पहिला दोष सेवन किया जिस की पीछे से आलोचना करे, ३ पीछे दोष सेवन किया जिस की प्रथम आलोचना करे, और ४ पीछे दोष सेवन किया जिस की पीछे आलोचना करे. और भी दोष आलोचना के चार भांगे-१ कपट रहित दोष का सेवन किया और कपट रहित हो उस की आलोचना करे, २ कपट रहित दोष सेवन किया परंतु आलोचना करती वक्त कपट करे, ३ दोष सेवन करती वक्त तो कपट किया, परंतु

सूत्र

चियं अपलोचिए, अपलोचिए पलोचियं, पलिओचिए अपलिओचियं, पलिओचिए पलिओचियं ॥ आलोएमाणस्स सव्वमयं सकयं साहणियं ॥ १५ ॥ जे भिक्खू बहु सोवि चाउमासियंवा पंचमासियंवा एवं जाव एयाए पट्ठवणाए पट्ठविए णिव्विसमाणा पडिसेवेत्ति सेवि कसिणे तत्थेव आरूहियव्वेसिया॥१६॥जे भिक्खू बहुसोवि चाउमासि-

अर्थ

आलोचना कपट रहित शरलता से करे. और ४ दोष भी कपट सहित सेवन किया और आलोचना भी कपट सहित करे॥ कितनेक इन चारों भांगे का इस प्रकार भी अर्थ करते हैं कि-१ आलोचना करते पहिले चितवे की निष्कपट आलोचना करूंगा और निष्कपट ही आलोचना करे, २ आलोचना करते पहिले तो दो गुप्त रखने की चितवना करे परंतु आलोचना करती वक्त शरल बन जावे, ३ आलोचना करते पहिले शरल होवे और करती वक्त कपट करे और ४ प्रथम भी कपट भाव होवे आलोचना करती वक्त भी कपटाचरन करे. इन कर्मों को आचार्य विचक्षणता से जान जावे और वह जिस प्रायश्चित्त के योग्य जाना जावे वैसा ही सब प्रायश्चित्त एकत्र कर उसे देवे. परंतु, सब के लिये एकसा प्रायश्चित्त नहीं है॥१५॥ इसे ही मुखवचन से कहते हैं. जो साधु बहुत वक्त चतुर्मासिक यों यावत् पूर्वोक्त बहुत वक्त छमासिक प्रायश्चित्त के तप में स्थापन किया हुवा परिहारिक बनाहुवा तप करता हुवा पुनः दूसरा कोइ बहुत चौमासिकादि दोष स्थान सेवन करे उस को पुनः प्रायश्चित्त दे पहिले के तप में वृद्धि करना. पुनःपरिहार तप में प्रवेशपनक

यंवा सातिरेग चाउम्मासियंवा पंचमासियंवा सातिरेग पंचमासियंवा एएसिं परिहार ठाणाणं अण्णयरं परिहारठाणं पडिसेवित्ता आलोएज्जा पलिउंचियं आलोएमाणस्स ठवणिज्जं ठवइत्ता करणिज्जं वेयावडियं ठवितेवि परिसेवित्ता सेविकसिणे तत्थेव आरुहियव्वेसिया पुव्वंपरिसेवियं पुव्वंआलोइयं, पुव्वंपरिसेवियं पच्छाआलोइयं, पच्छा परिसेवियं पुव्वं आलोइयं, पच्छा परिसेवियं पच्छा आलोइयं ॥ अपलिउंचिए

॥ १६ ॥ जो कोई साधु चौमासिक या कुछ अधिक चौमासिक, पांच मासिक या कुछ अधिक पंच मासिक इन प्रायश्चित्त के स्थानक में से किसी भी प्रायश्चित्त का स्थानक सेवन कर आलोचना करता जो कपट सहित आलोचना करे तो उसे परिहार तप में स्थापन करे, स्थापन करके कितनेक को वैयावच में यथायोग्य स्थापन करे, कदाचित् वह परिहारिक तप करते हुवे अन्य प्रायश्चित्त का स्थानक सेवन करतो उसे पुनः परिहार तप में आरोपन करे, इस का विशेष कहते हैं, चार प्रकार से वह आलोचना करे, अनेक प्रायश्चित्त का स्थानक सेवन कर उस में के कितनेक प्रायश्चित्त के स्थानक १ कितनेक पहिले सेवन किये की पहिले आलोचना करे, २ कितनेक पहिले सेवन किये उन की फिर आलोचना करे, ३ कितनेक पीछे सेवन किये उन की पहले आलोचना करे, और ४ कितनेक पीछे सेवन किये उन की पीछे आलोचना करे ॥ चार प्रकार आलोचना करे-१ प्रथम विचार की सरलपने आलोचना करूंगा ॥ और फिर सरलपने ही आलोचना करे, २

सूत्र

अपलीओचियं, अपलिओचिए पलिओचियं, पलिओचिए अपलिओचियं; पलिओचिए पलिओचियं ॥ आलोएमाणस्स सव्वमेयं सकयं साहणियं जे एवं बहु सोवि ॥ एयाए पट्ठवणाए पट्ठविए णिविसमाणे परिसेवेवि सेवि कसिणे तत्थेव आरुहियव्वेसिया ॥ १७ ॥ जे भिक्खू बहुसोवि चाउमासियंवा, सातिरेग चाउमासियंवा, पंचमासियंवा, सातिरेग पंचमासियंवा, एएसिं परिहारठाणाणं अण्णयरं परिहारठाणं पाडिसेवित्ता

अर्थ

प्रथम विचारे की शरलपने आलोचना करूंगा और फिर कपटपने आलोचना करे. ३ प्रथम विचारे की कपट से आलोचना करूंगा और फिर शरलता से आलोचना करे और ४ प्रथम विचारे की कपट सहित आलोचना करूंगा और फिर कपट सहित ही आलोचना करे ॥ इस प्रकार आलोचना करता हुवा सर्व प्रकार के किये हुवे दोषों को एकत्र करके सर्व का प्रायःश्चित्त साथ ही देवे. ऐसे ही बहुत वक्त दोष स्थान सेवन करने का भी बहुत मासिक प्रायःश्चित्त में स्थापन किया हुवा. प्रायःश्चित्त का तप पूर्ण कर निकलते थोडासा तप बाकी रहते पुनः कोई दोष स्थान सेवन करलेवे, तो फिर उसे उस दोष का जो प्रायःश्चित्त होवे उस की आरोपना कर उस में स्थापन करे ॥ १७ ॥ अब कुछ अधिक दोष लगावे जिस आश्रिय कहते हैं. जो कोई साधु बहुत वक्त दोष स्थान सेवन करे बहुत

सूत्र

आलोएज्जा अपलिओचियं आलोएमाणस्स ठविणिज्जं ठवेइत्ता करणिज्जं वेयावडियं ठवितेवि, परिसेवित्ता सेवि कसिणे ॥ तत्थेव आरुहियव्वेसिया, पुव्वं परिसेविचं, पुव्वं आलोईयं, पच्छा परिसेविच्चं पच्छा आलोइयं, पच्छा परिसेविच्चं पुव्वं आलोइयं पच्छा पडिसेवियं पच्छा आलोइयं ॥ अपलिओचिए अपलिओचियं, अपलिओचिए पलिओचियं, पलिओचिए अपलिओचियं. पलिओचिए पलिओचियं ॥ आलोएमाणस्स

अर्थ

चौमासिक प्रायःश्चित्त अथवा चौमासिक से कुछ अधिक प्रायःश्चित्त, बहुत पांच मासिक प्रायःश्चित्त बहुत पंचमासिक से अधिक प्रायःश्चित्त इन परिहार स्थानक में से अन्य कोई परिहार स्थानक सेवन करके आलोचना करता जो कपट रहित आलोचना करे तो उसे परिहार तप में स्थापन करे, कितनेक को उन को वैयावच करने में स्थापन करे. अब कदाचित् परिहारिक तप करता हुवा कोई दोषस्थान सेवन करे तो जिस प्रायःश्चित्त के जो दोष लगाया वही प्रायःश्चित्त संपूर्ण देवे, उस में आरोपन करे. इस का विशेष-बहुत दोषों में से-प्रथम सेवन किया प्रथम ही आलोचना करे, २ प्रथम सेवन किया पीछे आलोचना करे, ३ पीछे सेवन किया प्रथम आलोचना करे और ४ पीछे सेवन किया पीछे आलोचना करे. और भी—१ निष्कपट आलोचना करूंगा और निष्कपट आलोचना करे, २ निष्कपट आलोचना करूंगा

८

सूत्र

सव्वमेयं सकयं साहणियं जे एवं बहुसोवि एयाइं पंचट्ठवणाए पट्ठविए णिव्विसमाणे परिसेविवि सेवि कासिणे, तत्थेव आरुहियव्वेसिया ॥ १८ ॥ जे भिक्खू बहुसोवि चाउमासियंवा सातिरेगं चाउमासियंवा, पचमासियंवा सातिरेगं पंचमासियंवा, एएसिं परिहारठाणाणं अण्णयरं परिहारठाणं पडिसेवित्ता आलोएज्जा पलिअंचियं आलोएमाणस्स ठवणिज्जं ठवेइत्ता कराणिज्जं वेयावडियं ठावितेति परिसेवित्ता सेविकसिणे

अर्थ

और कपट सहित आलोचना करे, ३ कपट सहित आलोचना करूंगा और निष्कपट आलोचना करे, और ४ कपट सहित आलोचना करूंगा और कपट सहित ही आलोचना करे. इस प्रकार आलोचना करता हुवा को सब पाप एकत्र कर प्रायश्चित्त एक ही साथ देवे ॥ १८ ॥ यह कथन बहुत वक्त दोषस्थान सेवन कर उन की अपेक्षा से कहना. प्रायश्चित्त के तप करने को स्थापन किया वह परिहारिक साधु थोडासा प्रायश्चित्त बाकी रहे उस वक्त दूसरा दोष लगालेवे, उस आश्रिय कहते हैं—जो साधु बहुत वक्त चौमासिक कुछ अधिक चौमासिक पांच मासिक कुछ अधिक पांच मासिक, इन प्रायश्चित्त के स्थानक में से अन्य कोई भी प्रायश्चित्त का स्थानक सेवन कर आलोचना करता हुवा जो कपट सहित आलोचना करे तो उस को उस के योग्य प्रायश्चित्त देवे. कितनेक को वैयावच करने स्थापन करे. अथ उसे प्रायश्चित्त में स्थापन किया है वह तप का वाहन करता हुवा अन्य किसी दोष का स्थान सेवन

सूत्र

तत्थेव आरुहियव्वे सिया पुव्वंपरिसेविचं पुव्वं आलोइयं, जाव पच्छापडिसेविचं पच्छा आलोइयं ॥ अपलिओंचिए अपलिओंचियं. अपलिओंचिए पलिओंचियं पलिओंचिए, अपलिओंचिए, पलिओंचियं पलिओंचियं ॥ आलोएमाणस्स सव्वमेयं सकयं साहणियं. जे एयं बहुसोवि एयाइं पट्ठवणाए पट्ठविए णिव्विसमाणे पडिसेवेत्ति, सेविकसिणे, तत्थेव आरुहियव्वे सिया ॥ १९ ॥ बहवे परिहारिया बहवे अपरिहारिया इच्छेज्जा

अर्थ

करे, तो संपूर्णपने पीछा उस ही परिहारिक तप में उसे आरोपन करना. उस का विशेष बहुत दोषों लगाये उस में से जो दोष प्रथम लगाये उस की प्रथम आलोचना करे, २ प्रथम दोष लगाये उस की पीछे आलोचना करे, ३ पीछे दोष लगाये उस की पहिले आलोचना करे, और ४ पीछे दोष लगाया उस की पीछे आलोचना करे ॥ तथा प्रथम सरलता से आलोचना करने का विचार करे और सरलतासे आलोचना करे, २ सरलता से आलोचना का विचार करे और कपट से आलोचना करे, ३ कपट से आलोचना का विचार करे और सरलता से आलोचना करे कपट से आलोचना करने का विचार किया और कपट से आलोचना करे ॥ इस प्रकार आलोचना करता हुवा. सब पाप एकत्र करके एक साथ ही सब प्रायश्चित्त देवे ॥ ऐसे ही बहुत वक्त का भी कहना. ॥ इस प्रकार प्रायश्चित्त में स्थापन किया हुवा प्रायश्चित्त की समाप्ती कर निकलता हुवा पुनः कोइ दूसरा प्रायश्चित्त का स्थानक सेवन करवे. तो फिर उसे संपूर्ण पने उस ही प्रायश्चित्त का आरोपन करे ॥ १९ ॥ अब आहा

मूत्र

एगयओ अभिन्निसिज्जंवा अभिनिसिहियंवा चेचित्तए, णोकप्पंति थेरे अणापुच्छित्ता एगयओ अभिन्निसिज्जंवा अभिनिसिहियंवा चेतित्तए ॥ कप्पंतिणं थेरे आपुच्छित्ता एगयओ अभिन्निसिज्जंवा अभिणिसिहियंवा चेतित्तए ॥ थेरेय से-वियरेज्जा एवंणोकप्पंति एगयओ अभिन्निसिज्जंवा अभिनिसीहियंवा चेइत्तए ॥ थेराणं नो वियरेज्जा एवण्णं नोकप्पति एगयओ अभिन्निसिज्जावा अभिनिसिहियंवा चेतित्तए॥ जेण थेरोहिं अवदिण्णे एगयओ अभिन्निसिज्जंवा अभिनिसिहियंवा चेइए तिसे सेसं-

अर्थ

विधि का अधिकार कहते हैं बहुत से परिहारिक अर्थात् प्रायश्चित्त सहित और बहुत से अपरिहारिक प्रायश्चित्त रहित वे साधु इच्छा करे कि अपन परस्पर किसी-प्रकार की भिन्नता रहित एक स्थान रहें एक स्थान बैठें; तो उन को उक्त कार्य स्थविर ÷ साधुको विना पूछे करना कल्पता नहीं है परंतु स्थविर को पूछे और वे कहे कि यथेच्छा विचरो तो एक स्थान रहना एक स्थान बैठना कल्पता है और जो स्थविर कहे कि मत विचरो तो एक स्थान भिन्नता रहित बैठना चिंतवना करता यान विचार करना कल्पता नहीं है, जो कोई स्थविर की आज्ञा का उल्लंघन कर उन के साथ एक स्थान रहे, बैठे चिन्तवन करे तो उस को उतने ही दिन का

÷ जघन्य तीन वर्ष मध्यम पांच वर्ष और उत्कृष्ट २० वर्ष के दिक्षित को स्थविर जिने जाते हैं।

मूल

तराच्छेदेवा परिहारेवा ॥ २० ॥ परिहार कप्पाट्ठिए भिक्खू बहिया थेराणं वेयावडियाए गच्छेज्जा, थेरायसे णो सरेज्जा कप्पतिसे णिव्विसमाणस्स एगरातियाए पडिमाए जण्णं दिसिं जण्णं अण्णेसाहम्मिया विहराति तेणं २ दिसिं उवणिचए, णो से कप्पति तत्थ विहारवत्तियं वत्थए कप्पंति से तत्थ कारणवत्तियं वत्थए तंसिचणं कारणंसि णिट्ठियासि परोवदेज्जा वासाहि अज्जो! एगरायंवा, दुरायंवा एवं से कप्पंति एगरायंवा दुरायंवा वत्थए, नो से कप्पंति

अर्थ

दीक्षा का छेद का प्रायश्चित्त देवे अर्थात् उतने दिन उस के दीक्षा में दिन कमी करे ॥ २० ॥ अब परिहारिक तप मध्य में छोडने का कारण बताते हैं. कोई आचार्य बाहिर ग्रामादि में विहार करते हैं. उन के साथ परिहारिक करता स्थितिवाला साधू भी है. उस वक्त किसी स्थान कोई स्थविर व्याधी आदि कर अशक्त हुवे हैं उन के वैयावच में साधु ओ की आवश्यकता है, तब आचार्य अन्य साधुओं को भेजने का अवसर नहीं होने जैसा जान उस परिहारिक तपवंत साधु को कहे कि तुम यह परिहारिक तप को छोडकर स्थविर की वैयावच करने जावो, तब वह परिहारिक तपवाला साधु जो शक्ति होतो परिहारिक तप करता हुआ जावे और जो शक्ति न होतो परिहारिक तप को छोड कर के जावे. किन्तु जाता हुआ अभिग्रह तो जरूर धारन करे कि मुझे रास्ते में एक रात्रि उपरान्त किसी स्थान में रहना नहीं क्योंकि रास्ते में गोकुलादि वस्ति में प्रचुर गौरसादि की प्राप्ति देख लुब्ध हो रहजावे तो प्रतिबंध होवे. इस लिये उक्त प्रतिज्ञा जरूर

सूत्र

एगरायाओवा दुरायाओवा परं वत्थए, जं तत्थ एगरायं दुरायंवा परंवसइ सेसंतराछेदेवा परिहारेवा ॥ २१ ॥ परिहार कप्पठिए भिक्खू बहिया थेराणं वेयावडियाए गच्छेज्जा थेरायसे णो सरेज्जावा कप्पंतिसे णिव्विसमाणस्स, एगराइयाए पडिमाए, जण्णं २ दिसिं अन्ने साहम्मीया विहरेति तण्णं २ दिसिं उवलित्तए, नो से कप्पंति तत्थविहार वत्तियं वत्थए, कप्पंतिसे तत्थ कारण वत्तियं वत्थए, तंसिचणं कारणंसि णिट्ठियंसि

अर्थ

परिहार कल्प स्थिति साधु को बाहिर स्थविर की वैयावच करने को भेजते हुवे. आचार्य ज्ञान ध्यान प्रश्नोत्तर में लगे उस को तप छोडकर जाने का कहना भूलगये. जो उस परिहारिक को अपने परिहारिक तपको करतेहुवे ही रास्तेमें एकरात्रिसे ज्यादा नरहूंगा ऐसा अभिग्रह ग्रहण करके जिसरदिशामें अन्य-दूसरे धारन करे फिर जिस २ दिशा में अन्य अपने स्वधर्मिक साधु विचर ते हो उस २ दिशा को अंगीकार कर के जावे, उन स्थविर की वैयावच्च करे. परन्तु वहां मनोज्ञ वस्त्र पात्र स्थान आहार आदि उपधी देख कर अधिक रहना कल्पता नहीं है. जोकोइ रोगादि कारण हो जावे तो तहां रहे, वह करण पूरण होवे और वे स्थविरादि कोइ साधु कहैं कि अहो आर्य ! यहां एक रात्रि दोरात्रि रहो तो एक रात्रि दोरात्रि वहां रहना उसे कल्पे, किन्तु एकरात्रि दोरात्रि से अधिक वहां रहना नहीं कल्पता हैं. जो वहां एक-रात्रि दोरात्रि उपरांत रहेतो जितने काल वहां रहे उतने ही दिन का उस को दिक्षाका छेदका तथा तपका प्रायःश्चित्त आवे॥२१॥

सूत्र

परोवदेज्जा वासाहिअज्जो ! एगरायंवा दुरायंवा एवं से कप्पंति एगरायंवा दुरायंवा वत्थए, नो से कप्पंति एगरायाओवा दुरायाओवा परंवत्थए, जं तत्थ एगरायंवा दुरायंवा परंवसइ, सेसं तराछेदेवा परिहारेवा ॥ २२ ॥ परिहार कप्पट्ठिए भिक्खू बहिया थेराणं वेयावडियाए गच्छेज्जा,थेरायसे सरेज्जावा णो सरेज्जावा कप्पतिसि णिव्विसमाणस्स एगरातियाए पडिमाए, जण्णं २ दिसिं अण्णे साहम्मिया विहरंति तण्णं २ दिसिं उवलित्तए, णो से कप्पति तत्थ विहार वत्तिय वत्थए, कप्पतिसे,

अर्थ

अपने स्वधार्मिक विचरते हों वहां जाना वैयावच करना उनके पास रहना कल्पता है. परंतु वहां मनोज्ञ आहार स्थान वस्त्रादि देख उस में लुब्ध होकर विशेष रहना नहीं कल्पता है; जो रोगादि कारण होजाय तो विशेष रहे. फिर उन स्थविरको जानेका पूछे वे स्थविरादि कहेकि अहो आर्य! यहां एक दो रात्रि रहो तो वहां एक दो रात्रि रहना कल्पे, परंतु एक दो रात्रि से अधिक रहना नहीं कल्पे, जो वहां एक दो रात्री से अधिक रहे तो जितने दिन वहां रहे उतने दिनकी दीक्षाका छेद व तपका प्रायश्चित आवे॥२२॥ परिहारिक तप में जो साधु रहता है. अर्थात् परिहारिक तप करता है उसे बाहिर रहे स्थविर की वैयावच करने भेजनेके वास्ते आचार्यका विचार हुवा कि इसे परिहारिक तप छोडा कर वहां भेजूं. परंतु भेजती वक्त परिहारिक तप छोडने का कहना भूलगये. तो उस परिहारिक तप धारी साधु को परिहारिक तप करते हुवे ही वहां स्थविर की

सूत्र

तत्थ कारण वत्तियं वत्थए, तंसिचणं कारणंसि णिट्ठियंसि परोवएज्जा, वसाहिअज्जो ? एगरायंवा दुरायायंवा एवं से कप्पति एगरायंवा दुरायंवा वत्थए नो से कप्पति परं वत्थए जं तत्थ एगरायंवा दुरायंवा परंवसइ सेसं तराच्छेदेवा परिहारेवा ॥ २३ ॥ जे भिक्खुय गणओ अवकम्म एकलविहार पडिमं उवसंपाजत्ताणं विहरिज्जा, सेय नो संथरेज्जा सेय इच्छेज्जा दोच्चंपि तमेवगणं उवसंपाजित्ताणं विहरित्तए, पुणो आलोएज्जा पुणो पडिकमेज्जा पुणो छेय परिहारस्स

अर्थ

वैयावच में जाना कल्पता है. उक्त प्रकारकी अभिग्रह धारन करे कि मैं विना कारन एकरात्रि उपरांत रास्ते में नहीं रहुंगा. ऐसा अभिग्रह ग्रहणकर जिस २ दिशामें अन्य साधर्मिक स्थविरादि विचरते हों उस २ दिशा में उन के पास जावे. कार्य हुए बाद वहां रहना नहीं कल्पता है. परंतु रोगादि कारण हो तो रहना कल्पता है. उस कारन से निवृतन हुवे बाद स्थविरादी कहे कि हे आर्य ! एक दो रात्रि और भी रहो तो रहना कल्पता है परंतू एक दो रात्रि से अधिक रहे उतनी ही रात्रि का दीक्षा का छेद व तप का प्रायश्चित्त आवे ॥२३॥ अब एक लविहारी साधु आश्रिय कहते हैं. कोइ साधु (पूर्वादि ज्ञानका धारक व जाति संपन्नादि आठ गुन युक्त) ऐसा विचार करे कि मैं अकेलाही रहुंगा, इस प्रकारकी प्रतिमा अभिग्रह धारनकर विचरनेलगे. वह साधुको अकेलेरह परंतु शुद्धाचार न पालसे इत्यादि कारनसे वह साधु पीछा, दूसरीवक्त उस ही गणको अंगीकार करने की इच्छाकरे. उस को किसप्रकार

सूत्र

उवट्ठावेज्जा ॥ २४ ॥ भिक्खूगणावच्छेइए गणाओ अवकमं एकलविहारपडिमं उवसंपजित्ताणं विहरेज्जा सेय नो संथरेज्जा सेय इच्छेज्जा दोच्चंपि तमेवगणं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए, पुणो आलोएज्जा, पुणो पडिक्कमेज्जा पुणोच्छेय परिहारस्स उवट्ठावेज्जा ॥ २५ ॥ एवं आयरिए उवज्झाए गणाओ अवकम्मं एकलविहार पडिमं उवसंपजित्ताणं विहरंति जाव पुणो आलोएज्जा पुणो पडिक्कम्मेज्जा पुणो छेय परिहारस्स उवट्ठवेज्जा ॥ २६ ॥ भिक्खूयगणाओ अवकमं पासत्थविहारं विहरेज्जा सेय इच्छेज्जा

अर्थ

ग्रहण करना ? तो कि उस से दूसरी वक्त आलोचना करावे, दूसरी वक्त प्रतिक्रमण करावे, प्रथम की दीक्षा का छेदन कर दूसरी वक्त दीक्षा देवे पीछा संयम में उपस्थापे ॥ २४ ॥ अब गणवच्छेदक आश्रिय कहते हैं. जो साधु गणवछेदक (उक्त गुण युक्त) हो वह गणको छोडकर एकल विहार प्रतिमा अंगीकार कर विचरे, परंतु शुद्ध संयम न पलने आदि कारण से पीछा दूसरी वक्त गणको अंगीकार कर विचरने की इच्छा करे तो उनको भी पीछी आलोचना करावे प्रतिक्रमण करावे पुनःछेद देवे परिहारादि तप करावे संयम में उपस्थापे ॥ २५ ॥ इस ही प्रकार आचार्य उपाध्याय गच्छ का अवक्रमण कर एकल विहार प्रतिमा अंगीकार करे विचरे तो उन को भी आलोचना प्रतिक्रमण छेद परिहार तप करा के उपस्थाने ॥ २६ ॥ अब पासत्था (शिथलाचारी) का कहते हैं—जो कोइ

सूत्र

दोच्चंपि तमेवगणं उवसंपज्जित्ताणं विहारित्तए अत्थिया इत्थसेसे पुणो आलोएज्जा पुणोपडिकम्मेज्जा पुणोच्छेय परिहारस्स उवट्ठाएज्जा ॥ २७ ॥ एवं आहाच्छंदो ॥२८॥ कुसीलो ॥ २९ ॥ उसणो ॥ ३० ॥ संसत्तो ॥ ३१ ॥ भिक्खूयगणाओ अवक्कम परपासंड पडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरेज्जा सेय इच्छेज्जा दोच्चंपि समेवमणं उवसं-

अर्थ

साधु गण-सम्प्रदाय की रीति को छोडकर-पासत्थापना अंगीकार करे. वह पीछा भाव का पलटा होने से दूसरी वक्त पीछा उस ही गण को अंगीकार करना वांछे तो उस के पास पीछी शेष चारित्र की आलोचना प्रतिक्रमण करावे. पीछे दीक्षा का छेद करे इस प्रकार पीछा गच्छ में स्थापन करे ॥ २७ ॥ जिस प्रकार पासत्थाका कहा उस ही प्रकार अपच्छंदा का भी कहना ॥ २८ ॥ उस ही प्रकार कुसीलीया का भी कहना ॥ २९ ॥ उस ही प्रकार ऊष्णा का भी कहना ॥ ३० ॥ उस ही प्रकार संस्या का भी कहना ॥ ३१ ॥ अब परमत परिचय का कहते हैं—जो साधु सम्प्रदाय का त्याग कर पर (अन्य) धर्मिक पाखंडीयोंकी सम्प्रदाय अंगीकारकर विचरे और फिर परिणाम पलटने(कारण निवृतने) से पीछी दूसरीवक्त उसही सम्प्रदाय को अंगीकार कर विचरने की इच्छाकरे तो वह किसी प्रकार छेद प्रायश्चित्त के कि तप प्रायश्चितके योग्य नहीं है. फक्त एक आलोचना करना योग्य है[कारण-कोई साधु राजादि का उपद्रव देख कर अपना संघ न मिले वहां तक कालक्षेपन करने के वास्ते तापसादि का लिंग धारन करे, परंतु साधु की

सूत्र

पज्जित्ताणं विहरित्तए णत्थिणं तस्स तप्पत्तियं केइ छेदेवा परिहारेवा णणत्थ एगाए आलोयणाए ॥ ३२ ॥ भिक्खूय गणाओ अवक्कम उधाविज्जा सेय इच्छेज्जा दोच्चंपि तमेवगणं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए, णत्थिणं तस्स तप्पत्तियं केई छेदेवा परिहारेवा णण्णत्थ एगाए सेहोवट्ठावणाए ॥ ३३ ॥ भिक्खूय अण्णयरं अकिच्चठाणं पडिसेवित्ता इच्छेज्जा आलोइत्तए जत्थेव अप्पणो आयरिय उवज्झाए पासेज्जा कप्पति से तस्संतिए

अर्थ

किया शुद्ध पाले. फिर आचार्यादि का योग मिलने से उस प्रकार आलोचना कर भेष बदल पीछा उन के सामिल होजावे. यह भगवती के पचीसवे शतक में नीयंठे के कथनानुसार तथा ठाणांग की चौभंगी के अनुसार, तथा इस ही व्यवहार सूत्र के दशवें उद्देशे के अनुसार जानना ॥ ३२ ॥ अब व्रतभंग आश्रिय कहते हैं—जो साधु गण-सम्प्रदाय को छोडकर व्रतों का भंग कर गृहस्थावास स्वीकार करे, वह फिर परिणामों की धारा पलटने से पीछा दूसरी वक्त गण को अंगीकार कर विचरने की इच्छा करे तो वह न तो छेद के योग्य है न किसी परिहारिक तप के योग्य है परंतु पीछा उस को शिष्यबनाना शिष्यपने स्थापन करना अर्थात् पीछी दीक्षा देना योग्य है ॥ ३३ ॥ अब आलोचना किस के सन्मुख करना वह कहते हैं. जो कोई साधु अन्य किसी भी प्रकार का दोष का स्थानक सेवन करके उस की आलोचना करने की अभिलाषा करे तो जिस स्थान अपने आचार्य उपाध्याय हो वहां आवे उन के पास

सूत्र

आलोइत्तएवा पडिकमित्तएवा विओट्टित्तएवा, विसोहित्तएवा अकरणाए अब्भुट्ठित्तएवा आहारिहं तवोकम्म पायच्छित्तं पडिवज्जित्तएवा ॥ ३४ ॥ णो चेवणं अप्पणो आयरिय उवज्झाए पासेज्जा जत्थेव संभोइयं, साहम्मियं बहुस्सुयं वज्झागमं पासेज्जा कप्पतिसे तस्संतिएवा आलोइत्तएवा पडिकमित्तएवा विउट्टित्तएवा विसोहित्तएवा अकरणाए अब्भुट्ठित्तएवा आहारिहं तवोकम्मं पायच्छित्तं पडिवज्जित्तएवा ॥ ३५ ॥ णो चेवणं संभोइयं साहम्मियं बहुस्सुयं वज्झागमं पासेज्जा ॥ जत्थेव अण्णं संभोइयं साहम्मियं बहुस्सुयं वज्झागमं पासेज्जा कप्पति से तस्संतिए

अर्थ

आलोचना प्रतिक्रमण कर उस पाप से निवृत्त प्रायश्चित्त ले विशुद्ध होना, उस कल्पता है, पीछे यह दोष नलगावूंगा इस प्रकार सावधान होवे. जो वे दोषानुसार प्रायश्चित्त देवे उस को अंगीकार करे ॥ ३४ ॥ जो कदाचित् अपने आचार्य उपाध्याय देखने में नहीं आवे जहाँ अपने संभोगी [एक ही मंडले पर आहार भोगवने वाले] साधु, विद्यागमी [आचारांग दि. सूत्र कर हुए प्रायश्चित्त विधी के ज्ञान] साधु होवे वहां जावे, उस को उन के पास आलोचना कर प्रतिक्रमण कर दोष से निवृत्त कर विशुद्ध त्रिशल्य रहित होकर आगे यह दोष न लगावूंगा इस प्रकार सावधान होकर यथा उचित तप कर्म रूप प्रायश्चित अंगीकार कर रहना कल्पता है ॥ ३५ ॥ कदाचित् संभोगी स्वधर्मी बहुसूत्री विद्यागमी न देखने में न आवे तो जिसस्थान अन्य संभोगीक दूसरी सम्प्रदाय में साधु बहुसूत्री विद्यागमी

सूत्र

आलोइत्तएवा पडिक्कमित्तएवा जाव पायच्छित्तं पडिवज्जित्तएवा ॥ ३६ ॥ णो चेवणं अण्णं संभोतियं साहम्मियं बहुसुयं वज्झागमं पासेज्जा, जत्थेव सारूवियं बहुस्सुयं वज्झागमं पासेज्जा, कप्पतिसे तस्संतिए आलोइत्तएवा पडिक्कमित्तएवा विउट्टित्तएवा विसोहित्तएवा-अकरणाए अब्भुट्ठित्तएवा आहारिहं तवोकम्मं पायच्छित्तं पडिवज्जित्तएवा ॥ ३७ ॥ णो चेवणं सारूवियं बहुस्सुयं वज्झागमं पासेज्जा, जत्थेव समणोवासगं पच्छाकडं वज्झागमं बहुस्सुयं पासेज्जा, कप्पति से तस्संतिए आलोइत्तएवा पडिक्क-

अर्थ

देखने में आवे. तो उन के पास आलोचना प्रतिक्रमण कर यावत् प्रायश्चित्त अंगीकार कर रहना कल्पता है ॥ ३६ ॥ कदाचित् अन्य सम्प्रदाय के संभोगिक स्वधर्मिक बहुसूत्री विद्यागमी साधु नहीं देखने में आवे तो जहां स्वरूपी-साधुका स्वरूपधारक [सदोषी] बहुसूत्री विद्यागमी स पुछोवे उनके पास आलोचना प्रतिक्रमण कर दोष से निवृत्त विशुद्ध हो आगे दोष न लगावूंगा इस प्रकार सावधान हो यथा उचित तप कर्म प्रायश्चित्त अंगीकार कर रहना कल्पता है ॥ ३७ ॥ कदाचित् स्वरूपी बहुसूत्री विद्यागमी देखने में नहीं आवे तो जहां श्रमणोपासक (श्रावक) पश्चात कृत्य अर्थात् प्रथम संयम पालकर पडवाइ होकर श्रावक बना हो वह विद्यागमी-प्रायश्चित्त विधी का जान बहुसूत्री हो उस के पास आलोचना प्रति

मित्तएवा जाव पायच्छित्तं पडिवज्जित्तएवा ॥ ३८ ॥ णो चेवणं समणोवासगं पच्छाकडं बहुसुयं वज्झागमं पासेज्जा जत्थेव समभावियाइं चेइयाइं पासेज्जा कप्पति से तरसंतिए आलोइत्तएवा पडिक्कमित्तएवा जाव आहारिहं तवो कम्मं पायच्छितं पडिवज्जित्तएवा ॥ ३९ ॥ णो चेवणं समभावियाइं चेइयाइं पासेज्जा बहियागामस्सवा जाव सन्निवेसस्सवा, पाइणाभिमुहेवा उदीणाभि-

क्रमण कर यावत् प्रायश्चित अंगीकार करे ॥ ३८ ॥ कदाचित् संयम से पड़वाइ हो श्रावक वा ऐसा पश्चात कृत्य श्रावक बहुसूत्री विद्यागमी दखने में न आवे तो जिस स्थान समभाव वाला चैतिक ज्ञानी सम्यक् दृष्टि गृहस्थ अथवा देवता हो उसके पास आलोचना प्रतिक्रमण कर यावत् यथा उचित तप कर्म प्रायश्चित्त अंगीकार करना. + ॥३९॥ कदाचित्त समभाविक चैत्य भी न देखने में आवे तो ग्राम के यावत् संनिवेश के बाहिर जाकर पूर्वादिशा की सन्मुख तथा उत्तरदिशा के

+ तप संयम पाल कर देवता हुवा होतो वह पूर्व प्रश्चित-ज्ञान कर प्रायश्चित्त विधी से प्रायश्चित्त देसकता है. ऐसे ही संयम का भृष्ट हो परंतु श्रधा का भृष्ट नहो ऐसा समभाविक सम्यक् दृष्टि ज्ञानी गृहस्थ भी प्रायश्चित्त देसकता है. दो प्रतों में दोनो अर्थ लिखे हैं.

मुहेवा करयलपरिग्गाहियं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिकट्टु, कप्पतिसे एवं वइत्तए एवं इयामे अवराहा, एवं भिक्खूत्ताय अहं अवरद्धो अरहंताण सिद्धाणं अंतिए आलोएज्जा पडिक्कमेज्जा निंदज्जा गरहिज्जा विउट्टिज्जा, विसोहिज्जा अकरणाए अब्भूट्ठिज्जा, अहारिहं तवोकम्मं पायच्छित्तं पडिवज्जिज्जासि ॥ ३९ ॥ त्तिबेमि ॥

विवहार सुयस्स पढमो उद्देशो सम्मत्तं ॥ १ ॥ * * * *

अर्थ—सन्मुख खडा रहकर दोनों हाथ जोड ऐसा कहना कि इस प्रकार मैने अपराध किया है यों अपना किया दोष तीन वक्त कहे अर्हन्त सिद्ध भगवंत के पास आलोचना प्रतिक्रमना करे अपनी धारना प्रमाने प्रायश्चित्त अंगीकार करे [आलोचना की इतनी दुष्प्राप्ति का कारन यह है कि कितनेक दोष ऐसे अवर होते हैं कि योग्य के पास ही प्रकाशे जाते है और जान होवे सोही शुद्ध करसकता है, विना आलोचना किये विना प्रायश्चित्त लिये जो आयुष्य पूर्ण करतो विराधिक होजाता है, इसलिये आलोचना जरूर करना चाहिये] ॥ ३९ ॥ इति व्यवहार सूत्र का प्रथम उद्देशा समाप्तम् ॥ १ ॥ (:) (:) (:) (:)

॥ द्वितीय उद्देशा ॥

सूत्र

दोसाहम्मियाओ एगयओ विहरंति एगे तत्थ अण्णयरं अकिच्चठाणं पडिसेवित्ता आलोएज्जा, ठवणिज्जं च ठवइत्ता करणिज्जं वेयावडियं ॥ १ ॥ दोसाहम्मिया एगयओ विहरंति दोवित्ते अण्णयरं अकिच्चट्ठाणं पडिसेवित्ता, आलोइज्जा एगं तत्थं कप्पगं ठावइत्ता एगेणिव्विसेज्जा अहपच्छा सेवि णिव्विसेज्जा ॥ २ ॥ बहवे साहम्मिया एगयओ

अर्थ

दो साधु एकसी समाचारी के पालक साथ में रह विचरते हुवे उन में से किसी एकने अकृत्य-दोष स्थान की सेवना की, उस की सेवना कर उस की आलोचना अपने साथ के साधु के पास या अन्य आचार्य के पास करे, तब उन को उचित है कि उस की योग्यता देख वैसे प्रायश्चित्त देवे अर्थात् जो वह अगीतार्थ हो तो उस शुद्ध करने आम्बिल उपवासादि देवे परंतु परिहार तप नहीं देवे, क्यों कि अगीतार्थ परिहार तप के अयोग्य होता है. और जो वह गीतार्थ हो तो उस को यथा उचित परिहार तप देवे. और उस की वैयावच करे वह तप सुख से समाप्त करावे ॥ १ ॥ कदाचित् ऐसा बने की दो सरीखी समाचारी वाले साधु साथ विचर रहे हैं, दोनों जनेने अन्य किसी प्रकार का अकृत्य-दोषस्थान सेवन किया, तब क्या करे? तो कि उन दोनों में से एक को गुरूपने स्थापनकरे और एक छोटा शिष्यरूप रहे, उन में जो गुरू रूप हैं वह कल्पस्थित है इसलिये अनुपारिहारिक रहे और जो छोटा है उस को परिहारी तप में स्थापन करे, उस छोटे का पारिहारिक तप पूरा हो जावे, तब जो गुरुपने रहे हैं वे पारिहारिक तप अंगीकार करे, दोनों परस्पर वैयावच्च करके सुखसे तप पूर्ण करावे ॥ २ ॥ अब बहुत साधु आश्रिय

विहरंति एगे तत्थ अण्णयर अकिच्चठाणं पडिसेवित्ता आलोएज्जा, ठवणिज्जं ठवतित्ता करणिज्जं वेयावडियं ॥ ३ ॥ बहवे साहम्मिया एगयओ विहरंति सव्वेवि तत्थ अण्णयरं अकिच्चठाणं पडिसेवित्ता आलोएज्जा एगं तत्थ कप्पागंठवइत्ता अवसेसाणि निव्विसेज्जा अहपच्छा सेविणिव्वेसेज्जा ॥ ४ ॥ परिहार कप्पठिते भिक्खू गिलायमाणे अण्णयरं अकिच्चठाणं पडिसेवित्ता आलोएज्जा, सेयसंथरेज्जा ठवणिज्जं ठवइत्ता करणिज्जं वेयावडियं, सेयणोसथरेज्जा अणुपरिहारिएणं करणिज्जं वेयावडियं सेयअणुपरिहारिएणं कीरमाणं वेयावडियं साइज्जेज्जा सेनिकासिणे तत्थेव आरुहियव्वेसिया ॥ ५ ॥ परिहार

अर्थ कहते हैं-बहुत से एक ही समाचारी के पालने वाले साधु साथ ही विचरते हैं. उन में से किसी एक साधु ने कहीं किसी अकृत्य-दोष स्थान की सेवना की. वह जो पारिहारिक तप के योग्य- गीतार्थ होवे तो उसे पारिहारिक तप में स्थापन करे. अन्य साधुओं के पास उन की वैयावच्च कराके सुख से वह तप पूर्ण करावे ॥ ३ ॥ अब सब आश्रिया कहते हैं. बहुत से साधुओं एकही समाचारि के पालने वाले साथ ही विचरने वाले कदाचित किसी प्रयोजन से सब ही अकृत्य-दोष स्थान की सेवना कर, उस की आलोचना करना इच्छे, तब उन सब में से एक को कल्प स्थित स्थापन करे. अपरशेष साधुओं तप अंगीकार करे. फिर उन सब का तप पूरा हो जावे तब वे कल्प स्थित तप

सूत्र

कप्पठियं भिक्खू गिलायमाणं णोकप्पति तस्सगणवच्छेइयस्स णिज्जूहित्तए अगिलाए तस्स करणिज्जं वेयावडियं जाव ततो रोगायंकाओ विप्पमुक्को ततोपच्छा तस्स अहालहुस्सए णामं ववहारे पट्ठवेयव्वेसिया ॥ ६ ॥ अणवट्ठप्प भिक्खू गिलायमाणे णो कप्पंति तस्सगणावच्छेइयस्स णिज्जूहित्तए, अगिलाए तस्स

अर्थ

अंगीकार करे ॥ ५ ॥ अब परिहारिक आश्रिय कहते है—परिहारिक कल्पस्थित साधु तप करता गिलानताको प्राप्त हुआ, अन्य किसी अकृत्य-दोषस्थान का सेवन कर आलोचना करे तब आचार्य उसकी शक्ति का विचार कर जो वह परिहारिक तप करने को शक्ति वंत होवे तो उसे परिहारिक तप में स्थापन करे फिर एक अनुपहारिक स्थापे अर्थात् खास एक साधु को उस की वैयावच्च में स्थापन करे और जो कदाचित् वह परिहारिक तप करने की शक्ति रहित होवे तो परिहारिक तप वाले की वैयावच्च करावे और जो वह तप भी नहीं करे व उसकी शक्ति वैयावच्चभी करावे तो वह प्रायश्चित का अधिकारी होवे ॥ ६ ॥ परिहारिक कल्पस्थित प्रायश्चित का तप करने वाले साधु कदाचित रोगादि कर गिलानता को प्राप्त हुवे तो उन का अपने गच्छ के बाहिर निकालना गणव्यवच्छेदक को कल्पता नहीं है. परंतु वह जहां तक आरोग्यता को प्राप्त न हो वहां तक उस की वैयावच्च अन्य साधु के पास करावे और आरोग्यता प्राप्त हुवे बाद. उस सदोष साधु को सेवा की उस को उस को फक्त व्यवहार रखने वास्ते स्तोक-थोडासा नाम मात्र प्रायश्चित्त देवे एसे ही अनवस्थित नववे प्रायश्चित्त के करनेवाले साधु रोगादि कारन से गिलानता को प्राप्त

सूत्र

पच्छा तस्स अहालहुस्सए णामं ववहारे पठवेयव्वेसिया ॥ ११ ॥ उमायपत्तं भिक्खू गिलायमाणं णो कप्पति तस्स गणवच्छेइयस्स निज्जूहित्तए, अगिलाए तस्स करणिज्जं वेयावडियं जाव तत्तोरोगायंकाओ विप्पमुक्को तत्तो पच्छा तस्स अहालहुस्सए णामं ववहारे पठवेयव्वेसिया ॥ १२ ॥ उवसग्गपत्तं भिक्खू गिलायमाणं नो कप्पति तस्स गणावच्छेइयस्स निज्जूहित्ताए, अगिलाए तस्स करणिज्जं वेयावडियं जाव तत्तोरोगायंकाओ विप्पमुक्को ततोपच्छा तस्स अहालहुस्सएणामं ववहारे पट्ठवेयव्वेसिया ॥ १३ ॥ साहिकरणं भिक्खू गिलायमाणं नो कप्पइ

अर्थ

श्चित्त देवे ॥ ११ ॥ कोई साधु शीतादि के नहीं से उन्माद को प्राप्त हुवा उस को गच्छ में से बाहिर निकालना गणावच्छेदक को कल्पता नहीं है परंतु वह आरोग्यता को प्राप्त होवे वहां तक उस की वैयावच करावे यावत् वह आरोग्य हुवे बाद उस को नाम मात्र व्यवहार साधने प्रायःश्चित दे ॥१२॥ कोई साधु देवता मनुष्य तिर्यंच सम्बन्धी किये हुवे उपसर्ग से पराभव पाया हुवा गिलपानता को प्राप्त होवे तो उस को गच्छ के बाहिर निकाल देना गणवच्छेदक को कल्पता नहीं है परंतु वह उपसर्ग रहित होवे वहां तक उस की वैयावच करावे, फिर उसे व्यवहार साधने थोडासा प्रायःश्चितदे ॥ १३ ॥ क्रोधादि कषाय के तीव्र आवेशकर साधु गिलपा-

सूत्र

तितस्स गणावच्छेइयस्स निज्जुहित्तए अगिलाए तस्स करणिज्जं वेयावडियं जाव तत्तोरोगायंकाओ विप्पमुक्को तत्तो पच्छा तस्स अहालहुस्सएणामं ववहारे पट्ठवेयव्वेसिया ॥ १४ ॥ मपायच्छित्तं भिक्खू गिलायमाणं नो कप्पति तस्स गणवच्छेइयस्स निज्जूहित्तए अगिलाए तस्स करणिज्ज वेयावडियं जाव ततोरोगायंकाओ विप्पमुक्का ततोपच्छा तस्स अहालहुसाएणामं ववहारे पट्ठवेयव्वेसिया ॥ १५ ॥ भत्तपाणं पडियाइखित्तं भिक्खूं गिलायमाणं नो कप्पति तस्स गणवच्छेइयस्स निज्जूहित्तए अगिलाए तस्स करणिज्जं वेयावडियं जाव रोगायंकाओ विप्पमुक्को

अर्थ

नता को प्राप्त हुवा तो उस को गच्छसे निकाल देना गणावच्छेदक को कल्पता नहीं है परन्तु वह आगिलपानता को प्राप्त नहोवे वहां तक उस की वैयावच्च करावे फिर उस रोग से विमुक्त हुवे थोडासा प्रायश्चित्त दे ॥ १४ ॥ कोइ साधु बहुत प्रायश्चित्त आने से घबराकर गिलपानता को प्राप्त हुवा उस को गच्छ के बाहिर निकालना गणावच्छेदक को कल्पता नहीं है परंतु वह आगिलपानता को प्राप्त नहोवे वहां तक उस की वैयावच करे यावत् उस दुःख से वह मुक्त हो आगिलपानी बने बाद नाम मात्र प्रायश्चित्त दे ॥ १५ ॥ कोइ साधु भक्त पानी के प्रत्याख्यान (संथारा) किये बाद गिलपानता को प्राप्त हुवा होतो उस को गच्छके बाहिर निकालदेना गणावच्छेदक को कल्पता नहीं है परंतु वह आगिलपानता को प्राप्त नहो

सूत्र

तत्तो पच्छा तरस अहा लहुस्सए णामं ववहारे पट्टवेयव्वोसिया ॥ १६ ॥ अट्ठ जायं भिक्खू गिलायमाणं नो कप्पति तस्स गणवच्छेइयस्स निज्जुहित्तए अगिलाए तस्स करणिज्जं वेयावडियं जाव तत्तो रोगायंकाओ विप्पमुक्को तत्तो पच्छा तरस अहालहुस्सए णामं ववहारे पट्टवेयव्वोसिया ॥ १७ ॥ अणवट्ठप्पं भिक्खू अगिहिभूयं नो कप्पति

अर्थ

वहां तक उस की वैयावच करावे यावत् वह रोगांतक कर मुक्त होवे तब फिर उसे कुछ प्रायश्चित्त दे॥१६॥ कोइ साधु किसी भी अर्थ, प्रामी की अत्यन्त इच्छाकर लाभ को प्राप्त हुवा गिलानता को प्राप्त हुवा तो उस को गच्छ के बाहिर निकालना गणवच्छेदक को कल्पता नहीं है परंतु वह अगिलानी होवे वहां तक उसकी वैयावच करे यावत् वहा रोगांतक कर विप्रमुक्त होवे तब फिर उसको थोडासा प्रायश्चित्त दे॥१७॥ अब परिहारिक को संयम में स्थापने विषय कहते हैं ॥ नवमा अनवस्थित तप को धारन करने वाले साधु को गृहस्थलिंग धारन कराये बिना संयम में स्थापन करना गणावच्छेदक को नहीं कल्पता है. परन्तु वह नवमा अनवस्थित तप के वाहक साधु को गृहस्थ भूत बनाकर गृहस्थ का लिंग धारन कराकर संयम में स्थापन करना कल्पता है. क्यों कि वह इस ही प्रकार के जबर दोष का सेवन करने वाला है. उस का वह दोष प्रसिद्धी में आगया है, जो बिना गृहलिंग किये, उस संयम में स्थापन करे, तो लोक में अप्रतीत उत्पन्न होवे कि इन में सब दोषि ही साधु देखाते हैं. तथा अन्य साधु को भी क्षोभ उत्पन्न होवे कि



तस्स गणावच्छेइयस्स उवट्ठावित्तए ॥ १८ ॥ अणवट्ठप्पं भिक्खुं गिहिभूयं कप्पति तस्स गणावच्छेइयस्स उवट्ठावित्तए ॥ १९ ॥ पारंचियं भिक्खुं अगिहिभूयं नो कप्पति तस्स गणावच्छेइयस्स उवट्ठावित्तए ॥ २० ॥ पारंचियं भिक्खुं गिहिभूयं कप्पति तस्स गणावच्छेइयस्स उवट्ठावित्तए ॥ २१ ॥ अणवट्ठप्पं भिक्खुं पारंचियं भिक्खुं गिहि-

इस प्रकार हाथ लगानेसे ऐसी मान हानी होती है, उस को भी बोध प्राप्त होवे कि फिर भी दोष लगाऊंगा तो ज्यादा फजीती होगी, इत्यादि कारण के लिये आचार्य को उचित है कि उस के दोष प्रसिद्ध करने पर गृहस्थ का भेष धारनकर फिर आचार्य के पास आवे तोही फिर उसे नवी दीक्षा दे संयम में स्थापन करे) ॥ १८-१९ ॥ इस ही प्रकार दशवा पारंचिक प्रायश्चित वाले साधु को भी गृहस्थलिंग धारन कराये विना संयम में स्थापन करना नहीं कल्पता है. परंतु पारंचिक प्रायश्चित वाले साधु को गृहस्थ भूत बनाकर संयम में स्थापन करना कल्पता है. इस का भी सब हेतु पूर्वोक्त सूत्र जैसा जानना ॥ २०-२१ ॥ अब आगे चार सूत्र का परमार्थ निश्चयार्थ अपवाद सहित संग्रह नयकर कहते हैं ॥ नवमे अनवस्थित प्रायश्चित वाले साधुको तथा दशवे पारंचिक प्रायश्चित वाले साधु को कदाचित गृहस्थ भूत करके और कदाचित गृहस्थ भूत किये विना अर्थात् गृहस्थलिंग पहनाये विना कल्पवेष पहनाकर संयममें स्थापन करना गणावच्छेदक को कल्पता है. क्योंकि कोइ कषायादि महा

भूयंवा अगिहिभूयंवा कप्पति तस्स गणावच्छेइयस्स उवट्ठावित्तए, जहा तस्स गणस्स पत्तियं सिया ॥ २२ ॥ दो साहम्मिया एगयओ विहरंति एगे तत्थ अण्णयरं अकिच्चट्ठाणं परिसेवित्ता आलोएज्जा-अहणं भंते ! अमुएणं साहुणासद्धिं इमंमियं कारणंसि पडिसेवी, से तत्थ पुच्छियव्वे किं पडिसेवी, अपडिसेवी? सेए वएज्जा-पडि-

प्रायश्चित्त जैसा दोष सेवन किया परन्तु उन को गृहस्थ भूत बनाकर दीक्षा देने से उन के शिष्य साधु कहे कि जो हमारे आचार्य को गृहस्थ भूत बनावोगे तो यहां क्लेश उत्पन्न होगा. इत्यादि बहुत कारन है. अथवा आचार्यादिक रहस्य कर्म प्रगट होने से साधुओंकी अप्रतीत होवे, धर्म की हीलना होवे, संयमी में फूट होवे, इत्यादि दोष वृद्धिका कारन जान गच्छको कुल को संघ को जिस प्रकार प्रतीत उत्पन्न होवे उस ही प्रकार गृहस्थ भूतकर तथा अगृहस्त भूत करे उनको पुनः संयम पे स्थापन करे ॥ २२ ॥ दो सरीखी समाचारी वाले साधु साथ विचरते हैं, उस में से एक साधु दूसरे साधु के शिर अभ्याख्यान कलंक चढाने के वास्ते अन्य मैथुनादि-दोष स्थान सेवन कर के आचार्यादी के पास आलोचना करे, कि अहो पूज्य! अमुक साधुके साथ मैंने इस कारनसे मैथुनादि सेवन कर चारित्रकी विराधनाकी है. तब वे आचार्य दूसरे साधु का न्यायके लिये बहुत दिलासा देकर हितमित वचनसे समजाकर उसके आलोचना पर परिणामकी वृद्धि

सूत्र

सेवि परिहारपत्ते, सेयवएज्जा णो पडिसेवि णो परिहारपत्ते; जंसे एयमाणं वदति सेय-एयमाणे ओघेतव्वोसिया; से किमाहु भंते! सच्चपइन्ना ववहारा ॥ २३ ॥ भिक्खूयगणाओ अवकम्म उहाणुपहाए गच्छेज्जा, सेय आहच्च अणोघाइते सेय इच्छेज्जा इच्छेज्जा दोच्चंपि तमेवगणं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए;

अर्थ

होवे इस प्रकार पूछे कि अहो मुनि! अमुक मुनि कहते हैं वह स्थानक तुमने सेवन किया किंवा नहीं किया? तब वह साधु स्वयंमेव कहे कि अहो भगवन्! मैंने इस स्थानक की सेवना की है, तब तो उस को प्रायश्चित्त देवे; और वह न कहे तो उस का निश्चय करने पुनः उस कलंक दाता साधु को पूछे कि यह कहां सेवन किया? कब किया? यों २-३-४ वक्त पूछने से वह साधु निर्दोष मालुम पडे तो उस झूटा कलंक-आल चढानेवाले साधु को मैथुन सेवन करने का और झुठा आल चढाने का नवबा तथा दसवा प्रायश्चित्त देवे. (क्यों कि आचार्य का कर्तव्य है कि प्रतिसेवी को अप्रतिसेवी नहीं करे. और अप्रतिसेवी को प्रतिसेवी नहीं करे. जो कदापि करे तो उतना ही प्रायश्चित्त के अधिकारी वे प्रायश्चित्त दाता होवें, अछत्ता आल चढाने का और दूसरा महाव्रत भंग का दोष उन को लगे) ॥ २३ ॥ अब जो विषयोत्पन्न हो गच्छ का त्याग कर जावे और परिणाम की धारा पलटने से पीछा आवे उस आश्रिय कहते हैं. जो साधु मोह कर्मोदय भोगवली कर्मोदय गच्छ का त्याग कर-छोडकर जावे उस साधु को

तत्थणं थेराणं इमेयरूवे विवाए समुप्पज्जिज्जा इमाणं अज्जो! जाणह किं पडिसेवी अपडिसेवी सेयपुच्छियव्वे किं पडिसेवि अपडिसेवि? सेयवदेज्जा पडिसेवि परिहारपत्ते, सेयवएज्जा णो पडिसेवि णो परिहारपत्ते, जं से पमाणं वदति सेय पमाणं उघेतव्वेसिय., से किमाहु भंते! सच्चपइण्णा ववहारा ॥ २४ ॥ एगयाकिलियस्स भिक्खू कप्पति इत्तरियं

वाले में गमन के कष्ट से तथा कर्मोदय मोह के उपशम से वह असंयम स्थान का सेवन बिना किया ही पीछा फिर कर आवे फिर दूसरी वक्त उस ही गच्छ को अंगीकार कर विचरने की इच्छा करे, तब गच्छमें संशय उत्पन्न होवे कितनेक कहे कि यह असंयम स्थान सेवन कर आया है और कितनेक कहे कि-यह बिना सेवन किये आया है, यों विवाद उत्पन्न होवे. तब आचार्य उस विवाद को शमाने के वास्ते गच्छ के साधुओं का जहां जाकर वह आया हो वहां संदेशवर मंगावे. जो वह निर्दोष ठहरे-अर्थात् उसने असंयम स्थानकका सेवन नहीं किया होवे उसको प्रायश्चित्त नहीं देवे और जो सेवन किया होतो उस के मुख से उस दोष को कबूलकर प्रायश्चित्त देवे. क्योंकि परिणाम से भंग हुवा परंतु काया कर भंग न हुवा, तथा पीछा स्थानक आगया आलोचना सन्मुख हुवा वह भगवती की साक्षी से आराधिक गिना जाता है इसलिये वह प्रायश्चित्त का अधिकारी नहीं है. शिष्य पूछता है अहो भगवान! किसलिये वह प्रायश्चित्त का अधिकारी नहीं है? गुरु कहे, अहो शिष्य! तीर्थंकर भगवानने व्यवहार प्रायश्चित्त कहा है वह

सूत्र

दिसिवा अणुदिसित्रा आयरिय उवज्झायाणं उद्दिसित्तएत्रा धारित्तएत्रा, जहा वा तस्स गणस्स पत्तियं सिया ॥ २५ ॥ वहवे परिहारिया अपरिहारिया इच्छेज्जा एगओ

अर्थ

तथ प्रतिज्ञाकर प्रतिसेवी को अप्रतिसेवी नहीं करे और अप्रतिसेवी को प्रतिसेवी नहीं करे ॥ २४ ॥ अब एक पक्षिक साधु का कहते हैं ॥ एक पाक्षिक साधु दो प्रकार के होते हैं. १ जो एक गच्छ वृत्ति होवे वह प्रवज्या एक पक्षी और जो एक गुरु के पास सूत्र पढा हो वह सूत्र एक पक्षी. ऐसे एक पक्षिक साधु को थोडे काल पर्यंत आचार्य उपाध्याय की पदवी देना दूसरे आचार्य उपाध्यायकर स्थापन करना कल्पता है. दूसरे आचार्य उपाध्याय का स्थापन क्यों करना सो कहते हैं. कदाचित वृद्ध आचार्य उपाध्याय का अचिंत्य वियोग हो जावे तो भी हम सनाथ बने रहेंगे. तथा गच्छ की चिंता न रहेगी, आचार्य के मृत्युबाद पदवी किस को देना यह झगडा भी उत्पन्न नहीं होवेगा इसलिये प्रथम थोडे काल के लिये आचार्य स्थापन करे और फिर उन से अधिक कोई जावजीव पदवी के निर्वाह करने योग्य उत्तम पुरुष मिलतो उन को स्थापन करे. इसलिये उन को इत्वरिये (थोडे काल के) आचार्य उपाध्याय कहे जाते हैं. और जो बहुश्रुतादि गुण युक्त होवे उन को जावजीव के लिये स्थापन करें वे यावत्कालिक आचार्य कहे जाते हैं. ॥ २५ ॥ अब प्रायःश्चित्त का अधिकार कहते हैं. ॥ बहुत परिहारिक (प्रायःश्चित्त वाले) साधु और अपरिहारिक साधु इच्छा करे कि अपनको एकमंडलपर या एक पात्रमें भोजन

मूल

बत्थए, ते अण्णमण्ण संभुंजति अण्णमण्णसं णो भुंजति, एग मासंवा दुमासंवा तिमासंवा चाउमासंवा पंचमासंवा छमासंवा, मासंते तत्तोपच्छा सव्वेवि एगतो संभुंजति ॥ २६ ॥ परिहार कप्पट्ठियस्स भिक्खूस्स णो कप्पति असणंवा पाणंवा खाइमंवा साइमंवा दाओवा अणुप्पदाओवा, थेरायणं वदेज्जा इमण्णं अज्जो ! तुमं एतेसिं देहिवा अणुप्पदेहिवा एवं से कप्पति दाओवा अणुप्पदाओवा, कप्पति से लेवं अणुजा

अर्थ

करना, तब परिहारिक साधु हैं उनको जो प्रायःश्चित्तकतप है, एकमहिनेका दोमहिनेका तीनमहिनेका चार पांच महिने का और छे महिने का, यह जितना तप हो उतना पूरा हुवा पाहिले उन के सामिल ? नहीं कल्पता है, क्यों कि वे तपस्वी हैं और उन का तप पूरा हुवे बाद एक महिने ऊपर पांच छमहिने ऊपर एकमहिना और भेळा आहार नहीं करसकते है, क्यों कि उनके तपस्याका पारना उनको साताकारी आहारदेना योग्य है. परंतु सपविभाग न करसके इसलिये तप उपरांत पांच शेष सामिल आहार नहीं कर सकें ॥ २६ ॥ जो परिहारस्थिति कल्प साधु हैं उन को खादिम स्वादिम चारों प्रकार का आहार देना भी कल्पे नहीं और दूसरे के पास दिलाना भी ?. परंतु जो कदाचित्त स्थविर आज्ञा देवे कि अहो आर्य! इनको तुम चारही प्रकारका आहारदेवो थवा दूसरे पास दिलावो तो उन को स्वयं आहार देवे अथवा दूसरे पास दिलावे. इस ही प्रकार उन के

सूत्र

पवित्तए अणुजाणह भंते ! लेवाए एवं से कप्पति लेवं समासेवित्तए ॥ २७ ॥ परिहार कप्पट्ठिए भिक्खूसएणं पडिगाहेणं बहिया अप्पणो वेयावडियाए गच्छेज्जा थेरायसंवएज्जा-पडिगाहेहि अज्जो ! अहपि भोक्खामिवा पाहामिवा, एवं कप्पति पडिगाहित्तए, तत्थ णो कप्पति अपरिहारिएणं परिहारियस्स पडिग्गहं असणंवा पाणंवा

अर्थ

पास से लेने की इच्छा हो तो भी स्थविरको पूछे कि अहो भगवन्! उनके पास आहार आदि ग्रहण करूं? जो स्थविर आज्ञा दे तो उन के पास से ग्रहण करे [लेप शब्द का अर्थ घृतादि विगय भी ग्रहण करने का जानना] ॥ २७ ॥ अब वैयावच का कहते हैं. कोई एक परिहारिक प्रायःश्चित्त तप का करनेवाला साधु स्थविर साधु की वैयावच करता हो-परंतु वह परिहारिक होने से अपने पात्रे में अलग आहार पानी भोगवता हो और स्थविर के पात्रमें स्थविर को आहार पानी लाकर देता हो (क्यों कि विगयादि का संघट्टन न हो इस लिये.) तब वह परिहारिक अपने पात्र को ग्रहण कर अपने कार्य के वास्ते बहिर जाता हो तब वे स्थविर उस साधु को जाता देखकर विचारे कि इस का काम कर फिर मेरे काम के लिये जायगा तो बहुत देर हो जायगा तथा इस को दुगनी मेहनत पडेगा, इत्यादि विचार कर उस से कहे कि अहो आर्य ! इन ही तरें पात्र में मेरे वास्ते भी आहार आदिक लेता आना. वह आहार आदिक में भी मागकर लेवूंगा, पानी आदिक पीवूंगा. इतनी आज्ञा जो स्थविर देवे तो फिर उस परिह

खाइमंवा साइमंवा भोत्तएवा पीत्तएवा,कप्पति से सयंसिवा पडिग्गहगंसिवा सयंसिवा पलासगंसिवा सयंसिवा कमंडलगंसिवा सयंसिवा खभगंसिवा सयसिवा पाणियंसिवा उद्धट्टु २ भोत्तएवा पीत्तएवा, एस कप्पो अपरिहारियस्स परिहारियओ॥२८॥ परिहार कप्पट्ठिए भिक्खू थेराणं पडिग्गहएणं बहियाथेराणं वेयावडियाए गच्छेज्जा, थेराणं वदेज्जा पडिगाह अज्जो! तुमंपि पच्छा भोक्खामिवा-पीहामिवा, एवं से कप्पति पडिगाहित्तए, तत्थ णो कप्पति परिहारिएण अपरिहारियस्स पडिगाहसि असणवा

अर्थ

रिक साधु को कल्पता है कि स्थविर की आज्ञा प्रमाण आहार पानी लाकर उन को देवे. परंतु उन अपरिहारिक साधुओं को परिहारिक साधु के पात्र में आहार पानी खादिम स्वादिम भोगवना पान करना नहीं कल्पे. उन को तो अपने ही पात्रों में आहार करना, अपने ही पात्र (पात्रीये) में भोजन करना, अपनेही कमंडल में पानी पान करना, धान्य आदि अपने स्वयंके हाथके खोबे में ही ग्रहणकर खाना, इत्यादि सब अपने हाथ ऊपर ग्रहण कर भोगवना कल्पता है. परंतु आचार्य की बराबरी आप नहीं करे, क्यों कि आचार्य की इच्छा हो वैसा वे करे, "गुरु कहे सो करे परंतु गुरु करे सो नहीं करे!" यह परिहारिक साधु की और अपरिहारिक साधु की समाचारी आचार जानना॥२८॥ यह आपके लिये जाने का कहा, अब आचार्य के लिये आने का कहते हैं—परिहारिक कल्पस्थितिवंत साधु स्थविर के

४ भोत्तएवा पीत्तएवा, कप्पति से सयंसिवा पडिगाहकंसिवा सयंसिवा पलासगंसिवा सयंसिवा कमंडलगंसिवा सयंसिवा खभगंसिवा; सयंसिवा पाणिसिवा उद्धटु २ भोत्तएवा पीत्तएवा, एसकप्पो परिहारियस्स अपरिहारियओ ॥ तिबेमि ॥ २९ ॥

विवहार सुयस्स बीओ उद्देसो सम्मत्तो ॥ २ ॥

* *

पात्र ग्रहण कर स्थानक के बाहिर स्थविर की वैयावच करने को आवे, तब स्थविर उसे जाता देख कर कहे कि, अहो आर्य ! तुम्हारा आहार भी साथ ही ले आना वह हमारे भोगवे बाद तुम भी भोगव लेना तो उस को उस ही पात्र में आहार पानी ग्रहण करना, परंतु दूसरे अपरिहारिक साधु को नहीं कल्पता है, उस परिहारिक साधु के पात्र में लाया हुवा अशनादि चारों आहार भोगवना पीना परंतु अपने पात्र में आहार करना, अपने मात्रीये में मात्रा करना, अपने कमंडल से पानी पीना, अपने हाथ में ग्रहणकर स्वादिम पानी आदि खाना, यों सब अपने हाथ से ही ग्रहणकर आहारादि भोगवना पानी आदि पीना, कल्पता है यह कल्प परिहारिक अपरिहारिक साधु का कहा, यह व्यवहार सूत्र का दूसरा उद्देशा समाप्त हुवा ॥ २ ॥

॥ तृतीय उद्देशा ॥

सूत्र

भिक्खूय इच्छेज्जा गणंधारित्तएवा भगवंच सेय अपलिच्छिण्णे एवं से णो कप्पति गणधारित्तए, भगवंच सेय पलिच्छिण्णे एवं से कप्पति गणं धारित्तए ॥ १ ॥ भिक्खूय इच्छेज्जा गणंधारित्तए णो कप्पति से थेरे अणापुच्छित्ता गणंधारित्तए, कप्पंतिसे थेरे आपुच्छित्ता गणंधारित्तए थेराय से वियरेज्जा, एवं से कप्पति गणं

अर्थ

किसी साधु के मन में गच्छ धारन कर स्वयं विचरने की इच्छा है परंतु वह आचारंग निशीतादि सूत्र अपठित अजान हो तो भगवंत फरमाते हैं कि यदि वह शिष्यादि परिवार सहित होवो भी उस को गणधारण कर स्वेच्छा चारी होना नहीं कल्पता है परंतु भगवंत कहते हैं कि वह आचारंग नशित सूत्र का जान होतो उसे गणधारन कर के विचरना कल्पता है ॥ १ ॥ वह किस प्रकार कल्पता है सो कहते हैं किसी साधु को गणधारन कर गच्छपति बन आगेवानी हो स्वयं इच्छा से विचरने की इच्छा हो तो स्थविर को विना पूछे गणधारन कर विचरना उस को नहीं कल्पता है, परंतु स्थविर को पूछे और वे जो उपयोग युक्त गणधारन कर विचरने की आज्ञा देवे तो उसको गणधारन कर विचरना कल्पता है और जो स्थविर कह के मतविचरो तो उस को गणधारन कर विचरना नहीं कल्पता है, यदि जो वह स्थविर की आज्ञा विना गणधारन कर विचरे तो वह जितने दिन आज्ञाविना विचरे उतने दिन की

सूत्र

धारित्तए, थेराय से णो वियरेज्जा, एवं से णो कप्पति गणंधारित्तए, जण्णं थेरेहिं अविदिणं गणधारेइ सेसंतराए छेदेवा परिहारेवा साहम्मिया उट्ठाए विहंरति, णत्थिणं तेसिं केइ छेदेवा परिहारेवा ॥ २ ॥ तिवास परियाए समणे निग्गंथे आयार कुसले, संयम कुसले, पवयण कुसले, पण्णइ कुसले, संगह कुसले उवगाहकुसले, अक्खुयायारे असबलायारे, अभिन्नायारे, असंकिलिट्ठायारे, चरित्ते, बहुसुए, बज्झागमे,

अर्थ

दीक्षा के छेद के अथवा तप का प्रायःश्चित्त का अधिकारी होवे. परंतु जो उसने जितने स्वधर्मिक साधुओं को उठाये अपने साथ में लिये उस के साथ विचरे, उन को चारित्र का छेद भी नहीं आता है और तप का प्रायःश्चित्त भी नहीं है (भगवती सूत्र में कहे जामालिके साथ के शिष्यवत्)॥ २ ॥ अब पद्वी धर का आचार कहते हैं ॥ तीन वर्ष जिन को दीक्षा धारन किये को हुवे होवे. वे श्रमण निग्रन्थ पांच आचारमें कुशल, सतरे भेदे संयममें कुशल, आचारांगादि प्रवचन-शास्त्रमें कुशल, प्रायःश्चित्त देने के कार्य में कुशल, गच्छ के लिये क्षेत्र वस्त्र सूत्र पात्रादि के संग्रह में कुशल, उपग्रह आहार की एषणा पानी की एषणादि कार्य में कुशल, अखंड आचार के पालक इक्कीस प्रकार के सबल दोष रहित असबलाचारी, जिनका आचार भिन्नता रहित जिनाज्ञानुसार होवे अभिन्नाचारी, संक्लिष्ट परिणाम क्रोधादि कषाय कर मलीनता रहित, चारित्र के पालक, बहुत सूत्रके पाठी, बहुत आगम शास्त्रके व प्रायश्चित

जहण्णेणं आयारकप्पधरे कप्पति उवज्झायत्ताए उद्दिसित्तए ॥ ३ ॥ तिवास परियाए समणे निग्गंथे नो आयार कुसले, नो संयम कुसले, नो पवयण कुसले नो पण्णत्ति-कुसले नो संगहकुसले, नो उवग्गह कुसले, खयायारे, सबलायारे, भिन्नायारे, संकिलिट्ठायारे, अप्पसुए, अप्पागमे, णोकप्पति उवज्झायत्ताए उद्दिसित्तए ॥ ४ ॥ पंचवास परियाए समणे निग्गंथे आयार कुसले, संयम कुसले,

विधी के जान, जघन्य ही तो आचारांग और नीशीत के अर्थ परमार्थ के जान होवे, उन को उपाध्याय के पदवर स्थापन करना कल्पता है ॥ ३ ॥ उन ही साधु को तीन वर्ष पूर्ण दीक्षा धारन किये को हुवे नहीं, ऐसे श्रमण निग्रन्थ जो आचार में कुशल नहीं, संयम में कुशल नहीं, प्रवचन-शास्त्र में कुशल नहीं, प्रज्ञा बुद्धि में कुशल नहीं, गच्छ के उपयोग में आवे ऐसी वस्तु के संग्रह में कुशल नहीं, उपग्रहणादि कार्य में कुशल नहीं, खंडित चारित्र के पालने वाले, सबलादि दोष सहित चारित्र के पालने वाले, जिनाज्ञा से भिन्न के चारित्र में मिलता है ऐसे, क्रोधादि कषाय कर संक्लिष्ट चारित्र के [illegible] अल्प सूत्र-सूत्रज्ञान रहित, अल्प आगम के जान, ऐसे को उपाध्याय की पदवी देना नहीं कल्पता है ॥ ४ ॥ जिस साधु को संयम ग्रहण किये पांच वर्ष हुवे हों ऐसा श्रमण निर्ग्रंथ आचार में कुशल, संयम में कुशल, प्रज्ञा-बुद्धि में कुशल, वस्त्रादि के संग्रह में कुशल, आहारादि के उपग्रह में कुशल, [illegible]-

पवयण कुसले, पण्णति कुसले, संगह कुसले, उवग्गह कुसले, अक्खुयायारे, असबल-लायारे, अभिण्णायारे, असंकिलिट्ठायारे चारित्ते बहुसुए बज्झागमे जहण्णेणं दसाकप्पववहारधरे, कप्पति आयरिय उवज्झायत्ताए उद्दिसित्तए ॥५॥ सच्चेवणं से पंचवास परियाए समण णिग्गंथ नो आयर कुसले, णो पवयण कुसले णो पण्णत्ति कुसले, णो संगह कुसले, णो उवगह कुसले, क्खुयायारे, सबलायारे, भिन्नायारे संकिलिट्ठायारे चारित्ते, अप्पसुए अप्पागमे णो कप्पति आयरिय उवज्झायत्ताए उद्दिसित्तए ॥ ६ ॥

चारी, सबले दोष रहित चारित्र, भिन्नता रहित आचार का पालक, कषाय की संक्लेश रहित चारित्र का पालनेवाला, बहुत सूत्र के पारगामी, बहुत आगम के जान, जघन्य जघन्य दशाश्रुतस्कंध व्यवहारवंद कल्प चारों छेद के जान होवे उन को आचार्य की और उपाध्याय की दोनों पद्वीपर स्थापन करने योग्य है ॥ ५ ॥ वही जो साधु पांच वर्ष जिन को दीक्षा धारन किये हुवे ऐसे श्रमण निग्रंथ, आचार कुशल नहीं, संयम में कुशल नहीं, प्रवचन में कुशलता रहित, प्रज्ञा-बुद्धि रहित, योग्य वस्तु के संग्रह रहित, आहारादि ग्रहण करने की कुशलता रहित, खंडित चारित्रीये, सबलदोष सेवित, भिन्नाचारी संक्लिष्टाचारिपी, अल्प सूत्री, अल्प आगम का जान; ऐसे को आचार्य उपाध्याय के पद पर स्थापन करना नहीं कल्पता है ॥६॥

जहण्णेणं आयारकप्पधरे कप्पति उवज्झायत्ताए उद्दिसित्तए ॥ ३ ॥ संचेवणं से तिवास परियाए समणे निग्गंथे नो आयार कुसले, नोसंयमकुसले, नोपवयण कुसले नोपणति-कुसले नो संगहकुसले, नो उवग्गह कुसले, खयायारे, सबलायारे, भिन्नायारे, संकिलिट्ठायारे, चरित्ते अप्पसुए, अप्पागमे, णोकप्पति उवज्झायत्ताए उद्दिसित्तए ॥ ४ ॥ पंचवास परियाए समणे निग्गंथे आयार कुसले, संयम कुसले,

विधी के ज्ञान, जघन्य ही तो आचारांग और निशीथ के अर्थ परमार्थ के ज्ञान होवे, उन को उपाध्याय के पदपर स्थापन करना कल्पता है ॥ ३ ॥ उस ही साधु को तीन वर्ष पूर्ण दीक्षा धारन किये को हुवे नहीं, ऐसे श्रमण निग्रन्थ जो आचार में कुशल नहीं, संयम में कुशल नहीं, प्रवचन शास्त्र में कुशल नहीं, प्रज्ञा बुद्धि में कुशल नहीं, गच्छ के उपयोग में आवे ऐसी वस्तु के संग्रह में कुशल नहीं, उपग्रहादि कार्य में कुशल नहीं, खंडित चारित्र के पालने वाले, सबलादि दोष सहित, चारित्र के पालने वाले, जिनाज्ञा से जिन के चारित्र में भिन्नता है ऐसे, क्रोधादि कषाय कर संक्लिष्ट चारित्र है जिन का, अल्प सूत्र-सूत्रज्ञान सहित, अल्प आगम के ज्ञान, ऐसे को उपाध्याय की पद्वी देना नहीं कल्पता है ॥ ४ ॥ जिस साधु को संयम ग्रहण किये पांच वर्ष हुवे हों ऐसा श्रमण निग्रंथ आचार में कुशल, प्रव-चन में कुशल, प्रज्ञा-बुद्धि में कुशल, वस्त्रादि के संग्रह में कुशल, आहारादि के उपग्रह में कुशल, अखंडा-

पवयण कुसले, पण्णति कुसले, संगह कुसले, उवग्गह कुसले, अक्खुयायारे, असबलायारे, अभिण्णायारे, असंकिलिट्ठायारे चरित्ते बहुसुए बज्झागमे जहण्णेण दसाकप्पवविहारधरे, कप्पति आयरिय उवज्झायत्ताए उद्दिसित्तए ॥५॥ सच्चेवणं से पंचवास परियाए समण णिग्गंथे नो आयार कुसले, णो पवयण कुसले णो पण्णत्ति कुसले, णो संगह कुसले, णो उवग्गह कुसले, क्खुयायारे, सबलायारे, भिन्नायारे संकिलिट्ठायारे चरित्ते, अप्पसुए अप्पागमे णो कप्पति आयरिय उवज्झायत्ताए उद्दिसित्तए ॥ ६ ॥

चारी, सबले दोष रहित चारित्र, भिन्नता रहित आचार का पालक, कषाय की संक्लेश रहित चारित्र का पालनेवाला, बहुत सूत्र के पारगामी, बहुत आगम के ज्ञान, जघन्य जघन्य दशाश्रुतस्कंध व्यवहार वृहद् कल्प चारों छेद के ज्ञान होवे उन को आचार्य की और उपाध्याय की दोनों पदपर स्थापन करने योग्य हैं ॥ ५ ॥ वही जो साधु पांच वर्ष जिन को दीक्षा धारन किये हुवे ऐसे श्रमण निग्रंथ आचार कुशल नहीं, संयम में कुशल नहीं, प्रवचन में कुशलता रहित, प्रज्ञा-बुद्धि रहित, योग्य वस्तु के संग्रह रहित, आहारादि ग्रहण करने की कुशलता रहित, खंडित चारित्रीये, सबलदोष सेवित, भिन्नाचारी संक्लिष्टाचारिधी, अल्प सूत्री, अल्प-आगम का ज्ञान, ऐसे को आचार्य उपाध्याय के पद पर स्थापन करना नहीं कल्पता है ॥६॥

अट्ठवास परियाए समणे निग्गंथे आयार कुसले, संयम कुसले, पवयणकुसले, पण्णतिकुसले, संगह कुसले, उवग्गह कुसले, अक्खयायारे, असबलायारे, अभिण्णायारे, असंकिलिट्ठायारे चरित्ते, बहुस्सुए वज्झागमे जहण्णे ठाणस-मवायधरे कप्पति से आयारित्तए उवज्झायत्ताए पवत्तित्ताए, थेरत्ताए, गणित्ताए गणावच्छेइयत्ताए, उद्दिसित्तए ॥ ७ ॥ सच्चेवणं अट्ठवास परियाए समणे णिग्गंथे णो आयरकुसले णोसंयमकुसले, नो पवयणकुसले,

आठ वर्ष की दीक्षा वाले साधु निग्रंथ, आचार में कुशल, संयम में कुशल, प्रवचन में कुशल, प्रज्ञा में कुशल, संग्रह में कुशल, उपग्रह में कुशल, अखंड चारित्री, असबलदोषी, अभिन्नाचारी, शुद्धाचारित्री, बहुत सूत्र पाठी, विद्यागमी, जघन्य स्थानांगजी सूत्र और समवायांग सूत्र के सूत्र अर्थ जान, उन को १ आचार्य की पदवी, २ उपाध्याय की पद्वी, ३ प्रवित्तनी (सर्व आर्जिका में की पद्वी, ४ स्थविर की पद्वी, ५ गणी (सूत्रार्थदाता) की पद्वी, और ६ गणावच्छेदक (बहुत का आज्ञा आदेश कर्ता) की पदवी, इन छ प्रकार की पद्वी पर स्थापन करना योग्य है ॥ ७ ॥ आठ वर्ष की दीक्षा के धारक साधु निग्रंथ आचार की कुशलता रहित, संयम की कुशलता

सूत्र नो पण्णति कुसले, णो संगहकुसले, णो उवग्गहं कुसले, क्खुयायारे सबलायारे, भिण्णायारे संकिलिट्ठायार चरित्ते अप्पसूए अप्पागमे नो कप्पति आयरियत्ताए उवज्झायत्ताए पवित्तिचाए थेरत्ताए गणित्ताए उद्दिसित्तए ॥ ८ ॥ निरूद्ध परियाए

अर्थ रहित, प्रवचन की कुशलता रहित, प्रज्ञा बुद्धि रहित, संग्रह की कुशलता रहित, उपग्रह की कुशलता रहित, खंडिताचारित्री, सबल अतीचारी, भिन्नाचारी, संक्लिष्टाचारित्री, अल्प सूत्री, अल्प आगमी, वह साधु आचार्य की, उपाध्याय की, पवित्री की, स्थविर की, गणि की, गणवच्छेदक की पदवी के योग्य नहीं है ॥ ८ ॥ अब निरुद्ध पर्यायवाले उस ही दिन के दीक्षित को पद्वी देनी उसे आश्रिय कहते हैं निरुद्ध पर्याय के धारक साधु निर्ग्रंथ को दीक्षा ग्रहण की उस ही दिन आचार्य उपाध्याय की पद्वी पर स्थापन करे, शिष्य प्रश्न करता है कि अहो भगवन्! किस कारण कर ऐसा करे? अहो शिष्य! वह स्थविर साधु तथारूप आगे कहेंगे ऐसे गुणों का धारक है तद्यथा—१ प्रतीतकारी कुल का है अर्थात् जिस घराने के श्रावकोंने अपन गंभीर्यतादि गुणों की प्रतीत साधुओं के मन में उत्पन्न की है. तथा सर्व स्थान उन के घराने के मनुष्य की प्रतीत है. २ जिन का कुल धैर्य करता है. अर्थात् दानादि गुणकर साधु ओं को धैर्य का बन्धानेवाले उन के घराने के मनुष्य हैं, ३ विश्वासकारी जिन का कुल है, दिये हुवे मराले का निर्वाह कर विश्वास उत्पन्न किया, दगा कपट कर रहित जिन के घराने के

समणे णिग्गंथे कप्पति से रिवसं आयरिय उवज्झायचाए उद्दिसित्तए, से किमाहु भंते!
अतिथणं थेराणं तहा रूवाइं कुलाइं कडाइं पत्तियाइं थिज्जाइं वेसासियाइं समयाइं
समुइंकराय अणुमयाइं बहुमयाइं भवंति, तेहिं कडेहिं तेहिं पत्तिएहिं, तेहिं थेज्जेहिं,

मनुष्य हैं. ४ सम्यग्—जिन के कुल में साधु साध्वी का प्रवेश बहुत वक्त होता है जितने विशेष वक्त साधु साध्वी आते हैं उतने ही वे विशेष खुशी मानते हैं. हर वक्त एकसा सत्कार सन्मान साधु साध्वी का करते हैं, साधु साध्वी के मन को प्रमुदित करते हैं, अणुमय करते घर के छोटे बडे सर्व स्त्री पुरुषों को समझाते हैं कि साधु साध्वी की यथा उचित भक्ति करो, तथा जिस घर में छोटे बडे कोई भी साधु जावो उन के मन से किसी भी प्रकार का अंतर नहीं है सब का एकसा सत्कार सन्मान करते हैं. जो दान देने से तीर्थंकर गोत्रोपार्जन होता है उस के जान हैं. इसलिये लघु वृद्ध की भिन्नता रहित सब को एकसा अकल्पक दान देते हैं. बहुमय सो बहुत कर बहुत साधुओं को इच्छकारा है तथा सब घर के मनुष्यों की एकसी सम्मत है सब दान लाभ अर्थी होते अपने २ हाथ से अकल्पक दान देना चाहते हैं. यो कोई उन के घर में साधु का द्वेषी होवे तो वे उन वैरी समान लगता है ऐसे बहुमत हैं. ऐसे कुलोत्पन्न इस ही प्रकार का प्रतीतकारी ऐसा ही धैर्यवंत ऐसा ही विश्वासनीय ऐसाही सम्यक्त्वी, ऐसा ही प्रमोद हर्ष का करने वाला, ऐसा ही अनुमत, ऐसा ही बहुमत साधु हो (जो आचारंग,

सूत्र

तेहिंवेसासिमएहिं तेहिं ममएहिं ममुइंकरेहिं तेहिं अणुमएहिं तेहिं बहुमएहिं जेसे निरुद्ध परियाय समणे णिग्गंथे कप्पति आयरिए उवज्झायत्ताए उद्दिसित्तए तं दिवसं ॥ ९ ॥ निरुद्ध वासपरियाए समणे णिग्गंथे कप्पति आयरिय उवज्झायत्ताए उद्दिसित्तए समुच्छेय कप्पति, तरसणं आयार कप्परस देसं अहिज्जाए भवति, सेय अहिज्जिस्सामिति अहिज्जित्ता एव से कप्पति आयरिय उवज्झाएत्ताए उद्दिसित्तए, सेय

अर्थ

सुगम सांगनी निशीत, दशा श्रुतस्कंध, बृहत्कल्प, व्यवहार, ठाणांग, समवायंग, इन आठ शास्त्रका जानते पहा हुवा हो उत्कृष्ट कारण प्रयोजन संयम मे पडगयाहो, संयम गुन से भृष्ट हुवा हो वह पनःशुभ कर्मोदय से संयम ग्रहणकरे और इधर सम्प्रदाय में आचार्य, उपाध्यायका वियोग होगया होतो,) उसको समक्ष कर उस ही दिन आचार्य की तथा उपाध्याय की पद्वी से विभूषित करना कल्पता है, क्योंकि वह जातिवंत कुलवंत होने से लिये हुवे भार का सम्यक् प्रकार निर्वाह करेगा, प्रथम सब गुण संपन्न सर्व ज्ञान होने से गच्छ को दीपा सकेगा ॥ ९ ॥ उक्त प्रकार ही निरुद्ध वास परियाय का धारक [संयम से भृष्ट हो पुनः संयमी बना हो वह आचार्य उपाध्याय के पद के योग्य हो] आचार्य उपाध्याय काल प्राप्त होजावे तो उस को आचार्य उपाध्याय के पद पर स्थापन करना कल्पता है, परंतु यह जो आचारांग नवीन सूत्र का अभ्यास किया न होवे, उन से पूछे की यह सूत्र को पढना पडेगा, यह जो स्वीकार करे तो उस

सूत्र

अहिज्जिस्सामित्ति णो अहिज्जिज्जा, एवं से नो कप्पति आयरिय उवज्झायत्ताए उद्दिसित्तए ॥ १० ॥ निग्गंथस्सणं णवडहरतरूणगणस्स आयरिय उवज्झाए वीसंभेज्जा णो से कप्पति आयरिय उवज्झायस्स होत्तए, कप्पति से पुव्वं आयरियं उद्दिसावित्ता ततो पच्छा उवज्झायं; से किमाहु भंते ! दुसंगहियाए समणे णिग्गंथे तंजहा—आयरिएण, उव-

अर्थ

को पढावे वह पढलेवे तो उस को आचार्य उपाध्याय के पद पर स्थापन करना कल्पता है और वह कहता नहीं की मैं पढुंगा परंतु पढे नहीं तो उसे आचार्य उपाध्याय के पद पर स्थापन करना नहीं कल्पता है. ॥ १० ॥ अब युवान साधु को रहने का कहते हैं ॥ कोइ साधु नवादिक्षित बयकर अथवा दीक्षाकर बाल्यवस्थावंत उसके आचार्य उपाध्याय काल प्राप्त होगये तो उससाधुको आचार्य स्थापन किये बिना उपाध्याय स्थापन किये बिना रहना नहीं कल्पता है, परंतु उन को प्रथम आचार्य योग साधु को आचार्य की पद्वी पर स्थापन करे उपध्याय की पद्वी योग को उपध्याय की पद्वीपर स्थापन करे फिर उनकी आज्ञा में आप को रहना कल्पता है. शिष्य पूछता है अहो भगवान् ! किस कारन से आचार्य उपाध्याय बिना नहीं रहना ? अहो शिष्य ! साधु निग्रन्थ ! दोनों कर परिग्रहित होते हैं, तद्यथा, आचार्य और उपाध्याय इन कर दोनों सहित होते हैं ॥ ११ ॥ अब साध्वी आश्रिय अधिकार कहते हैं

सूत्र

ज्झाएणय, ॥ ११ ॥ णिग्गंथीएणं णत्र डहर तरुणियाए आयरिय उवज्झाय पवित्ति- णीय वीसंभिज्जा णो से कप्पति अणायरिय अणुवज्झाईय अपवित्तिणीएय होत्तए; कप्पति से पुव्वं आयरिय उद्दिसावित्ता ततो पच्छा उवज्झाईय ततो पच्छा पवित्तिणीएय से किंमाहु भंते ! तिसंगाहिया समणी निग्गंथी तंजहा—आयरिएणं उवज्झाएणं पवित्तिणीएय ॥ १२ ॥ भिक्खूगणाओ अणिक्खिवित्ता मेहुण धम्मं पडिसेविज्जा जाव जीवायं तस्स तप्पत्तियं नो से कप्पति,

अर्थ

साध्वी नवी दीक्षित तारुण्य अवस्थावाली दीक्षा कर या वय कर बाल्यावस्थावंत उनकी आचार्यिका उपा- ध्यायिका, पवित्तनी—गुरुनी आयुष्य पूर्ण कर गइ हो तो उन को आचार्यिका उपाध्या- यिका गुरुणी विना रहना नहीं कल्पता है, परंतु प्रथम आचार्याकी स्थापना कर नन्तर उपाध्यायिकाकी स्थापना करे फिर गुरुणी की स्थापना करे. फिर उन की आज्ञा में रहना कल्पता है. शिष्य पूछता है. अहो भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा ! अहो शिष्य ! निर्ग्रंथी साध्वी तीनों कर सग्राहित होती है तद्यथा—१ आचार्यिका कर, २ उपाध्यायिका कर, और ३ पवित्रनी-गुरुणी कर ॥ १२ ॥ अब दीक्षा धारन करे बाद पद्वी का अधिकार कहते हैं. कोई साधु गच्छ में से बाहिर निकले विना अर्थात् गच्छ में

सूत्र

आयरित्तंवा उवज्झायत्तंवा, पवत्तितंवा, थेरित्तंवा गणितंवा, गणावच्छेइयत्तंवा उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा ॥ १३॥ भिक्खू गणाओ अवक्कम्म मेहुणं धम्मं पडिसेवेज्जा तिण्णि संवच्छराइं तस्स तप्पत्तियं णो कप्पति आयरित्तंवा उवज्झायत्तंवा, पवित्तितंवा थेरत्तंवा, गणितंवा, गणावच्छेइयत्तंवा, उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा, तिहिं संवच्छरेहिं वीतिक्कंतेहिं चउत्थगंसि संवच्छरंसि पट्ठियंसि उवट्ठियंसि ट्ठियंसि उवसंतस्स उवरयस्स पडिविरयस्स, निव्विकारस्स, एवं से कप्पति आयरित्तंवा उवज्झायत्तंवा, पवित्तितंवा, गणितंवा

अर्थ

रहा हुवा ही मैथुन धर्म प्रतिसेवन करे, तो फिर उस को जावजीव पर्यन्त आचार्य की पद्वी, उपाध्याय की पद्वी, प्रवर्तक-गुरु की पद्वी, स्थविर की पद्वी, गणी की पद्वी, गणावच्छेदक की पद्वी देना नहीं कल्पता है ॥ १३ ॥ जो कोई साधु साधुओं का गण को-सम्प्रदाय को छोडकर मैथुन धर्म प्रतिसेवन करे और फिर दीक्षा धारन कर गच्छ में मिले तो तीन वर्ष पर्यन्त तो उन को आचार्य की, उपाध्याय की, प्रवर्तक की, स्थविर की, गणी की, गणावच्छेदक की पद्वी देना, स्थापन करना नहीं कल्पता है. परंतु तीन संवत्सर बीते बाद चौथे संवत्सर में वह सर्वथा प्रकार से सावधान होवे, मन को स्थिर स्थापन करे, विकार भाव उपशांत होवे. विषय कषाय से निवृत्ति पावे विषयों की जुगुप्सा होवे, विकार रहित बने,

थेरित्तंवा गणवच्छेइयत्तंवा, उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा ॥ १४ ॥ गणावच्छेइयं गणावच्छेइयत्तं अणिक्खिवित्ता मेहुण धम्मं पडिसेवेज्जा जाव जीवाय तस्स तप्पत्तियं णो कप्पति आयरियत्तंवा उवज्झायत्तंवा पवित्तितंवा, थेरितंवा, गणितंवा, गणवच्छइयत्तंवा, उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा ॥ १५ ॥ गणावच्छेइए गणावच्छेइयत्तंवा णिक्खिवित्ता मेहुणधम्मं पडिसेवेज्जा तिण्णि संवच्छराइं तस्स तप्पत्तियं णो कप्पति आयरियत्तंवा उवज्झायत्तंवा पवित्तितंवा, थेरत्तंवा, गणितंवा, गणावच्छेइयत्तंवा, उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा, तिहिं संवच्छरेहिं वीतिक्कंतेहिं चउत्थ-

तो फिर उसे आचार्य की, उपाध्याय की, प्रवर्तक की, स्थविर की, गणी की, गणावच्छेदक की पदवी पर स्थापन करे पद्वी देना कल्पता है ॥ १४ ॥ अब गणावच्छेदक आश्रिय कहते हैं, गणावच्छेदक गच्छ के बहुत से साधुओं का अधिपति गच्छ से निकले बिना-गच्छ से रहा हुवा मैथुन धर्म प्रति सेवन करे तो फिर यावज्जीव पर्यंत उस को आचार्य, उपाध्याय, प्रवर्तक, स्थविर, गणी, गणावच्छेदक की पद्वी देना कल्पता नहीं है ॥ १५ ॥ गणावच्छेदक गच्छ से निकल कर मैथुन धर्म प्रति सेवन करे पीछी दीक्षा ले गच्छ में मिले तो तीन वर्ष पर्यंत तो उस को आचार्य उपाध्याय यावत् गणावच्छेदक की पद्वी देना

सूत्र

यांसि संवच्छरांसि पाट्ठियांसि उवट्ठियंसि ट्ठियस्स उवसंतस्स उवायस्स पडिविरयस्स णिव्विकारस्स एवं से कप्पति आयरियत्तांवा जाव गणाव-च्छेइयत्तांवा उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा ॥ १६ ॥ आयरिय उवज्झाय आयरिय उवज्झायत्तं अणिक्खवित्ता मेहुणधम्मं पडिसेविज्जा जाव जीवाय तस्स तप्पत्तियं नो कप्पति आयरियत्तंवा जाव गणवच्छेइयत्तंवा उद्देसित्तएवा धारित्तएवा ॥ १७ ॥ आयरिय उवज्झायं आयरिय उवज्झायत्तं णिक्खिविता मेहुणधम्मं पडिसेवेज्जा, तिण्णिसंवच्छाराय तस्स तप्पत्तियं णो कप्पति

अर्थ

कल्पता नहीं है. तीन वर्ष बीते बाद चौथा संवत्सर प्रवेश हुवे वह सावधान होवे मनस्थिर होवे चित्त उपशांत होवे विषय से निवृति पावे निरविकारी बने तो फिर उस को आचार्य की उपाध्याय की यावत् गणावच्छेदक की पद्वी देना कल्पता है. ॥ १६ ॥ अब आचार्य के दो सूत्र कहते हैं—आचार्य उपाध्याय आचार्य उपाध्याय की पद्वी को छोडे विना मैथुन धर्म प्रति सेवन करे तो फिर जावजीव तक उन को आचार्य उपाध्याय यावत् गणावच्छेदक के पदपर स्थापन करना नहीं कल्पता है ॥१७॥ आचार्य उपाध्याय आचार्य उपाय की पद्वी छोडकर गच्छसे निकल कर मैथुन धर्म प्रति सेवन करे और फिर दीक्षा ले गच्छ

सूत्र आयरियत्तंवा-उवज्झायत्तवा-जाव-गणावच्छेइयत्तंवा-उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा, तिहिं संवच्छरेहिं वीतिक्कंतेहिं चउत्थयंसि संवच्छरंसि पट्ठियंसि उवट्ठियंसि ट्ठियस्स उवसंतस्स उवरयस्स पडिविरयस्स णिव्विकारस्स एवं से कप्पति आयरियत्तंवा उवज्झायत्तंवा जाव गणावच्छेइयत्तंवा उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा ॥ १८ ॥ भिक्खूयगणाओ अवगमे उहायंति तिण्णिसंवच्छराइं तस्स तप्पत्तियं णो से कप्पति आयरियत्तं उवज्झायत्तंवा जाव गणावच्छेइयत्तंवा, उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा, तिहिं संवच्छरेहिं वीतिक्कंतेहिं चउत्थयंसि, संवच्छरंसि पट्ठियंसि उवट्ठियंसि ट्ठियस्स उवसंतस्स उवरयस्स पडिवि-

अर्थ में आवे तो फिर तीन वर्ष उन को आचार्य उपाध्याय यावत् गणावच्छेदक की पद्वी देना कल्पता नहीं है. तीन संवत्सर वीते बाद चौथे वर्ष में वे स्थिर होवे सावधान होवे मनस्थिर होवे विकार उपशांत होवे विषय कषाय से निवृते निर्विकारी बने तो फिर उन को आचार्य उपाध्याय यावत् गणावच्छेदक की पद्वी देना कल्पता है. ॥ १८ ॥ अब साधु आश्रिय कहते हैं. कोइ साधु-साधुका भेष व सम्प्रदाय को छोडे विना देशांतर गये विना-जो मैथुन धर्म सेवन करे तो जावजीव पर्यन्त पद्वी देना कल्पता नहीं है. और भेष पलट देशान्तर जाकर मैथुन धर्म सेवन कर पुनः दीक्षा लेतो तीन वर्ष वीते बाद, उक्त गुण देखकर, पद्वी

मूल

रियस्स णिव्विकाररस्स एवं से कप्पति आयरियत्तंवा जाव गणावच्छेइयत्तंवा उद्दि-सित्तएवा धारित्तएवा ॥ १९ ॥ गणावच्छेइए गणावच्छेइयत्तं अणिक्खिवित्ता उहायंति जाव जीवाए तस्स तप्पातियं नो से कप्पति आयरियत्तंवा उवज्झायत्तंवा जाव गणावच्छेइयत्तंवा उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा ॥ २० ॥ गणावच्छेइए गणावच्छेइयत्तंवा णिक्खिवित्ता उहायंति तिण्णि संवच्छराइं तस्स तप्पत्तियं णो से कप्पति आयरित्तंवा उवज्झायत्तंवा जाव गणावच्छेइयत्तंवा उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा, तिहिं संवच्छरेहिं वीतिक्कंतेहिं चउत्थयंसि संवच्छरंसि पट्ठियंसि उवट्ठियंसि ट्ठियस्स उवसंतस्स उवरयस्स पडिविरयस्स णिव्विकाररस्स, एवं से कप्पति आयरियत्तंवा उवज्झायत्तंवा जाव गणावच्छेइयत्तंवा उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा ॥ २१ ॥ आयरिय

अर्थ

देना कल्पता है. यों दो अलापक साधु के कहना ॥ १९ ॥ ऐसे ही गणावच्छेदक के भी दो सूत्र कहना जो गणावच्छेदक गणावच्छेदक की पद्वी में रहा मैथुन धर्म सेवन करे तो जावजीव पर्यन्त पद्वी नहीं देना. और जो गणावच्छेदक पना छोड़ भेष बदलकर देशान्तरादि में जाकर मैथुन धर्म सेवन करे पुनः दीक्षा ले तो तीन वर्ष बाद शांत निर्विकारादि उक्त गुण देखकर आचार्यादि पद्वी देवे ॥ २०–२१ ॥ एसे ही

सूत्र

आयरियेच्चं अणिक्खित्ता उहायंति जाव जीवाए तस्स तप्पतियं नो से कप्पति आयरियत्तंवा उवज्झायत्तंवा पविषित्तवा थेरित्तवा गणित्तवा गणावच्छेइयत्तवा उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा ॥ २२ ॥ आयरिय आयरियत्तं णिक्खिविचा उहायंति तिन्नि संवच्छराइं तस्स तप्पात्तियं नो से कप्पति आयरियत्तवा जाव गणवच्छेइयत्तंवा उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा, तिहिं संवच्छरेहिं वीतिकंतेहिं चउत्थयसि संवच्छरसि पट्ठियासि उवट्ठियासि-ट्ठियस्स उवसंतस्स उवरयस्स पडिविरयस्स णिविकारस्स एवं से कप्पति आयरियत्तंवा उवज्झायत्तंवा जाव गणावछेइयत्तंवा उद्दिसेत्तएवा धारित्तएवा ॥ २३ ॥ उवज्झाय उवज्झायत्तं अणिक्खित्ताविचा उहायंति जाव जीवाए तस्स तप्पातियं णो से कप्पति आयरियत्तंवा जाव गणावच्छेइयत्तंवा उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा ॥ २४ ॥ उवज्झाय

अर्थ

आचार्य आचार्यपनेको छोडे विना मैथुन धर्म सेवन करे तो जावजीव किसी भी प्रकारकी पद्वी नहीं देवे और आचार्य पद को छोडकर वेष बदलकर देशान्तर में जाकर मैथुन धर्म प्रति सेवन कर पुनः दीक्षा लेवे तो तीन वर्ष वीतेबाद उन का स्थिर उपशांत निर्विकारिक पना देखकर आचार्यादि की पद्वी उन को देना कल्पता है ॥ २३ ॥ ऐसे ही उपाध्याय, उपाध्याय की पद्वी छोडे विना भेष में रहकर मैथुन धर्म प्रतिसेवन करे तो जावजीव किसी भी प्रकार की पद्वी नहीं देवे ॥ २४ ॥ उपाध्याय, उपाध्याय

उवज्झायत्तं णिक्खिवित्ता उहायंति तिण्णिसंवच्छरा तस्स तप्पत्तियं नो से कप्पति आय रियत्तंवा जाव गणावच्छेइयत्तंवा, उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा, तिहिं संवच्छरेहिं वीतिकंतेहिं चउत्थयंसि संवच्छरांसि पट्ठियंसि उवट्ठियं ठ्ठियस्स उवसंतस्स उवरयस्स पडिविरयस्स णिविकारस्स, एवं से कप्पति आयरियत्तंवा उवज्झायत्तंवा पवित्तिरत्तंवा थेरत्तंवा, गणितंवा, गणावच्छेइयत्तंवा, उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा॥२५॥भिक्खुय बहुस्सुए बब्भागमे बहुसो बहुसु आगाढागाढेसु कारणेसु माईमुसावाई असुई पावजीवी

की पद्वी छोडकर भेष बदलकर मैथुन धर्म सेवन कर पुनः दीक्षा लेतो तीन वर्ष बाद चौथे वर्ष में स्थिर चित्त सावधान निर्विकारी इत्यादि गुन देखकर आचार्य की यावत् गणावच्छेदक की पद्वी देना कल्पता है ॥ २५ ॥ यह तो चौथा व्रत की खण्डना करनेवाले को पद्वी की मना की. अब मृषावादी सबल कहते हैं. कोई एक साधु बहुत सुत्री (आवश्यक और आचारांग सूत्र का तो अवश्य ज्ञान ही होवे. इस उपरांत जघन्य नीशीथ का ज्ञान, मध्यम बृहत्कल्प का ज्ञान, उत्कृष्ट ९ तथा १० पूर्व तक पढा हुवा हो उसे बहु सूत्री कहते हैं) बहुत आगम प्रायश्चितादि विधीका ज्ञान, कोइ बहुत ही जबर गाढागाढ [नहीं चले ऐसा] कारन योजन उत्पन्न हुवे भी जो कपट सहित मृषावाद बोले, मिश्रभाषा बोले, उत्सूत्र प्ररूपे

जाव जीवाए तस्सतप्पत्तियं नोसेकप्पति आयरियत्तंवा. उवज्झयत्तंवा पवात्तितंवा थेरेत्तंवा गणित्तंवा गणावच्छेइयत्तंवा उदिसित्तएवा धारित्तएवा ॥ २६ ॥ गणावच्छेइय बहुस्सुए वज्झागमे बहुसो बहुसु आगाढे गाढेसु कारणेसु माईमुसावादी असुतिपावजीवाए जावजीवाए तस्स तप्पत्तियं णोसे कप्पति आयरित्तंवा जाव गणावच्छेइयत्तंवा उदिसित्तएवा धारित्तएवा ॥ २७ ॥ आयरिए बहुस्सुए वज्झागमे बहुसो बहुसु आगाढे गाढेसु कारणेसु माईमुसावादी असुतिपावजीवी जाव जीवाए तस्स तप्पत्तियं णोसेकप्पति आयरित्तंवा जाव गणवच्छेइयत्तंवा उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा ॥ २८ ॥

अर्थात् सूत्रार्थ विस्मृत करे. इस प्रकार पापकर्म कर अपनी उपजीविका करे तो उन को तो जाव जीव पर्यंत आचार्य की, उपाध्याय की, प्रवर्तक की, स्थविर की, गणी की, गणावच्छेदक की, पद्वी देना कल्पता नहीं है ॥ २६ ॥ कोई गणावच्छेदक बहुत साधु के मालक साधु है बहुत सूत्र के पढे हुवे बहुत आगम के जानकार बहुत विशेष जरूरी गाढागाढ कारण उत्पन्न हुवे कपट सहित झूट बोले, उत्सूत्र प्ररूपे, पापरूप कर आजीविका करे तो जावजीव पर्यन्त उन को आचार्य की गणावच्छेदक की पद्वी देना कल्पता नहीं है ॥ २७ ॥ कोई आचार्य बहुत सूत्री बहुत आगम के जान. बहुत जरूरी गाढ गाढ़ी कारण उत्पन्न हुवे कपट सहित झूट बोले, उत्सूत्र प्ररूपे पाप कर उपजीवी हो उसे जावजीव पर्यंत आचार्य की यावत् गणावच्छे-

उवज्झाए बहुस्सुए वज्झागमे बहुसो बहुसो अगाढेगाढेसु कारणेसु माईमुसावादी असुति पावजीवी जावजीवाय तस्स तप्पत्तियं णोसेकप्पति आयरितं वा जाव गणावच्छेइयत्तंवा उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा ॥ २९ ॥ बहवे भिक्खूणो बहुस्सुयां वज्झागमा बहुसो बहुसु आगाढगाढेसु कारणेसु माईमुसावादी असुति पावजीवी जाव जीवाए तस्स तप्पारियं णोसेकप्पतिअयरित्तंवा जाव गणावच्छेइत्तंवा उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा ॥ ३० ॥ बहवे गणावच्छेइया बहुस्सुया वज्झागमा बहुसो बहुसु आगाढे-गाढेसु कारणेसु माईमुसावादी असुति पावजीवी जाव जीवाए तस्स तप्पत्तियं नो से कप्पति आयरित्तंवा जाव गणावच्छेइयत्तंवा उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा ॥ ३१ ॥

दक की पद्वी देना नहीं कल्पता है ॥ २८ ॥ कोई उपाध्याय बहुत सूत्री बहुत आगमी बहुत जरूर गाढा-गाढी कारण हुवे कपट सहित झूट बोले उत्सूत्र मरूपे पापकर उपजीवी हो उन को जावजीव आचार्यादि की पद्वी देना नहीं कल्पता है ॥ २९ ॥ बहुत साधु बहुत सूत्री बहुत आगमी बहुत जरूरी गाढा-गाढी कारण से कपट-युक्त झूट बोले जो उत्सूत्र मरूपे पाप उपजीव हो उन्हे जावजीव पर्यंत आचार्यादि की पद्वी देना नहीं कल्पता है ॥ ३० ॥ बहुत गणावच्छेदक बहुत सूत्री बहुत आगमी बहुत जरूर गाढा-गाढी कारण से कपट युक्त झूट बोले तो उनको जावजीव पर्यंत आचार्यादि की पद्वी देना नहीं कल्पता है.

सूत्र

बहवे आयरियावहुसुया बज्झागमा बहुसो बहुसु आगाढागाढेसु कारणेसु माईमुसावादी अ सुति पावजीवी जाव जीवाए तस्स तप्पत्तियं नो से कप्पति आयरित्तंवा जाव गणावच्छेइयत्तंवा उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा ॥ ३२ ॥ बहवे उवज्झायां बहुस्सुया बहुसो बहुसु आगाढागाढेसु कारणेसु माईमुसावादी असुति पावजीवी जाव जीवए तस्स तपत्तियं नोसे कप्पति आयरियत्तंवा जाव गणावच्छेइयतंवा उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा ॥ ३३ ॥ बहवे भिक्खूणो बहवे गणावच्छेइया बहवे आयरिया बहवे उवज्झाया बहुसुया बज्झागमा बहुसो बहुसु आगाढगाढेसु कारणेसु माईमुसावादी

अर्थ

॥ ३१ ॥ बहुत आचार्यादि बहुत सूत्री बहुत आगमी बहुत जरूरी गाढागाढी कारण हुवे कपट युक्त झुट बोले उत्सूत्र कहे पाप जीवी उन को जावजीव तक किसी प्रकार की पद्वी देना नहीं कल्पता है ॥ ३२ ॥ बहुत उपाध्याय बहुत सूत्री बहुत आगमी बहुत जरूरी गाढा गाढी कारण हुवे कपट युक्त मृषा बोले उत्सूत्र प्ररूपे पाप जीवी उन को जावजीव पर्यन्त आचार्यादि की पद्वी देना नहीं कल्पे ॥ ३३ ॥ अब समुचय कहते हैं— बहुत साधुओं बहुत गणावच्छेदकों, बहुत आचार्यों, बहुत उपाध्यायों, बहुत सूत्र के जान बहुत आगम के जान बहुत जरूरी प्रबल गाढागाढ कारण प्राप्त हुवे भी जो वे माया कपट करके मृषावाद बोले, मिश्र भाषा बोले उत्सूत्र प्ररूपे-सूत्र का अर्थ विपरीत करे पाप कर्म कर उपजीविका करे इस प्रकार का जो

असुति पारजीवी जात्र जीवाए तस्स तप्प चियं-नोसे कप्पति आयरियत्तंवा उवज्झाय-
त्तंवा पवत्तितंवा थेरेतंवा गणितंवा गणावच्छेइयत्तंवा उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा
॥ ३४ ॥ त्तिबेमि ॥ ३४ ॥ विवहार सुयस्स तइयो उद्देसो सम्मत्तं ॥ ३ ॥

कोई होवे उन को आचार्य की, उपाध्याय की, प्रवर्तक—गुरु की, स्थविर की, गणी की, गणावच्छेदक की, इनह पद्वीयों में से किसी भी प्रकार की पद्वी देना पद्वी पर स्थापन करना कराना नहीं है ॥ यह व्यवहार सूत्र का तीसरा उद्देशा संपूर्ण हुवा, ॥ ३ ॥



॥ चतुर्थ उद्देशा ॥

सूत्र

नो कप्पति आयरिय उवज्झायस्स एगाणियस्स हेमतंगिम्हासु चारए ॥ १ ॥ कप्पति आयरिय उवज्झायस्स अप्पबिइयस्स हेमंत गिम्हासु चारए ॥ २ ॥ णो कप्पति गणावच्छेइयस्स अप्पबियस्स हेमंत गिम्हासु चारए ॥ ३ ॥ कप्पति गणावच्छेइयस्स अप्पतइयस्स हेमंत गिम्हासुचारए ॥ ४ ॥ नो कप्पति आयरिय उवज्झयस्स अप्पबिइयस्स वासावासं वत्थए ॥ ५ ॥ कप्पति आयरिय उवज्झायस्स अप्पतइयस्स वासावासं वत्थए ॥ ६ ॥ नो कप्पति गणावच्छेइयस्स अप्पतइयस्स वासासं वत्थए

अर्थ

आचार्य उपाध्याय को शीत काल में और ऊष्ण काल में अकेला विचरना(फिरना) नहीं कल्पता है ॥ १ ॥ परंतु आचार्य उपाध्याय को तो आप और दूसरा कोई साधु साथ हो तो विचरना-विहार करना कल्पता है ॥ २ ॥ गणावच्छेदक को शीत काल ऊष्ण काल में एक आप और एक दूसरा साधु साथ हो तो विहार करना नहीं कल्पता है ॥ ३ ॥ परंतु गणावच्छेदक एक आप और दो दूसरे साधु साथ हो यों तीन जने मिल विहार करना विचरना कल्पता है ॥ ४ ॥ आचार्य और उपाध्याय को एक आप और एक साधु और यों दो ठाने चौमासे में रहना नहीं कल्पता है ॥ ५ ॥ परंतु आचार्य उपाध्याय एक तो आप और दो साधु अन्य यों तीन साधु चौमासे में रहना कल्पता है ॥ ६ ॥ गणा-

सूत्र

॥७॥ कप्पति गणावच्छेइयस्स अप्पचउत्थस्स वासावासं वत्थए ॥८॥ से गामंसिवा, नगरंसिवा, खेडंसिवा, कव्वडंसिवा, पट्टणंसिवा, मंडवंसिवा, आगरंसिवा, दोणमुहंसिवा, आसमंसिवा जाव सन्निवेसं सिवा बहुणं आयरिय उवज्झायाणं अप्पवितियाणं बहुणं गणावच्छेइयाणं अप्पतच्चियाणं कप्पंति हेमंत गिम्हासु चारए अण्णमण्णस्स-निसाए॥९॥सेगामेसिवा जाव सन्निवेसंसिवा बहुणं आयरियाणं उवज्झायाणं अप्पतच्चियाणं

अर्थ

वच्छेदक को एक आप और दो साधु अन्य यों तीन ठाने से चौमासे में रहना नहीं कल्पता है ॥ ७ ॥ परंतु गणावच्छेदक एक आप और तीन साधु और यों चार ठाने से चौमासे में रहना कल्पता है ॥ ८ ॥ जहां कर लगता हो ऐसे ग्राम में, जहां कर न लगता हो तो ऐसे नगर में, धूलि का कोट हो ऐसे खेड में, पर्वत के खडके में वस्ती हो ऐसे कर्बट में, जहां सर्व वस्तु मिलती हो ऐसे पाटण में, नवा सेहर वसा ऐसे से मंडप में, सुवर्णादि निकलता हो ऐसे आगर में, जल स्थल दोनों पंथ हो ऐसे द्रोण मुख में, तापसों की वस्ती हो ऐसे आश्रम में यावत् गोपालों की वस्ती हो ऐसे संनिवेस में, बहुत आचार्य उपाध्याय को एक आप और एक दूसरे साधु के साथ और गणावच्छेदक एक आप और दो अन्य साधु यों तीन के साथ शीत काल उष्ण काल के आठ महिने में ग्रामानुग्राम विचरना कल्पता है (यहां आचार्य के साथ एक साधु और गणावच्छेदक के साधु दो साधु कहे सो स्वयं के शिष्य जानना परंतु अन्य के शिष्य नहीं गिणना) ॥ ९ ॥ पूर्वोक्त ग्राम नगर यावत् संनिवेश में बहुत आचार्यों उपाध्यायों एक आप और दो

सूत्र

बहुणं गणावच्छेइयाणं अप्पचउत्थाणं कप्पति वासावासंवत्थए अण्णमण्णस्स निस्साए ॥ १० ॥ गामाणुगामं दूइज्जमाणे भिक्खूय जं पूरओकट्टुविहरेज्जा सेय आहच्च वीसंभेज्जा, अत्थियाइ इच्छकेइ अण्णे उवसंपज्जणारिहे कप्पति सेयं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए, णत्थियाइक्केइ अण्णे उवसंपज्जणारिहे अप्पणो कप्पाए असमत्थाए कप्पतिसे एगरातियाए पाडिमाए जण्णं जण्णंदिसिं अण्णेसाहम्मिया विहरांति तण्णं तण्णंदिसिं उवलित्तए नो से कप्पति तत्थ विहारं वत्तियंवत्थए, कप्पति से तत्थ कारण वत्तियं वत्थए,तंसिचणं

अर्थ

दूसरे साधु यों तीन साधु साथ में हो तैसे ही बहुत गणावच्छेद को एक आप और तीन दूसरे साधु यों चार साधु साथ इस प्रकार चौमासा में परस्पर की नेश्राय ग्रहण कर रहना कल्पता है ॥ १० ॥ अब आचार्यादि का मृत्यु हो उस आश्रिय कहते हैं ॥ ग्रामानुग्राम विचरते साधु जो किसी स्थविरादि को आगेवानी कर विचरते हैं वे कदाचित् आयुष्य पूर्ण कर जावे-मृत्यु पाजावे तो जो अन्य सम्प्रदाय में आचार्य उपाध्यायादि श्रेष्ट अंगीकार कर विचरने योग्य हों उन को अंगीकार कर रागद्वेष पक्षपात रहित रहना. जो कदाचित् वह नहो तो किसी भी साधु को आचार्यादि की पद्वी योग्य देखकर उसको पद्वीपर स्थापन करे पद्वीपर स्थापन करने योग्य भी कोइ नहो अर्थात् आचारंग नीशीथ का ज्ञानी कोइ न होवे तो उन साधु को कल्पता है कि अभिग्रह धारन करे कि जहां तक अमुक हमारे साधर्मिक साधु न मिले तहां तक रास्ते

सूत्र

उवज्झाय गिलायमाणे अण्णयरं वदेज्जा अज्जो ! मएणं कालगयंसि समणंसि अयंसमु-
क्कसियव्वे सेय समुक्कसिणारिहे समुक्कसियव्वे सेयणो समुक्कसिणारिहे णो समुक्कसियव्वे,
अत्थियाइत्थं अण्णेकेइसमुक्कसिणारिहे समुक्कसियव्वे णत्थियाइत्थकेइ अण्णेसमुक्क
सिणारिहे सो चेव समुक्कसियव्वे, तंसिंचणं समुक्कट्ठंसि परोवएज्जा दुसमुक्कट्ठंते अज्जो !
णिक्खिवाहि, तस्सणंणिक्खिव माणस्सवा णत्थि केइछेएवा परिहारेवा, जेतं साहम्मिया

अर्थ

इस पट्टी पर स्थापन करना. नंतर वे उपाध्यायादिक साधुओं जिन को पट्टी पर बनाना हो उन की परिक्षा करे जो वे पट्टी का निर्वाह करने जैसे जानने में आवे तो उने आचार्य की पट्टी पर स्थापन करे. और जो वे आचार्य के पद योग्य न हो तो जो कोई दूसरा आचार्य के पद योग्य होवे उस को वह पद देवे. कदापि दूसरा पद योग्य तो होवे परंतु उन को आचारांग निशीथ का ज्ञान न होवे तो जिस की भलामण आचार्य कर गये है उन को कहे कि यह पढकर योग्य होवे वहां तक यह पट्टी आप संभालो. यों कह उन को आचार्यपने स्थापन करे और उन को आचारांगादि का ज्ञान पढावे, वे पढकर होश्यार होवे तब उन आचार्य से कहे कि अब आचार्य पद इन के सुप्रत कीजिये. इतना कहने से भी जो वे पट्टी नहीं छोडे तो गच्छ के साधु खुल्ला कहे तुम पट्टी के योग्य नहीं हो तुमारी दुष्ट पट्टी है इन को यह पट्टी समझकर दे दीजिये. इतना सुन जो वे प्रथम के आचार्य नवे आचार्य के सुप्रत पट्टी करे दे तो उन को

सूत्र

अहाकप्पेणं णो अब्भुट्ठेति तेसिं सव्वेसिं, तस्स तप्पाच्चियं छेदेवा परिहारेवा ॥ १३ ॥ आयरिय उवज्झाए उहायमाणे गच्छेज्जा अण्णयरं वदेज्जा अज्जो ! मएणं उहायंसि समाणंसि अयं समुक्कासियव्वे सेय समुक्कासिणारिहे समुक्कासिणारिहे समुक्कासियव्वे णो समुक्कासिणारिहे णो समुक्कासियव्वे अत्थियाइत्थ अण्णेकेइ समुक्कासिणारिहे समुक्कासियव्वे, णत्थिया इत्थ केइ अण्णेसमुक्कासिणारिहे सोचेव समुक्कासियव्वे, तं सिचणं समुक्कट्ठंसि

अर्थ

कुछ भी प्रायश्चित नहीं आवे और जो पद्वी सुमत नहीं करे तो उसे प्रायश्चित छेद आवे तथा परिहारिक तप आवे ॥ १३ ॥ कोई आचार्य उपाध्याय भोगावली कर्मोदय होने से विकारोदय को सहन नहीं करते संयम धर्मकी लज्जा रखने के वास्ते गच्छको छोडकर जाती वक्त अपना शिष्य वर्ग में गंभीर्यतादि गुणयुक्त जो शिष्य होवे उसे बोलाकर कहे अहो आर्यो में मोहकर्मकी तिगिच्छा-औषधी करनेको द्रव्यलिंग त्यागकर जाता हूं इसलिये तुम मेरे गये बाद अमुकको परिक्षा करजो वह आचार्य पद्वी के योग्य हो तो उसे आचार्य उपाध्याय के पद पर स्थापन करना, वह नहीं होतो अन्य कोइ अपने गच्छ में इस पद के योग्य होवे उन को स्थापना, इस प्रकार कह कर वे जावे तब उन की अनुज्ञा प्रमाने पद्वी योग्य साधु को पद्वी पर स्थापन करे. फिर वह पद्वी योग्य न निकले और वे प्रथम के आचार्य भोगवली कर्म भोग पीछे संयम

सूत्र

उवज्झाए गिलायमाणे अण्णयरं वदेज्जा अज्जो ! मएणं कालगयंसि समणंसि अयंसमु-
क्कसियव्वे सेय समुक्कसिणारिहे समुक्कसियव्वे सेयणो समुक्कसिणारिहे णो समुक्कसियव्वे,
अत्थियाइत्थे अण्णेकेइसमुक्कसिणारिहे समुक्कसियव्वे णत्थियाइत्थकेइ अण्णेसमुक्क
सिणारिहे सो चेव समुक्कसियव्वे, तांसिचणं समुक्कट्ठंसि परोवएज्जा दुसमुक्कट्ठंते अज्जो !
णिक्खिवाहि, तस्सणंणिक्खिवं माणस्सवा णत्थि केइछेदेवा परिहारेवा, जेतं साहम्मिया

अर्थ

इस पद्वी पर स्थापन करना. नंतर वे उपाध्यायादिक साधुओं जिन को पद्वी पर बनाना हो उन की परिक्षा करे जो वे पद्वी का निर्वाह करने जैसे जानने में आवे तो उन आचार्य की पद्वी पर स्थापन करे. और जो वे आचार्य के पद योग्य न हो तो जो कोई दूसरा आचार्य के पद योग्य होवे उस को वह पद देवे. कदापि दूसरा पद योग्य तो होवे परंतु उन को आचारांग निशीथ का ज्ञान न होवे तो जिस को भलामण आचार्य कर गये हैं उन को कहे कि यह पढकर योग्य होवे वहां तक यह पद्वी आप संभालो. यों कह उन को आचार्यपने स्थापन करे और उन को आचारांगादि का ज्ञान पढावे. वे पढकर होश्यार होवे तब उन आचार्य से कहे कि अब आचार्य पद इन के सुप्रत कीजिये. इतना कहने से भी जो वे पद्वी नहीं छोडे तो गच्छ के साधु खुल्ला कहे तुम पद्वी के योग्य नहीं हो तुमारी दुष्ट पद्वी है इन को यह पद्वी समझकर दे दीजिये. इतना सुन जो वे प्रथम के आचार्य नवे आचार्य के सुप्रत पद्वी कर दे तो उन को

सूत्र

अहाकप्पेणं णो अब्भुट्ठेति तेसिं सव्वेसिं, तस्स तप्पत्तियं छेदेवा परिहारेवा ॥ १३ ॥ आयरिय उवज्झाए उहायमाणे गच्छेज्जा अण्णयरं वदेज्जा अज्जो ! मएणं उहायंसि समाणंसि अयं समुक्कासियव्वे सेय समुक्कासिणारिहे समुक्कासिणारिहे समुक्कासियव्वे णो समुक्कासिणारिहे णो समुक्कासियव्वे अत्थियाइत्थ अण्णेकेइ समुक्कासिणारिहे समुक्कासियव्वे, णत्थियाइत्थ केइ अण्णेसमुक्कासिणारिहे सोचेव समुक्कासियव्वे, तं सिचणं समुक्कट्ठंसि

अर्थ

कुछ भी प्रायश्चित्त नहीं आवे और जो पद्वी सुपत नहीं करे तो उसेप्रायःश्चित्त छेद आवे तथा परिहारिक तप आवे ॥ १३ ॥ कोई आचार्य उपाध्याय भोगावली कर्मोदय होने से विकारोदय को सहन नहीं करते संयम धर्मकी लज्जा रखने के वास्ते गच्छको छोडकर जाती वक्त अपना शिष्य वर्ग में गंभीरता दि गुणयुक्त जो शिष्य होवे उसे बोलाकर कहे अहो आर्यो मैं मोहकर्मकी तिगिच्छा-औषधी करनेको द्रव्यलिंग त्यागकर जाता हूं इसलिये तुम मेरे गये बाद अमुकको पदिसा करजो वह आचार्य पद्वी के योग्य हो तो उसे आचार्य उपाध्याय के पद पर स्थापन करना, वह नहीं होतो अन्य कोई अपने गच्छे में इस पद के योग्य होवे उन को स्थापना, इस प्रकार कह कर वे जावे तब उन की अनुज्ञा प्रमाने पद्वी योग्य साधु को पद्वी पर स्थापन करे. फिर वह पद्वी योग्य न निकले और वे प्रथम के आचार्य भोगवली कर्म भोग पीछे संयम

परोवएज्जा दुसमुक्कट्ठुते अज्जो ! णिक्खिवाहि, तस्सणं णिक्खिवमाणस्सवा णत्थिके इछेदेवा परिहारेवा, जे से साहम्मिया अहाकप्पेणं णो अब्भुट्ठेति तेसिं सव्वेसिं तस्स तप्पत्तियं छेदेवा परिहारेवा ॥ १४ ॥ आयरिय उवज्झाएय सरमाणे परं चउरायाओ पंचरायाणं कप्पगं भिक्खू णो उवट्ठावेति कप्पाए अत्थिया इत्थसेकेइ माणणिज्जे

अर्थ

धारन करे तो पूर्वोक्त सूत्र प्रमाने तीन वर्ष बाद उन को शान्त निर्विकार चित्त देख पहिले स्थापन किये आचार्य से कहे कि यह पट्टी आप पीछी उन को दे दो, जो वे अपने खुशी से उन को पट्टी दे देवें तो प्रायश्चित्त के अधिकारी नहीं होवे. परंतु वे पट्टी नहीं देवे तो उन को खुला साधु कहदे की तुमारी दुष्ट पट्टी है तुम पट्टी योग्य नहीं हो इसलिये अहो आर्य ! यह पद छोडदो, इतना कहने से वहां पट्टी का त्याग नहीं करेतो उस छेद का अथवा परिहारिक तप का प्रायश्चित्त आवे ॥ १४ ॥ आचार्य उपाध्याय का शिष्यादि उट्ठाण करने योग्य हुवा अर्थात् दीक्षा लिये बाद सात दिनादिका व्यतीत होगया वह प्रतिक्रमण साधु समाचारी से वाकेफ भी होगया परंतु उस को जानते उपस्थान नहीं करावे छजीवनी सुनाकर पंचव्रतारोपण नहीं करे चार रात्रि तथा पांचरात्रि उपरांत काल उल्लंघन करेतो आचार्य प्रायश्चित्त के अधिकारी होवें. कदाचित पिता पुत्र श्रेष्ट गुमास्ते राजा सुभट साथ दीक्षाली हो और बुद्धी की प्रबलता कर पुत्र गुमास्ता नोकर प्रथम प्रतिक्रमणादि अभ्यास करले और पीता शेठ राजादि के बुद्धी की मंदता

सूत्र कप्पागे; णत्थियाइ से केइछेदेवा परिहारेवा णत्थियाइं से केइमाणणिज्जे कप्पति सेसंतराच्छेदेवा परिहारेवा ॥१५॥ आयरिय उवज्झाएय असरमाणे परंचओरायाओ पंचरायाओ कप्पागं भिक्खूणो उवट्ठावेति कप्पाए, अत्थियाइं से केइमाणणिज्जे कप्पाग णात्थियाइं, से केइछदेवा परिहारेवा, णात्थियाइं से केइमाणणिज्जे, कप्पति सेसं

अर्थ कर अभ्यास नहीं कर सके. तब पुत्रादि को प्रथम उत्थान करावेतो वह दीक्षा वृद्ध होवे पितादि उसे वंदना करे जिस से व्यवहार की अशुद्धता विरुद्धता देखाती हो, जेष्ट का अपमान होने से संयमादि गुन की हानी का संभव हो तो जहां तक पिता शेठ राजादि को प्रतिक्रमणादि नहीं आवे तहां तक ५-१०-१५ रात्रि पर्यन्त लघु को उठान नहीं करे तो वे आचार्यादि प्रायःश्चित्त के परिहार के अधिकारी नहीं होते हैं उन को प्रायःश्चित्त नहीं आता है ॥ १५ ॥ आचार्य उपाध्याय के पास का साधु उक्त प्रकार उपस्थान करने योग्य हुवा और उस को आचार्य प्रमाद के वश हो भूलजाय चार पांच रात्रि उल्लंघन करे उत्थान नहीं करे तो वे आचार्य जितनी रात्रि तक उत्थान नहीं करे उतनी रात्रि का छेद प्रायःश्चित्त पावे. परंतु उक्त प्रकार ही पितादि के साथ ही दीक्षा ली हो उन को प्रतिक्रमादि आवे वहां तक ५-१०-१५ रात्रि वाद सूत्रार्थ का प्राप्ती के लिये उत्थान नहीं करे वे प्रथम बडे को पढावे फिर दोनों को साथ ही उत्थान करे तो यहां भूले हुए आचार्य को भी किसी प्रकार का छेद नहीं आवे. परंतु पितादि कोई

सरा छेदे ॥ १६ ॥ आयरिय उवज्झाएय सरमाणेवा असरमाणेवा परंदसराय कप्पाता कप्पागं भिक्खुणो उवट्ठावेति कप्पाए, अत्थियाइं सेकेइं माणणिज्ज कप्पागं णच्छियाइं से केइछेदेवा परिहारेवा जाव कप्पाए संवच्छरं तस्स सप्पच्चियं णो कप्पति आयरियत्तंवा उवज्झायत्तवा पवत्तितंवा थेरत्तंवा गणित्तंवा गणावच्छेइयत्तंवा, उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा ॥ १७ ॥ भिक्खूगणाओ अवक्कमं

अर्थ

उस से बड़ा बनाने योग्य नहीं होवे और विना कारन प्रमाद के वश भूलकर उत्थान जोग को जितनी रात्रि पर्यन्त उत्थान नहीं करे उतनी ही रात्रि का उन को छेद आवे ॥ १६ ॥ आचार्य उपाध्याय प्रमाद वश जब उत्थान करने-महा व्रतारोपन का सातवा दिन चार महिने अथवा छ महिने के दिन का स्मरण नहीं करे और जिस वक्त उत्थान कर सके नहीं उस वक्त उस का स्मरण [याद] करे तो वे आचार्य प्रायःश्चित्त के अधिकारी होते हैं. इस लिये सूत्रार्थ प्राप्त हुवे साधु को योग्यता और काल प्राप्त हुवे तुर्त उत्थापना करना कल्पता है, परंतु जो पितादि जेष्ठ के कारण उत्थान नहीं करे तो प्रायःश्चित्त नहीं, विना कारण प्रमाद के वास उत्थाना नहीं करने के काल पे उत्थापन करने का स्मरण करे और उत्थापन करने के काल में स्मरण नहीं करे, चार पांच रात्रि उपरांत जितनी रात्रि निकाले उतनी रात्रि का छेद का प्रायःश्चित्त उन आचार्य को आवे. ऐसे आचार्य को एक वर्ष पर्यंत—१ आचार्य की, २ उपाध्याय की, ३ प्रवृतक की, ४ स्थविर की, ५ गणि की, ६ गणावच्छेदक की पद्वी पर स्थापन करना

सूत्र

अण्णगणं उवसंपज्जित्ताणं विहरेज्जा, तंच केइ साहम्मिया पासेज्जा तं वदेज्जा कि अज्जो ! उवसंपज्जित्ताणं विहरंति, जे तत्थ सव्वराइणिए तं वदेज्जा-अहं भंते! करस- कप्पाए जे तत्थ सव बहुस्सुए तं वइज्जा‍वा जहा स भगवं वक्खति तस्स आणाउवा- यवयण निद्देस चिट्ठिस्सामि ॥ १८ ॥ बहवे साहम्मिया इच्छेज्जा एगयओ अभिणि-

अर्थ

नहीं करता है ॥ १७ ॥ अब ज्ञानाभ्यास निमित्त अन्य गच्छ को ग्रहण करने का अधिकार कहते हैं. कोई साधु वृहद् कल्प के आज्ञानुसार स्वयं के गच्छ में ज्ञानादि की प्राप्ति का अभाव जानकर अन्य गच्छ को अंगीकार कर विचरे. तब उस को कोई दूसरा स्वधर्मिक साधु देखकर प्रश्न करे कि क्या आर्य ! किसे अंगीकार कर विचरते हो ? तब वह साधु जिस गच्छ में रहा होवे उस गच्छ में जो बडे साधु होवे उन का नाम लेकर कहे कि, अहो भगवंत ! मैं अमुक की नेश्राय में हूं. तब उन पूछने वाले को संदेह उत्पन्न होवे कि यह ज्ञान ग्रहण करने यहां आया है और वह विशारद नहीं है. तब पुनः उन से कहे कि यहां ऐसी गर्ज किस प्रकार पूरी होगी! तब वह साधु पुन उनसे पूछे कि अहो भगवान! मैं किस की नेश्राय में रहुं ? तब वे उस सम्प्रदाय के आचार्य कहे कि अमुक बहुसूत्री गीतार्थ हैं उन की नेश्राय में रहो जिस से तुमारा मनोर्थ पूर्ण होवे. तब वह कहे आपकी आज्ञा प्रमाणे ही करूंगा, उन की आज्ञा संदेश अंगीकार कर विचरे. ॥ १८ ॥ बहुत से साधर्मिक साधुओ अभिनिचारी एकत्र

चारियं चारए, णोण्हंकप्पति थेरे अणापुच्छित्ता एगयतो अभिन्निचारियं चारए कप्पतिणं थेरे आपुच्छित्ता एगयत्ता अभिन्निचारियं चारए, थरायण संवितरेज्जा एवण्णं कप्पति एगयत्तो अभिन्निचारियचारए, थेरायण णो वियरेज्जा, एवण्हं णो कप्पतिएगयओ अभिन्निचारियं चारए, ज तत्थ थेरेहिं अविदिण्णं एगयओ अभिन्निचारियं,चारए सेसंतराच्छेदेवा परिहारंवा ॥ १९ ॥ चारया पविट्ठे भिक्खू जाव चउराइंवा पंचराइंवा थेरेपासेज्जा सच्चेव आलोयणा सच्चेवपाडिक्कमणा, सच्चेवउग्गहस्स पुव्वाणुणावण्णा चिट्ठंति, अहालंद मविउग्गहे॥२०॥

होकर विचरना इच्छे, परंतु उनको स्थविर को विना पुछे सब एकत्र मिलकर विचरना नहीं कल्पता है,स्थविर को पूछकर एकत्र होकर विचरना कल्पता हैं, यदि सब साधुओं के एकत्र विचरने की स्थविर आज्ञादेतो सब मले होकर विचरे और जो स्थविर ना कहेतो सब साधुओं को एकत्र होकर विचरना नहीं कल्पता है. कदाति स्थविर की विना आज्ञा अभिन्नचारी एकत्र होकर विचरेगे तो जितने दिन उन की आज्ञा विना विहार करे उतने ही दिनों का छेद या तप आवे ॥ १९ ॥ स्थविरको अज्ञाविना विचरनेवाला साधु एक दो तीन चार पांच रात्रि अज्ञाकेबाहिर रहा उसकी आलोचना सत्यस्वरूपसे उसका प्रतिक्रमण भी सत्यस्वरूपसे करे प्रायःश्चित ले शुद्धहोवे, पहिलेकी तरह आज्ञामें रहे हथलीकी रेखा सूके इतने कालभी आज्ञाविना नरहे ॥ २० ॥ विहारकरने प्रवर्तहुआ साधु

चारियापविट्ठे भिक्खू परं चउरायंवा पंचरायाओ थेरपासेज्जा पुणो आलोएज्जा पुणो पडिक्कमेज्जा पुणो छेयस्स परिहारंवा उवट्ठाएज्जा भिक्खूभावस्स अट्ठाए दोच्चंपि उग्गहे अणुण्णवेयव्वेसिया कप्पति से एवं वादित्तए अणुजाणह भंते! मित्तोमित्तोग्गहं अहालंदधुवसंणितितं णेच्छइयं जंचिउट्टियं ततो पच्छा कायसंफासं ॥२१॥ चारियाणियट्ट भिक्खू जाव चाओरायं पंचहायाओ थेरापासेज्जा सच्चेव आलो-

चार पांच रात्रिसे अधिक अलग रहकर स्थविर के पास पुनः आकर आलोचन करे पुनः प्रतिक्रमण करे पुनरपि जो वे छेद परिहार में स्थापे उसे अंगीकार करे, अर्थात् प्रायश्चित्त देवे उसे ग्रहण करे, साधु अपने संयम भाव के निर्वाह के लिये, आज्ञा भंग रूप चोरी के पाप से डरकर तीसरे व्रत का संरक्षण करने के लिये दूसरी वक्त अनुज्ञा-अवग्रह धारन करे, फिर हरेक कार्य आज्ञा ग्रहण कर करे, जब २ कार्योत्पन्न होवे तब २ कहे कि, अहो भगवन्! आपकी आज्ञा है. मेरे को अमुक कार्य की इच्छा है, इस प्रकार आज्ञा रूप अवग्रह में रहना कल्पता है, परंतु हाथ की रेखा सूके इतनी देर भी आज्ञा विना न रहे. मन कर आज्ञा को अच्छी जाने, वचन कर प्रमान करे. और काया कर स्पर्शन करे ॥ २१ ॥ विहार करने से निवृत्त हुवे साधु चार पांच रात्रि उपरांत फिर स्थविरको देखे तब पुनरपि आलोचनकरे पुनरपि प्रतिक्रमण करे जो दोषसेवन किया उसका पुनरपि छेद अंगीकारकरे यावत् आज्ञामें रहे, हाथकी

यणा जाव चिट्ठंति अहालंदमवि उग्गहं ॥ २२ ॥ चरियाणियट्टे भिक्खू चउराय पंचरायाओ थेरं पासेज्जा पुणो आलोएज्जा पुणो पडिक्कमेज्जा पुणोच्छेय परिहारस्स उवट्ठाएज्जा कप्पतिन्ने, एवं वदित्ताए अणुजाणह भंते! मिउग्गहं अहालंद धुवं णितियं णेछइयं जाविउट्टियं ततो पच्छा कायसफासं भिक्खुभावस्स अट्ठाए दोच्चंपि ओग्गहं अणुण्णवेयव्वेसिया ॥ २३ ॥ दोसाहम्मिया एगयओ विहरंति तंजहा-सेहेय रायणिएय, तत्थसेहतराए अपलिच्छिण्णे रायणिए पलिच्छिण्णे, तत्थसेहतराणं

अर्थ

रेखा सूके उतनी देरभी आज्ञाके बाहिर रहे नहीं ॥ २२ ॥ विहार से निवृत्ता साधु चार पांच रात्रि उपरांत स्थविर को देख तो पुनः आलोचना प्रतिक्रमण करे, पुनरपि छेद परिहार ग्रहण करे, उन से इस प्रकार कहे कि-अहो भगवान! आज्ञा है, आप की अवग्रह में रहुं, यों सदैव आज्ञा में रहना कल्पता है, परंतु हथेली की रेखा सूके इतनी देर भी विना आज्ञा रहना नहीं कल्पता है यह अपने पूज्य स्थविर कि आज्ञा विना मन वचन काया के योग कर क्षणमात्र भी रहने में निवृत्ता है, अर्थात् स्थविरकी आज्ञा होते हीं तत्काल मन मे अच्छा जाने वचन से प्रमान करे काया कर स्पर्श कार्य निपजावे आज्ञा रूप व्रत का संरक्षण करने प्रवृते, संयम भाव की रक्षा के लिये, दूसरी वक्त स्थविर की आज्ञा मांग कर रहे ॥ २३ ॥ दो साधर्मिक साधुओ एकट्ठे रहकर विचरते हैं तद्यथा-एक तो शिष्य और दूसरे

सूत्र

रायणिय उवसंपज्जितव्वे, भिक्खोववायंदलीति कप्पागं ॥ २४ ॥ दोसाहम्मिया एगयतो विहरंति तंजहा-सेहेय रायणिएय, तत्थ रायणिएय पलिछिण्णे सेहतराए अपलिछिण्णे इच्छा रायणिए सेहत्तराय सेहतरागं उवसंपज्जेज्जा, इच्छा नो उवसंपज्जेज्जा, इच्छा भिक्खोववायं दलाति कप्पागं इच्छाए णो दलाति ॥ २५ ॥ दो भिक्खूणा

अर्थ

रत्नाधिक-गुरु इन में शिष्य के तो श्रुत शिष्य का परिवार बहुत होवे और रत्नादिक-गुरु के श्रुत शिष्य का परिवार थोडा होवे. तब वह शिष्य श्रुत शिष्यादि का अधिक परिवारवाला होकर भी रत्नाधिक गुरु की आज्ञा अंगीकार कर विचरना कल्पता है, तथा रत्नाधिक गुरु की समीप रहा हुवा भी बहुत सेवा भक्ति कर अन्य भिक्षुओं का साधुओं का संविभाग कर. विनय वैयावच कर आहार पानी आदी खपती वस्तु लाके देवे, इत्यादि उन की योजना करनी कल्पता है ॥ २४ ॥ यह शिष्य आश्रिय कहा अब गुरु आश्रिय कहते हैं—दो साधर्मिक साधुओं एकत्र होकर विचरते हैं तथथा-एक शिष्य और एक रत्नाधिक-गुरु. इनमें गुरु के तो श्रुत शिष्य का परिवार बहुत है और शिष्य के श्रुतशिष्य का परिवार अधिक नहीं रहा. इस में जो गुरु की इच्छा होवे तो उस शिष्य को अंगीकार करे पास रक्खे और इच्छा नहोवे तो अंगीकार नहीं करे, पास नहीं रखे, इच्छा होवे तो आहार पानी ला देना आदि वैयावच करे इच्छा न होवे तो वैयावच नहीं करे, आहार पानी आदि नहीं ला दे ॥ २५ ॥ अब बराबर

सूत्र

एगतो विहरंति णोणं कप्पति अण्णमण्णस्स उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए, कप्पतिण्णं आहारातिणियाए अण्णमण्णं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए ॥ २६ ॥ एवं दो गणवच्छेत्तिया ॥ २७ ॥ दो आयरिय उवज्झाया ॥ २८ ॥ वहवे भिक्खूणो एगयतो विहरंति णोणं कप्पति अण्णमण्णस्स उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए, कप्पतिणं

अर्थ

होकर नहीं रहने वहल कहते हैं. दो साधु एकत्र होकर विचरते हैं उन में दोनों परस्पर छोटे बडे बने विना बरावरी के होकर रहना नहीं कल्पता है. परंतु दोनों में से योग्यता प्रमाने एक वडा और दूसरा छोटा इस प्रकार बनकर वंदना विवहार सब गुरू शिष्यरूप आचारविधी युक्त रहना कल्पता है ॥ २६ ॥ ऐसे ही दो गणावच्छेदक मिलकर भी जो विहार करेतो दोनों को बरावर रहना नहीं कल्पता है. परंतु योग्यता प्रमाने छोटे वडे बन उन की व्यवहा सांचवन कर रहना कल्पता है. २७ ॥ ऐसे ही दो आचार्य तथा उपाध्याय मिलकर भी जो विचरेतो उनको भी बरावरी रहकर विचरना नहीं कल्पताहै परंतु योग्यता प्रमानें छोटा वडा बन छोटे बडे का व्यावहार रख विचरना कल्पता है ॥ २८ ॥ अब बहुत साधु आदि आश्रिय कहते हैं. ॥ बहुत से साधुओं एकठे होकर विचरते हैं. उन को परस्पर अंगीकार कर अर्थात् परस्पर छोटे बडे बने विना विचरना रहना नहीं कल्पता है. परंतु सब साधुओं

सूत्र

आहारातिणियाए अण्णमण्णस्स उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए ॥ २९ ॥ बहवे गणावच्छेइया एगयतो विहरंति, णोणं कप्पति अण्णमण्णस्स उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए, कप्पतिए आहारातिणीयाए अण्णमण्णस्स उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए ॥ ३० ॥ बहवे आयरिय उवज्झाया एगयतो विहरंति, णोण्हं कप्पति अण्णमण्णस्स उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए, कप्पतिणं आहारातिणीयाए अण्णमण्णस्स उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए ॥ ३१ ॥ बहवे भिक्खूणा, बहवे गणावच्छेइया बहवे आयरिया उवज्झाया एगतो विहरंति, णोणं कप्पति अण्णमण्णस्स उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए,

अर्थ

आपस में योग्यता प्रमाने एक को बडा स्थापन करे दूसरे उन से छोटे तीसरे उन से छोटे यों सब होकर एकेक का विनय साचवन कर विचरना कल्पता है ॥ २९ ॥ बहुत गणावच्छेदक एकत्र हो विहार कर परस्पर अंगीकार कर-छोटे बडे बने विना साथ विहार करना नहीं कल्पता है. परंतु योग्यता-प्रमाने छोटे बडे बने परस्पर विनय विहार साचवन करते विचरना कल्पता है ॥ ३० ॥ बहुतसे आचार्यों बहुतसे उपाध्यायों एकट्ठे होकर विचरते हैं, उन को भी सब बराबरी के रहकर विचरना नहीं कल्पता है, परंतु छोटे बडे बन एकेक को वंदन विवहार साचवन करते विचरना कल्पता है ॥ ३१ ॥ अब समुच्चय कहते हैं, बहुतसे साधु बहुत से गणावच्छेदक, बहुत से आचार्य तथा उपाध्याय एकत्र मेले होकर विचरते हैं, उन

सूत्र

वासावासं वत्थए; कप्पति पविच्चिए कप्पइण्हं आहारातिणीयाए अण्णमण्णस्स उवसंप-
जित्ताणं विहरित्तए, हेमंत गिम्हासु ॥ तिबेमि ॥ विवहार सुयस्स चउत्थो
उद्देसो सम्मत्तो ॥ ४ ॥ * * * * * *

अर्थ

को परस्पर अंगीकार कर सब एक सरिखे बराबरी के बनकर विचरना नहीं कल्पता है. तैसे ही चतुर्मास करना भी नहीं कल्पता है. परंतु साध्वी में किसी को पविभनी-बडी साध्वी स्थापन कर और साधुओं में एकको रत्नाधिक (गुरु) बनाकर नव छोटे बडे अनुक्रमणसे व्यवहार साचवन कर सीयाले उन्हाले के चार महिने में विचरना कल्पता है ॥ इति व्यववार सूत्र का चौथा उद्देशा संपूर्ण ॥ ४ ॥

॥ पंचम उद्देशा ॥

सूत्र

नोकप्पति पवित्ताणिए अप्पवितियाए हेमत गिम्हासु चारए ॥ १ ॥ कप्पति पवि-त्तिणीए अप्पतत्तियाए हेमंत गिम्हासु चारए ॥ २ ॥ नो कप्पति गणावछेइणीए अप्पततियाए हेमंत गिम्हंसु चारए ॥ ३ ॥ कप्पति गणावच्छेइणीए अप्पचउत्थिए हेमत गिम्हासु चारए॥ ४ ॥ नो कप्पति पवित्तिणीए अप्पतत्तियाए वासावासं वत्थए ॥५॥ कप्पति पवितणीए अप्पचउत्थिए वासावासं वत्थए॥ ६॥ नो कप्पति गणावच्छेइणीए

अर्थ

प्रवित्रणी (गणपतिनी आर्जिका) को एक आप और दूसरी साध्वी यों दो ठाणे से शीतकाल उष्ण काल में ग्रामानुग्राम विचरना नहीं कल्पता है ॥ १ ॥ परंतु पवित्रीनी एक आप और दो दूसरी आर्जिका यों तीन ठाणे से शीत काल उष्ण काल में ग्रामानुग्राम विचरना कल्पता है ॥ २ ॥ गणावच्छेदिकनी को आप एक और दो दूसरी यों तीन आर्जिका से शीत काल उष्ण काल में विचरना नहीं कल्पता है ॥ ३ ॥ परंतु एक गणावच्छेदिकनी और तीन दूसरी आर्जिका यों चार ठाना से विचरना कल्पता है ॥ ४ ॥ पवित्रनी और दो दूसरी आर्जिका यों तीन ठाने से चतुर्मास करना नहीं कल्पता है ॥ ५ ॥ परंतु एक आप पवित्रनी और तीन दूसरी आर्जिका यों चार ठाने से चतुर्मास करना कल्पता है ॥ ६ ॥ गणाव-

सूत्र

वासावासं वत्थए, कप्पति पविच्चिए कप्पइण्हं आहारातिणीयाए अण्णमण्णस्स उवसंप-
ज्जित्ताणं विहरित्तए, हेमंत गिम्हासु ॥ तिबेमि ॥ विवहार सुत्तस्स चउत्थो
उद्देसो सम्मत्तो ॥ ४ ॥

* * * * * *

अर्थ

को परस्पर अंगीकार कर सब एक सरीखे बराबरी के बनकर विचरना नहीं कल्पता है. तैसे ही चतुर्मास करना भी नहीं कल्पता है. परंतु साध्वी में किसी को पवित्रनी-बडी साध्वी स्थापन कर और साधुओं में एककों रत्नाधिक (गुरु) बनाकर नव छोटे बडे अनुक्रमणसे व्यवहार साचवन कर सीयाले उन्हाले के चार महिने में विचरना कल्पता है ॥ इति व्यवहार सूत्र का चौथा उद्देशा संपूर्ण ॥ ४ ॥

॥ पंचम उद्देशा ॥

नोकप्पति पवित्तणिए अप्पबीतियाए हेमंत गिम्हासु चारए ॥ १ ॥ कप्पति पवि-त्तिणीए अप्पतच्चियाए हेमंत गिम्हासु चारए ॥ २ ॥ नो कप्पति गणावच्छेइणीए अप्पततियाए हेमंत गिम्हासु चारए ॥ ३ ॥ कप्पति गणावच्छेइणीए अप्पचउत्थिए हेमंत गिम्हासु चारए॥ ४ ॥ नो कप्पति पवित्तिणीए अप्पतत्तियाए वासावासं वत्थए ॥५॥ कप्पति पवित्तणीए अप्पचउत्थिए वासावासं वत्थए॥ ६॥ नो कप्पति गणावच्छेइणीए

पवित्रणी (गणपति की आर्जिका) को एक आप और दूसरी साध्वी यों दो ठाणे से शीतकाल उष्ण काल में ग्रामानुग्राम विचरना नहीं कल्पता है ॥ १ ॥ परंतु पवित्रीनी एक आप और दो दूसरी आर्जिका यों तीन ठाणे से शीत काल उष्ण काल में ग्रामानुग्राम में विचरना कल्पता है ॥ २ ॥ गणावच्छेदकनी को आप एक और दो दूसरी यों तीन आर्जिका से शीत काल उष्ण काल में विचरना नहीं कल्पता है ॥ ३ ॥ परंतु एक गणावच्छेदकनी और तीन दूसरी आर्जिका यों चार ठाना से विचरना कल्पता है ॥ ४ ॥ पवित्रनी और दो दूसरी आर्जिका यों तीन ठाने से चतुर्मास करना नहीं कल्पता है ॥ ५ ॥ परंतु एक आप पवित्रनी और तीन दूसरी आर्जिका यों चार ठाने से चतुर्मास करना कल्पता है ॥ ६ ॥ गणाव-

सूत्र

वासावासं वत्थए, कप्पति पविचिए कप्पइण्हं आहारातिणीयाए अण्णमण्णस्स उवसंपज्जित्ताणं विहरित्ताए, हेमंत गिम्हासु ॥ तिबेमि ॥ विवहार सुयस्स चउत्थो उद्देसो सम्मत्तो ॥ ४ ॥

* * * * * *

अर्थ

को परस्पर अंगीकार कर सब एक सरीखे बराबरी के बनकर विचरना नहीं कल्पता है. तैसे ही चतुर्मास करना भी नहीं कल्पता है. परंतु साध्वी में किसी को पवित्रनी-बड़ी साध्वी स्थापन कर और साधुओं में एकको रत्नाधिक (गुरु) बनाकर सब छोटे बड़े अनुक्रमणसे व्यवहार साचवन कर सीयाले उन्हाले के चार महिने में विचरना कल्पता है ॥ इति व्यवहार सूत्र का चौथा उद्देशा संपूर्ण ॥ ४ ॥

उवसंपज्जियव्वासिया, णत्थिया इत्थकाई अण्णा उवसंपज्जणारिहा, अप्पणो कप्पाए असमत्ता एवं से कप्पइ एगरातियाए पडिमाए जणं २ दिसिं अण्णओ साहम्मिणिओ विहरंति तण्णं २ दिसिं उवलित्तए, नो से कप्पति तत्थ विहारवत्तियं वत्थए, कप्पति से तत्थ कारण वत्तियं वत्थए, तेसिंचणं कारणंसि णिट्ठियंसि परोवइज्जा वसाहिणं अज्जो ! एगरायंवा दुरायंवा एवंसे कप्पति एगरायंवा दुरायंवा वत्थए, नो से कप्पति एगरायाओवा दुरायंवा परंवत्थए, जं तत्थ एगरायाओ दुरायाओवा परं वसति सेसंतरा॰

वहां जो कोई साध्वी आचारांग नशीथ की जान हो उस को बडी आर्जिका के स्थान स्थापन कर विचरना कल्पता है. और वहां जो कोई उक्त गुण धारक साध्वी न हो तो उन साध्वी को जिस २ दिशा में दूसरी साधर्मिनी विचरती हो उस २ दिशी में जाना कल्पता है. विहार करते हुवे रास्ते में विशेष काल रहना नहीं कल्पता है. परंतु स्वयं के शरीर आश्रिय या दूसरे के सेवा आश्रिय कोई कारण हो जाय तो रहना कल्पता है. कारण पूर्णहुवे बाद वहांरही आर्जिका उस आर्जिका को कहे कि अहो आर्य! एक दो रात और भी रहो, तो वहां एक दो रात्रि रहना कल्पता है. एक दो रात्रि से ज्यादा रहना नहीं कल्पता है. जो एक दो रात्रि से अधिक रहे तो जितनी रात्रि रहे उतनी रात्रि का छेद परिहार

अप्पचउत्थीए वासावासं वत्थए ॥ ७ ॥ कप्पति गणावच्छेइणीए अप्पपंचमाए वासावासं वत्थए ॥ ८ ॥ से गामंसिवा जाव संन्निवेसंसिवा बहुणं पवित्तिणीणं अप्पतत्तियाणं बहुणं गणावच्छेइणीणं, अप्पचउत्थीणं कप्पति हेमंत-गिम्हासु चारए अण्णमण्ण णिस्साए ॥ ९ ॥ सेगामंसिवा जाव संन्निवेसंसिवा बहुणं पवित्तणीए अप्पचउत्थाणं बहुणं गणावच्छेइणीणं अप्पपंचमाणं कप्पति वासावासं वत्थए अंण्णमण्णस्साणिस्साए॥ १० ॥ गामाणुगामं दुइज्जमाणी णिग्गंत्थीय जंपुरओकट्टु विहरेज्जा, साय आहच्चा वीसुंभेजा अत्थिया इत्थ काइअणाउवसंपज्जिणाणंरिहा, कप्पतिसा

च्छेदकनी एक आप और तीन दूसरी यों चार ठाने मे चतुर्मास करना नहीं कल्पता है॥७॥ परंतु एक आप गणावच्छेदकनी और चार दुसरी आर्जिका यों पांच ठानेसे चतुर्मास करना कल्पता है ॥ ८ ॥ ग्राम नगर यावत् सन्निवेश में बहुत पविषनी एक आप और दो दुसरी यों तीन साध्वी, बहुत गणावच्छेदकनी एक आप और तीन दूसरी यों चार साध्वी इस प्रकार शीत काल उष्ण काल में परस्पर नेश्राय ग्रहण कर विचरना कल्पता है ॥ ९ ॥ ग्राम नगर यावत् सन्निवेश में बहुत प्रवर्तनी और तीन साध्वी यों चार ठाना से, बहुत गणावच्छेदकनी और चार साध्वी यों पांच ठाने से चतुर्मास कर परस्पर नेश्राय में रहना कल्पता है॥१०॥

मूत्र

उत्तसंपाज्जियत्त्वासिया, णात्थिश इत्थकाईं अण्णाउत्तसंपज्जणारिहा, अप्पणो कप्पाए असमत्ता एवं से कप्पई एगरातियाए पडिमाए जणं २ दिसिं अण्णओ साहम्मिणिओ विहरांति तण्णं २ दिसिं उवलित्तए, नो से कप्पति तत्थ विहारवत्तियं वत्थए, कप्पति से तत्थ कारण वत्तियं वत्थए, तेसिंचणं कारणांसि णिट्ठियंसि परोवइज्जा वसाहिणं अज्जो ! एगरायंवा दुरायंवा एवंसे कप्पति एगरायंवा दुरायंवा वत्थए, नो से कप्पति एगरायाओवा दुरायंवा परंवत्थए, जं तत्थ एगरायाओ दुरायाओवा परं वसति सेसंतरा

अर्थ

वहां जो कोई साध्वी आचारांग निशीथ की जान हो उस को वहां आर्जिका के स्थान स्थापन कर विचरना कल्पता है. और वहां जो कोई उक्त गुण धारक साध्वी न हो तो उन साध्वी को जिस २ दिशा में दूसरी साधर्मिनी विचरती हो उस २ दिशी में जाना कल्पता है. विहार करते हुवे रास्ते में विशेष काल रहना नहीं कल्पता है. परंतु स्वयं के शरीर आश्रिय या दूसरे के सेवा आश्रिय कोई कारण हो जाय तो रहना कल्पता है. कारण पूर्णहुवे बाद वहांरही आर्जिका उस आर्जिका को कहे कि अहो आर्य! एक दो रात और भी रहो, तो वहां एक दो रात्रि रहना कल्पता है. एक दो रात्रि से ज्यादा रहना नहीं कल्पता है. जो एक दो रात्रि से अधिक रहे तो जितनी रात्रि रहे उतनी रात्रि का छेद परिहार

छेदेवा परिहारेवा ॥ ११ ॥ वासावासं पज्जोसवेइ णिग्गंथीए, जं पुरओकट्टु विहरंति, साय आहच्च वीसुंभेज्जा अत्थियाइच्छकाइ अणा उवसंपज्जणारिहा, कप्पतिसा उवसंपज्जिएव्वासिया, णत्थिया इच्छकाई अंणा उवसंपज्जणारिहा, अप्पणो कप्पाए असमत्ताए एवं से कप्पति एगरातियाए पडिमाए जण्णं २ दिसिं अण्णेओ साहम्मिणीओ विहरंति तण्णं २ दिसिं उवलित्तए, नो से कप्पति तत्थ विहारवत्तियं वत्थए, कप्पति से तत्थ कारणवत्तियं वत्थए, तेसिंचणं कारणसि णिट्ठियंसि परोवइज्जा वसाहिणं अज्जो ! एगरायंवा दुरायंवा एवं से कप्पति एगरायंवा दुरायंवा वत्थए, नो से कप्पति

अर्थ प्रायश्चित्त आता है ॥ ११ ॥ वर्षा काल चतुर्मास में रही हुई साध्वी जिस को आगेवानी कर विचरे वह कदाचित् आयुष्य पूर्ण कर जाय तो वहां दूसरी कोई साध्वी आचारांग नीशीथ सूत्र की जान हो उस पद पर स्थापने योग्य हो उस को स्थापन कर उस की आज्ञा में रहना कल्पता है और उस पद के योग्य कोई नहीं होवे तो उन साध्वी को जिस २ दिशा में अन्य साधर्मिनी होवे उस २ दिशा में विहार करना कल्पता है. परंतु उन को अन्य साधर्मिनी न मिले वहां तक रास्ते में एक रात्रि से अधिक रहना नहीं कल्पता है परंतु स्वयं के शरीर में रोगादि कारण हो जावे या अन्य किसी कारणिक की वैयावच में रहना पडे तो रहे, कारण निवृते बाद नहीं रहे जो कदाचित् वहां रही आर्जिका कहे कि अहो

सूत्र

एगरायाओवा दुरायाओवा पुरं वत्थए, जंतत्थ एगरायाओवा दुरायाओवा परंवसति, सेसं तराच्छेदवा परिहारेवा ॥ १२ ॥ पवित्तिणीय गिलायमाणी अण्णयरं वदेज्जा अज्जो ! मएणं कालगयंसि समाणंसि अयं समुक्कासियव्वे सेय समुक्कासिणारिहे समुक्कासियव्वे, सेयणोसमुक्कासिणारिहे णो समुक्कासियव्वं, अत्थियाइत्थकाई अण्णा समुक्कासिणारिहे समुक्कासियव्वे, णत्थियाइत्थकाई अण्णा समुक्कासिणारिहे सो चेव समुक्कासियव्वे, तोसि

अर्थ

आर्य ! एक दो रात्रि और रहो. तो एक दो रात्रि और रहे. जो कदाचित् एक दो रात्रि उपरांत रहे तो जितनी रात्रि रहे उतनी का छेद आवे. प्रायश्चित्त आवे ॥ १२ ॥ कोई बडी आर्जिका अत्यन्त वदनी से पीडाती हुई अपना आयुष्य नजदीक जान कर पास की गुणज्ञ शिष्यनी से कहे कि अहो आर्या ! मेरे मृत्यु पाये बाद इन साध्वी को इस पद्वी पर स्थापन करना. फिर वह अन्य आर्जिका वह आर्जिका उस पद्वी योग्य है या नहीं इस प्रकार परिक्षा करके जो वह पद्वी योग्य होवे तो उसे उस पद्वी पर स्थापन करे. और वह जो पद्वी देने योग्य न हो तो उस ही समुदाय में अन्य कोई पद्वी योग्य आचारांग नशीथ की जान होतो उसे उस पद्वी पर स्थापन करें. और उस वक्त कोई भी पद्वी देने योग्य उस समुदाय में नहोवे परंतु कोई आर्जिका पद्वी देने योग्य आगे बन सकेगी ऐसा होता तो प्रथम की बडी आर्या जिस को पद्वी पर स्थापन करने का कह गई उस को पद्वीपर



घणं समुक्कट्ठंसि पत्तेवएज्जा दुसमक्कट्ठंते अज्जा ! णिक्खिवाहि, तस्सणं णिक्खिवमाण-स्सवा णत्थि केइच्छेदेवा परिहारेवा, जाओतंसाहम्मिणीओ अहाकप्पेणं णो अब्भुट्ठति तेसिंसव्वेसिं तस्स तप्पत्तियं छेदेवा परिहारेवा ॥ १२ ॥ पवित्तिणीयं उहायमाणीओ अण्णयरंवएज्जा अज्जा ! मएणं उहायत्ताए समाणंसि अयंसमुक्कासियव्वे, सेय समुक्कासिणारिहे समुक्कासियव्वे, सेय णो समुक्कासिणारिहे णो समुक्कासि-

अर्थ

स्थापन करे. और पद्वी के योग्य हो उस को आचारंगादि पढाकर प्रवीन पद्वी योग्य करे. वह योग्य हो जावे जब उस पद्वी धरनी से कहे कि यह पद्वी इसे संभलादो जो वह खुशी से उस पद्वी को छोडदे तो उसे किसी प्रकार का प्रायःश्चित्त नहीं आवे. और इतना कहते ही जो पद्वी नहीं छोडे तो कहे कि तुमारी दुष्ट पद्वी है. यह पद्वी के योग्य है अहो अर्या ! तुम पद्वी छोडकर इनको देवो. इस प्रकार कहने मे वह पद्वी को छोड देतो उसको किसी प्रकार का छेद तथा प्रायःश्चित्त नहीं. और नहीं छोडे तो जितने पद्वी को नहीं छोडे उतने ही दिन का छेद तप आवे ॥ १३ ॥ किसी वडी साद्वी को भोगावली कर्मोदय मोहको प्रबल्यतासे मैथुन मोहनी का उदय हुवा हो उसे सहन करने असमर्थ हो और अपने संयम धर्म की लज्जा रखने गंभीर्यतादि गुन धारक अन्य किसी साध्वी को कहे कि मैं द्रव्यलिंग को छोड मोहका उपचार करने जाती हुं. इसलिये पीछे मे मेरे पदपर अमुकी को स्थापन करना. ऐसा कह कर

यव्वे, अत्थियाइत्थकाई अण्णासमुक्कासिणारिहे, समुक्कासियव्वे णत्थियाइत्थकाइ अण्णासमुक्कासिणारिहे, सो चेव समुक्कासियव्वे तेसिंचणं समुक्कट्ठांसि परो वएज्जा, दुसमुक्कट्ठते, अज्जो! णिक्खिवाहिं तस्सणं णिक्खिवमाणस्सवा; णत्थिकंइ छेदंवा परिहारेवा, जाव तं साहम्मिइणीओ अहाकप्पेणं णो अब्भुट्ठेति, तेसिं सव्वेसिं तस्स तप्पतियं छेदेवा परिहारेवा ॥ १४ ॥ णिग्गंथस्सणं णवडहर तरुणगस्स आयार कप्पेणामं अज्झयणे परिभट्ठेसिया सेयपुच्छियव्वे केणएणे कारणेणं अज्जो! आयार कप्पनामं अज्झयणं परिभट्ठेसिया किं

वह जावे. फिर जिस का नाम वह कहगइ उस की परिक्षा करने मे जो वह पद्वी योग्य देखने में न आवे तो अन्य समुदाय में पद्वी के योग्य आर्जिका देखकर पद्वी पर स्थापन करे. और कोइ भी नजर नहीं आवे तो वह पवित्रनी जाती वक्त कहगइ है उसे ही उस पद्वी पर स्थापन करे. और ▓▓ पद्वी ▓ बराबर निर्वाहन करे. तब अन्य कोइ कि तुम इस पद्वी योग्य नहीं हो, तुमारी दुष्ट पद्वी है. इसे छोड दो. इतना सुन वह जो पद्वी को छोडदे तो उसे किसी भी प्रकार का प्रायश्चित्त नहीं आवे. और जो पद्वी को नहीं छोडे तो जितने दिन पद्वी नहीं छोडे उतने दिन का दीक्षा का छेद तथा परिहार प्रायश्चित्त आवे ॥ १४ ॥ कोई निग्रन्थ साधु नवदीक्षित बाल वयवाला तथा तारुण अवस्था वाला आचारंग नीशीथ को भूलगया हो, उस को स्थविर पूछे कि अहो आर्य! किस कारन से आचार. कल्प अध्यान नशीत भूलगये क्य, कुछ

सूत्र

आवाहेण पमाएणं? सेयवएज्जा णो आवाहेणं पमाएणं, जाव जीवाए तस्स तंप्पत्तियं णो कप्पति आयरियत्तंवा उवज्झायत्तंवा पवित्तितंवा थेरत्तंवा गणितंवा गणावच्छेइयत्तंवा उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा. सेय वएज्जा आवाहेणं णो पमाएणं, सेय संठ्ठवेज्जा एवं से कप्पति आयरियत्तंवा जाव गणावच्छेइयत्तंवा उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा. सेयसंठ्ठविस्सामिति णोसंठ्ठवेज्जा एवं से णो कप्पति आयरियत्तंवा जाव गणावच्छेइयत्तंवा उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा ॥ १५ ॥ णिग्गंथीएणं णवडहर तरुणियाए आयारकप्पणामं अज्झयणं परिभट्ठेसिया, सायपुच्छियव्वे केणकारणेणं अज्जा ! आयारकप्पेणामं अज्झयणे परिभट्ठेसिया किं

अर्थ

आबाधा रोग द्वारा से या प्रमाद के वश ? तब वह कहे कि हे पूज्य ! किसी भी प्रकार की अबाधा करके नहीं भूला परंतु प्रमाद कर भूलगया हूं तो फिर उस साधु को यावत् जीवन आचार्य, उपाध्याय, प्रवर्तक, स्थविर, गणी व गणावच्छेदक की पद्वी देना स्थापन करना नहीं कल्पता है और वह कहे कि मैं प्रमाद करके तो नहीं भूला परंतु रोगादि कारण से भूला हुं मैं उस पुनः याद कर लूंगा तो उस को आचार्य गणावच्छेदक की पद्वी देना स्थापन करना कल्पता है ॥ १५ ॥ कोई निर्ग्रन्थी—साध्वी नवदीक्षिता बाल्यावस्थावाली अथवा तारूण्यता को प्राप्त हुई है वह आचारांग नीशीथ नामके अध्ययन-सूत्र भूलगई हो तब उसे प्रवर्तनीकादि पूछे कि अहो आर्ये ! किस कारण से आचार कल्पनी शीत तू भूल गई हो क्या किसी आबाधा रोगादि करके

सूत्र

आवाहेणं पमाएणं ? सायवएज्जा, णो आवाहेणं पमाएणं, जावज्जीवाए तस्स तप्पत्तियं नो कप्पति पवित्तिणीयत्तंवा गणावच्छेइणियत्तवा उद्दसित्तएवा धारित्तएवा; मायवएज्जा आवाहेणं णो पमाएणं मायसङ्कवसामित्ति संठवेज्जा, एवं से कप्पति पवित्तिणियत्तंवा, गणावच्छेइणियत्तंवा उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा; सायसंठवस्सामिति णो संठवेज्जा, एवं से नो कप्पति पवित्तिणियत्तंवा गणावच्छेइणियत्तवा उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा ॥ १६ ॥ थेराणं थेरभूमिपत्ताणं आयारकप्पेनामं अज्झयणे परिभट्ठेसिया; कप्पति तेसिं संठवित्ताणवा असंठवित्ताणवा आयारियंत्तवा

अर्थ

अथवा प्रमाद करके ? तब वह कहे कि प्रमाद करके भूल गई हूं परंतु बाधा पीडा करके नहीं भूली, तो फिर उसे जावजीव पर्यन्त पवित्रनी की गणावच्छेदकनी की पद्वी देना स्थापना करना नहीं कल्पता है वह कहे कि मैं व्याधी आदि कारण से भूली हूं परंतु प्रमाद कर नहीं भूली हूं उस पीछा स्मरण कर शुद्ध करलूंगी. तो उस को पवित्रनी की गणावच्छेदक की पद्वी देना कल्पता है. कदाचित् उक्त साध्वी भूली हवा पीछे फेर पक्का करने का कहे और याद नहीं करे तो उसे पवित्रनी की तथा गणावच्छेदक की पद्वी नहीं देवे ॥ १६ ॥ स्थविर जो साठ वर्ष की अवस्थाको प्राप्त हुवे हों अथ । बीस वर्षकी दीक्षा होगई हो वे वृद्धावस्थादि प्रयोजन कर आचारांग नाशीथ अध्ययन को भूलगये हो तो

जाव गणावच्छेइयत्तंवा उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा ॥ १७ ॥ थेराणं थेर भूमिपत्ताणं आयारकप्पंनामं अज्झयणे परिभठेसिया कप्पंति तेसिं सन्निसण्णेणवा उत्ताणेणवा तुयट्टाणेणवा आयार कप्पे नामं अज्झयणे दोच्चंपि तच्चंपि पडिच्छित्तएवा परिसरित्तएवा

अर्थ

भी उन को आचार्य की यावत् गणावच्छेदक की पद्वी देना कल्पता है ॥ १७ ॥ स्थविर को किस प्रकार पद्वी दे वह कहते हैं. स्थविर भूमीका को प्राप्त हुवे आचारांग नीशीथ सूत्र को भूलगये तो उन को धीरे २ बैठे २ उसे याद करे, जो कदापि विशेष काल बैठे रहने की शक्ति न हो तो सूते हुए एक करवट रहे हुवे याद करे. इस प्रकार भी याद नहीं कर सके और उनके मन में उस को धारन करने की आवश्य इच्छा हो तो अन्य रत्नादि सशक्त शरीर के धारक आचारांग नीशीथ के जान साधु हों उन का विनय कर उनके पास श्रवण पठन कर धारन करे जो वंदनादि विनय करने की शक्ति नहो तो बैठे रहेही धारन करे, जो बैठे २ धारन करने की शक्ति न हो तो सूते २ धारण करे. परंतु धारण जरूर करे, क्यों कि आचारांग नीशीथ के जान हुवे विना आगेवानी होकर विचरना नहीं कल्पता है. विना आचारांग नीशीथ का जान हुवे जो आगे वानी हो विचरता है. वह जितने दिन आगे वानी हो विचरे उतने ही दिन का दीक्षा का छेद उन को आता है. अन्य स्थान छ महिने के उपरांत छेद की मना की है. परंतु यहां वह नीति लागू नहीं होती है. यहां तो जितने काल वह विचरे उतने ही वर्षादि का ही

सूत्र

॥ १८ ॥ जे णिग्गंथाय णिग्गंथीओय संभोइयासिया णोण्हं कप्पंति अण्णमण्णस्स अंतिए आलोइत्तए, अत्थिया इत्थणं केइ आलोयणारिहे, कप्पतिणं तस्ससंतिय

अर्थ

उसे छेद आता है ऐसा अर्थ द्वार लिखते हैं ॥ १८ ॥ अब संभोग का कहते हैं. जो कोई साधु साध्वी आपस में शैय्या उपाधी आदि १२ प्रकार के संभोग लेन देन युक्त होवें. वह संभोग करते कदाचित् किसी उपाध्यायादि को दोष भी लग जावे. तो उस दोष को हरेक साधु कु साध्वी के आगे जाकर प्रकाशे नहीं, परंतु जिस साधु साध्वी की साक्षी से दोष लगा हो प्रतीत निमित्त उन को साथ ले. जो आचार्यादि—१ पंचाचार कर युक्त होवे, २ आलोचना के दोष के धारक होवे. ३ आगमादि पांचों व्यवहार नीतिकर प्रायःश्चित्त के जान होवे, ४ जघन्य आचारांग नीशीथ के धारक होवे मध्यम बृहद्कल्प व्यवहार के धारक उत्कृष्ट नव दश पूर्व के धारक होवे, ५ बहुत काल के दीक्षित अर्थात् जघन्य तीन वर्ष मध्यम पांच वर्ष उत्कृष्ट बीस वर्ष की प्रवर्ज्या के धारक होवे, ६ द्रव्य से भाव से चपलता रहित होवे, ७ मेधावी पण्डित होवे, ८ आलोचना कराती वक्त अन्तःकरण का शल्य दूर कर आलोचना करावे, ९ अतिचार छिपाने नहीं दे, १० लज्जा रहित कर कोमल वचन कर आलोचना करावे, ११ प्रायश्चित्त देकर शुद्ध करने समर्थ होवे, १३ आलोचना किये हुवे दोष अन्य के आगे कहे नहीं, १२ अनेक शास्त्रों में प्रावल्य बुद्धिवंत, १४ सुजान प्रतीतवंत, १५ सत्यवादी, १६ आलोचक के शुभेच्छक, १७ महा भाग्यवन्त

सूत्र

आलोइत्तए, णत्थि इत्थण्हं केइ अण्णो आलोयणारिहे एवंण्णं कप्पति अण्णमण्णस्संतिए आलोइत्तए ॥ १९ ॥ जे णिग्गंथाय निग्गंथीओय संभोइयासिया नोण्हं कप्पति अण्णमण्णं अंतिए वेयावच्चकारित्तए, अत्थियाइथं वेयावच्चकरे, कप्पतिणं तेणं वेयावच्चं करावित्तए, णत्थियाइणं केई वेयावच्चकरे एवंण्णं कप्पति अण्णमण्णेणं वेयावच्चं

अर्थ

१८ अनुशासक, १९ सूत्रकार इत्यादि, २० अन्य के दोष प्रगट करने में उस का विश्वास जाता, देव गुरु की चोरी, प्रगट प्रकाश, इत्यादि बहुत दोष उत्पन्न होते हैं, जो प्रायश्चित्त देने को आता है वही प्रायश्चित्त का अधिकारी वह होता है, तीर्थंकर की आज्ञा का भंग होता है, इत्यादि दोष जान आलोचे दोष किसी के आगे नहीं कहे. इत्यादि गुण युक्त हो उन के आगे आलोचना करे, और उक्त गुण युक्त न होवे तो फिर परस्पर आलोचना करे, यह गुन बिना परस्पर आलोचना करना परंतु साधु साध्वी के पास आलोचना नहीं करे और साध्वी साधु के पास आलोचना नहीं करे, क्यों कि इस से मर्याद का भंग होता है ॥ १९ ॥ अब वैयावच आश्रिय कहते हैं. जो निर्ग्रंथ-साधु निर्ग्रंथनी साध्वी-१२ ही प्रकारके संभोग परस्पर करनेवाले, परंतु परस्पर आपस में वैयावच करना नहीं कल्पे अर्थात् साधु को साध्वी के पास वैयावच नहीं करवाना और साध्वी को साधु के पास वैयावच नहीं करवाना. यहां कोई अन्य साधु वैयावच का करनेवाला हो तो साधु को उस साधु के पास वैयावच करवाना कल्पे. तैसे ही साध्वी को

सूत्र

करावित्तए ॥ २० ॥ णिग्गंथचणं राओवावियालेवा दीहपुट्ठो लूसेज्जा, तं इत्थीएवा पुरिसो उमज्जेज्जा पुरिसोवा इत्थीए उमज्जेज्जा, एवं से कप्पति एवं से चिट्ठति, परिहारंच णो पाउणाति, एस कप्पो थेरकप्पियाणं, एवं से नो कप्पति एवं से नो चिट्ठति परिहारंच पाउणइ एस कप्पो जिनकप्पियाणं ॥ २१ ॥ तिबेमि ॥ इति विवहारस्स पंचमो उद्देसो ॥५॥

अर्थ

कोई अन्य साध्वी पास में हो तो उन के पास वैयावच कराना कल्पता है. परंतु कोई नहीं होवे तो फिर साधु की साध्वी और साध्वी की साधु को मात्र पुत्र बुद्धि कर या पिता पुत्री की बुद्धि कर वैयावच करना कल्पता है ॥ २१ ॥ गत सूत्र का खुलासा—साधु को रात्रि की वक्त अथवा श्याम की वक्त किसी दीर्घ विषधर सर्पने दंश किया, तब वह साधु जो तिगिच्छा-औषधोपचार करनेवाले पुरुष का योग न बने और स्त्री का योग बन जावे तो स्त्री के पास औषधोपचार करावे, तैसे ही साध्वी को सर्पने दंश किया हो और स्त्री का योग न बनते पुरुष का योग बने तो पुरुष के पास औषधोपचार करावे. इस प्रकार कल्पता है, इस प्रकार करते हैं उन्हें किसी भी प्रकार का परिहार तप प्रायश्चित नहीं आता है. यह कल्प स्थविर कल्पी (ग्राम में रहनेवाले) साधु का जानना. परंतु जिन कल्पी (वनमें रहनेवाले) साधु को ऐसा करना नहीं कल्पता है और वे ऐसा करते भी नहीं है, जो वे करे तो परिहारिक तप व प्रायश्चित के अधिकारी होते हैं. जिन कल्पी को वैयावच कराने का कल्प ही नहीं है. यह आचार जिन कल्पी का कहा. यह व्यवहार सूत्र का पांचवा उद्देशा संपूर्ण हुआ ॥ ५ ॥

॥ षष्ठम उद्देशा ॥

भिक्खूयइच्छेज्जा णायविहिएत्तए नो से कप्पति थेरे अणापुच्छिता णायविहिएत्तए, कप्पतिसे थेरे आपुच्छित्ता णायविहिएत्तए, थेरायसे वियरेज्जा, एवं से कप्पति णाय विहिएत्तए, थेरायसे णो वियरेज्जा एवं से नो कप्पति णायविहिएत्तए, जे तत्थ थेरेहिं अविदिण्णा णायविहिएत्तए सेसंतराच्छेदेवा परिहारेवा ॥ १ ॥ नो से कप्पति

किसी साधु को इच्छा हो कि मेरे संसारिक सम्बन्धीयों के घर को जाऊं, तो उन को स्थविर को बिना पूछे ज्ञाती-स्वजनो के घर जाना नहीं कल्पता है, परंतु स्थविर को पूछ कर ज्ञाती जनों के घर जाना कल्पता है. जो स्थविर उन के घर जाने की आज्ञा देतो ज्ञातियों के घर जाना, और जो स्थविर उन के घर जाने की आज्ञा नहीं देवे तो नहीं करे. जो तहां स्थविर की आज्ञा बिना ज्ञाति सम्बन्धीयों के घर को जावे तो जितने दिन आवागमन करे उतने दिन का प्रायश्चित्त आवे. (क्यों कि ज्ञातियों का संग मोह वृद्ध का कारण है जिस के अवसर के स्थविर जान होते हैं. उन साधु को जाने की अभिलाषा होतो स्थविर अवसर उचित अन्य साधुओं के साथ उन को भेजे शांतिचित्त करें, इस लिये स्थविर की आज्ञा बिना नहीं जावे ॥ १ ॥ किस को नहीं कल्पे और किस को कल्पे वह कहते हैं ॥ जो साधु साध्वी

सूत्र

अप्पसुयस्स अप्पागमस्स एगाणियस्स णायविहिएत्तए ॥ २ ॥ कप्पति से जे तत्थ बहुस्सुए बज्झागमे तेणसद्धिं णायविहिएत्तए ॥ ३ ॥ तत्थ से पुव्वागमणेणं पुव्वाओते चाउलोदणे पच्छाओते भिलिंगसूवे कप्पति से चाउलोदणे पडिगाहित्तए नो से कप्पति भिलिंगसुवे पडिगाहित्तए ॥ ४ ॥ तत्थ पुव्वागमणेणं पुव्वाओते भिलिंगसुवे पच्छाओते चाउलोदणे कप्पति से भिलिंगसुवे पडिगाहित्तए, नो से कप्पति चाउलोदणे पडिगाहित्तए ॥ ५ ॥ तत्थ से पुव्वागमणेणं दोवि

अर्थ

थोडे शास्त्र के पढे हों थोडे आगम अर्थ के जान हों, वे अकेला जाना यह न होतो उसको ज्ञाति सम्बन्धी के घर जाना नहीं कल्पता है ॥ २ ॥ परंतु जो बहुत शास्त्र के पढे हों जो आगम अथवा विधी के ज्ञाता हों उन को अंगीकार कर उन के साथ जावे तो ज्ञातियों के घर जाना कल्पता है ॥ ३ ॥ अब वहां जाकर आहार पानी किस प्रकार ग्रहण करे यह कहते हैं ॥ ज्ञातीयों के घर को गये के पहिले ही उनने जो चांवल पकाकर चूले में नीचे उतारलिये हों, और दाल साधु के गये बाद चूलेसे नीचे उतारी हो तो साधु साध्वी को चांवल लेने तो कल्पता है. परंतु पीछे से उतरी हुई दाल लेना नहीं कल्पता है ॥ ४ ॥ तथा साधु के गये पहिले दाल चूलेसे नीचे उतारी हो और साधु के गये बाद चांवल चूलेसे उतारे होतो दाल लेना तो साधु को कल्पता है परंतु चांवल लेना नहीं कल्पता है ॥ ५ ॥ वहां जो साधु के गये पहिले दाल

पुव्वाउत्ते कप्पति से दोवि पडिगाहित्तए ॥ ६ ॥ तत्थ से पुव्वागमणेणं दोवि पच्छाउत्ते नो से कप्पति दोवि पडिगाहित्तए ॥ ७ ॥ जं से तत्थ पुव्वागमणेणं पुव्वाउत्ते से कप्पति पडिगाहित्तए ॥ ८ ॥ जं से तत्थ पुव्वागमणेणं पच्छाउत्ते नो से कप्पति पडिगाहित्तए ॥ ९ ॥ आयरिय उवज्झायस्स गणंसि पंच अतिसेसा पण्णत्ता, तंजहा- आयरिय उवज्झाए अंतो उवस्सयस्स पायणिगिज्झिय २ पप्फोडेमाणेवा पमज्जमाणेवा णातिक्कमति, आयरिय उवज्झाए अंतो उवस्सयस्स उच्चारंवा पासवणंवा विगिंचमाणेवा

और चांवल दोनों दोनों उतरे हों तो दोनों ही ग्रहण करना कल्पता है ॥ ६ ॥ और साधु के गये बाद दाल चांवल दोनों चुल्हे परसे उतरे हो तो दोनोंही ग्रहण करना नहीं कल्पता है ॥७॥ मतलब कि साधु के गये पहिले जो कुछ तैयार होगया हो वह ग्रहण करना कल्पता है ॥८॥ और जो वस्तु साधु के गये बाद तैयार हुइ हो वह ग्रहण करना नहीं कल्पता है ॥ ९ ॥ अब आचार्य के अतिशय कहते हैं आचार्य उपाध्याय के पांच अतिशय कहे हैं तद्यथा—१ आचार्य उपाध्याय बाहिर से उपाश्रय में पधारें तो उन के पांव को पूंजनी ग्रहण कर पूंजे [illegible] करता हुआ तीर्थंकर की आज्ञा उल्लंघे नहीं. २ आचार्य उपाध्याय उपाश्रय में बडी नीत लघुनीत करने को जावे उसे योग्य स्थान परिठा कर जमीन शुद्ध करता हुवा

विसोहेमाणेवा णातिक्कमति, आयरिय उवज्झाए पभुवेयावडियं इच्छाए करेज्जा, इच्छाए णो करेज्जा, आयरिय उवज्झाय अंतो उवस्सयस्स एगरायंवा दुरायंवा वसमाणेवा णातिक्कमति. आयरिय उवज्झाए बाहिं उवस्सयस्स एगरायंवा दुरायंवा वसमाणेवा णातिक्कमति ॥ १० ॥ गणावच्छेइयस्सणं गणंसिदो अतिसेसा पण्णत्ता तंजहा-गणावच्छेइए अंतो उवस्सयस्स एगरायंवा दुरायंवा वसमाणेवा णातिक्कमति. गणावच्छेइए बाहिं उवस्सयस्स एगरायं वा दुरायंवा वसमाणेवा णातिक्कमति ॥ ११ ॥ से गामंसिवा नगरंसिवा जाव सन्निवेसंसिवा एग वगडाए एग दुवाराए एग णिक्खमण पवेसाए नो

तीर्थंकर की आज्ञा का उल्लंघन नहीं करे. ३ आचार्य उपाध्याय की इच्छा वैयावच्च कराने की होवे तो अपनी शक्ति को कदापि गोपवे नहीं. शक्ति प्रमाणे वैयावच्च करे. ४ आचार्य उपाध्याय उपाश्रय में एक दो रात्रि रह फिर उपाश्रय बदलना चाहे. जो एक दो रात्रि उपाश्रय में रहना आज्ञा उल्लंघन है. और ५ आचार्य उपाध्याय उपाश्रय के बाहिर रहना चाहते हों तो उन के साथ उपाश्रय के बाहिर या वृक्षादि के नीचे रहना आज्ञा अतिक्रमे नहीं ॥ १० ॥ गणावच्छेदक साधु के दो अतिशय कहे हैं १ गणावच्छेदक साधु के साथ उपाश्रय में एक दो रात्रि रहना आज्ञा उल्लंघन नहीं करे, २ वैसे ही बाहिर रहना भी आज्ञा उल्लंघन नहीं करे ॥ ११ ॥ अब अपर साधु आश्रित कहते हैं. [illegible] ग्राम में यावत् नगर में यावत्

पुव्वाओत्ते कप्पति से दोवि पडिगाहित्तए ॥ ६ ॥ तत्थ से पुव्वागमणेणं दोवि पच्छाओत्ते नो से कप्पति दोवि पडिगाहित्तए ॥ ७ ॥ जे से तत्थ पुव्वागमणेणं पुव्वाउत्ते से कप्पति पडिगाहित्तए ॥ ८ ॥ जसे तत्थ पुव्वागमणेणं पच्छाउत्ते नो से कप्पति पडिगाहित्तए ॥ ९ ॥ आयरिय उवज्झायस्स गणंसि पंच अतिसेसा पण्णत्ता तंजहा- आयरिय उवज्झाए अंतो उवस्सयस्स पायाणि णिज्झिय २ पप्फोडेमाणेवा पमज्जमाणेवा णातिकमति, आयरिय उवज्झाए अंतो उवस्सयस्स उच्चारंवा पासवणंवा विगिंचमाणेवा

और चांवल दोनों दोनों उतरे हों तो दोनों ही ग्रहण करना कल्पता है ॥ ६ ॥ और साधु के गये बाद दाल चांवल दोनों चुले परसे उतरे हो तो दोनों ही ग्रहण करना नहीं कल्पता है ॥७॥ मतलब कि साधु के गये पहिले जो कुछ तैयार होगया हो वह ग्रहण करना कल्पता है ॥८॥ और जो वस्तु साधु के गये बाद तैयार हुई हो वह ग्रहण करना नहीं कल्पता है ॥ ९ ॥ अब आचार्य के अतिशय कहते हैं आचार्य उपाध्याय के पांच अतिशय कहे हैं तद्यथा—१ आचार्य उपाध्याय बाहिर से उपाश्रय में पधारें तो उन के पांव को पूंजनी ग्रहण कर पूंजे, प्रमार्जे, ऐसा करना कल्पता है तीर्थंकर की आज्ञा उल्लंघे नहीं. २ आचार्य उपाध्याय उपाश्रय में बडी नीत लघुनीत परठे दूर करे इसे योग्य स्थान परिठा कर जमीन शुद्ध करता हुवा

सूत्र

विसोहेमाणेवा णातिक्कमति, आयरिय उवज्झाए पभूवेयावडियं इच्छाए करेज्जा; इच्छाए णो करेज्जा, आयरिय उवज्झाय अंतो उवस्सयस्स एगरायंवा दुरायंवा वसमाणेवा णातिक्कमति; आयरिय उवज्झाए बाहिं उवस्सयस्स एगरायंवा दुरायंवा वसमाणेवा णातिक्कमति ॥१०॥ गणावच्छेइयस्सणं गणंसि दो अतिसेसा पण्णत्ता तंजहा- गणावच्छेइए अंतो उवस्सयस्स एगरायंवा दुरायंवा वसमाणेवा णातिक्कमति, गणावच्छेइए बाहिं उवस्सयस्स एगरायंवा दुरायंवा वसमाणेवा णातिक्कमति ॥११॥ से गामंसिवा नगरंसिवा जाव सन्निवेससिवा एग वगडाए एग दुवाराए एग णिक्खमण पवेसाए नो

अर्थ

तीर्थंकर की आज्ञा का उल्लंघन नहीं करे. ३ आचार्य उपाध्याय की इच्छा वैयावच करने की होवे तो अपनी शक्ति को कदापि गोपे नहीं. शक्ति प्रमाणे वैयावच करे. ४ आचार्य उपाध्याय उपाश्रय में एक दो रात्रि रह फिर उपाश्रय बदलना चाहे, तो एक दो रात्रि उपाश्रय में रहना आज्ञा उल्लंघे नहीं. और ५ आचार्य उपाध्याय उपाश्रय के बाहिर रहना चाहते हों तो उन के साथ उपाश्रय के बाहिर भी वृक्षादि के नीचे रहना आज्ञा अतिक्रमे नहीं ॥ १० ॥ गणावच्छेदक साधु के दो अतिशय कहे हैं १ गणावच्छेदक साधु के साथ उपाश्रय में एक दो रात्रि रहना आज्ञा उल्लंघन नहीं करे, २ वैसे ही बाहिर रहना भी आज्ञा उल्लंघन नहीं करे ॥ ११ ॥ अब अपद साधु आश्री कहते हैं- छोटे गाम में, बड़े नगर में-यावत्

सूत्र

कप्पति बहुणं अगडसुयाणं एगओ वत्थए, अत्थियाइणं केइ आयारकप्पधरे णत्थियाइणं केइ च्छेदेत्ता परिहारेत्ता. णत्थियाइणं केइ आयारकप्पधरे सव्वेसिंतेसितेसि तप्पत्तियं छेदेत्ता परिहारेत्ता ॥ १२ ॥ से गामंसिवा जाव संन्निवेसंसिवा अभिणिवगडाए अभिनिदुवाराए अभिनिक्खमणपवेसणाए नो कप्पति बहुणं अगडसुयाणं एगंयओ वत्थए, अत्थियाईणं केइ आयारकप्पधरे जे तत्तीयग्याणि संवसंति णत्थियाइ केइ छेदेत्ता परिहारेत्ता ॥ णत्थियाइणं केइ आयारकप्पधरे जतत्तियं रायाणि सव-

अर्थ

मन्निवेश में ऐसा मकान होवे कि जिस में एक ही कमरा होवे जिस के चारों तरफ भींत होवे, जिस के एक ही द्वार होवे, निकलने प्रवेश करने का एक ही रास्ता होवे. ऐसे स्थान में बहुत साधुओं सूत्र के अजान आचारांग सुयगडांग के मशाते के पाठी हुवे विना एकत्र रहना नहीं कल्पता है. और उन में जो कोई साधु आचारांग नशीतका पढा हुवा हो तो उसके साथ रहे, किसी प्रकार का प्रायश्चित नहीं आता है और विना आचारांगादि के पढे के साथ जो रहे तो जितने दिन रहे उतने ही दिन का छेद प्रायश्चित आता है॥१२॥ उक्त प्रकार का ग्रामादि में बडा चारों तरफ कोट वाला अलग २ द्वारवाला होवे जिस स्थान निकलने प्रवेश करने का रास्ता अलग २ हो ऐसे स्थान में बहुत साधुओं में से कोइ भी एक साधु आचारांग नशीत का जान हो उन के साथ रहे तो छेद प्रायश्चित नहीं आवे. अर्थात् विना पढे साधु को अलग

मूत्र

सति सव्वेसि तस्स तप्पत्तियं छेदेवा परिहारेवा ॥ १३ ॥ से गामंसिवा जाव संनि-
वेसंसिवा अभिण्णवगडाए अभिण्णदुवराए अभिणिक्खमणपवेसाए नो कप्पति बहुसुयस्स
बज्झागमस्स एगाणियस्स भिक्खुस्सवत्थए, किमगपुण अप्पसुयस्स अप्पागमस्स
॥ १४ ॥ से गामंसिवा जाव संनिवेसंसिवा एगवगडाए एगदुवारए कप्पति बहुस्सु
यस्स बज्झगमस्स एगाणियस्स भिक्खुस्सवत्थए उभओकालं भिक्खु भावं पडिजाग-

अर्थ

स्थानमें नहीं रहना परंतु बहुत अपठ साधुओं में एकपढा हुवा साधु गुरू हुवा चाहिये, नहीं तो वे अल्प ज्ञानकर
आहार पानी उपाश्रय सहसी प्रमाद सेवन आदि अनेक दोष सेवन करने का संभव होता है. और पढा
हुवा साधु हो तो वो उन को उन्मार्ग में नहीं जानेदे ॥ १३ ॥ ग्राम में यावत् सन्नीवेश में, कोइ सराय
धर्म शालादि मकान हो वह खुला हो बहुत द्वार वाला हो निकलने प्रवेश करने के रास्ते अलग २ हो वहां
भी आचारंग नीशीथ के पढे हुवे गीतार्थ साधु को अकेला रहना नहीं कल्पता है तो फिर अल्प सूत्र-थोडे पढे,
अल्पागमी-थोडे शास्त्रके जान. उनक तो कहना ही क्या? अर्थात् उनको तो ऐसे स्थानमें रहना कल्पे नहीं है
॥१४॥परंतु ग्रामादि यावत् सन्नीवेश में सराय आदि मकान में एकही कमरा होवे जिसका एकही द्वार होवे
ऐसे स्थानमें बहुसूत्री शास्त्र ज्ञानके पारगामिक साधुको अकेला रहना कल्पता है. परंतु वहां उनको भी दोनों
सन्ध्या अर्थात् अहोरात्रि साधु धर्मकी चिंतवन करते सावधानपने अप्रमादी रहना चाहिये.जिससे आतेजाते

रमागमं ॥ १५ ॥ जे तत्थे वहवे इत्थीओ परिमाय पाणयंति तत्थमे समणे निग्गंथे अण्णयरंसि अचित्तंसि सोयंसि सुक्कपोग्गले निग्गमाणे हत्थकम्म पडिसेवणपत्ते, आवज्जति मासियं परिहारट्ठाणं अणुग्घातियं ॥ १६ ॥ जे तत्थ वहवे इत्थीओ परिसाय पाणायंति तत्थसे समणे निग्गंथे अण्णयरंसि अचित्तंसि सोयंसि सुक्कपुग्गले निग्घयमाणे मेहुण पडिसेवणपत्ते आवज्जइ चाउम्मासियं परिहारठाणं अणुग्घातियं ॥ १७ ॥ नो कप्पति निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा निग्गंथीणं

रहने लगे, मे संयम की विराधना नहीं होवे ॥ १५ ॥ कोई साधु साध्वी किसी मनुष्य मनुष्यनी या पशु पशुनी को काम भोग सेवन करता देख विकार का उदय होवे से किसी अचित्त श्रोत्र में इन्द्री प्रक्षेप या योनी में काष्ठादि प्रक्षेप वीर्य स्खलित करे हस्तकर्म कर वीर्य क्षय करे, तो उसे एक मासिक प्रायश्चित्त अणुग्घातिक आता है (२ उपवास तथा बारा दिनकी दीक्षा का छेद आर क्यों कि हस्तकर्म करने मैथुन की इच्छा होती है तथा हस्तकर्म करने मैथुन भी सेवन करने इस लिये जबर दोष कहा है) ॥ १६ ॥ किसी स्थान में स्त्री पुरुष मैथुन कर्म सेवित होवे, उन को देखकर श्रमण निर्ग्रन्थ अन्य अचित्त श्रोत्रादि में इन्द्री प्रक्षेप कर मैथुन सेवन के आशय मात्र कर वीर्य क्षीण करे, मैथुन सेवन किया ऐसा भाव लावे, तो उस को चौमासिक प्रायश्चित्त (१२ उपवास का प्रायश्चित्त या १२ दिन का दीक्षा का छेद पर्व) ॥ १७ ॥ अन्य गच्छ से साध्वी आवे उन आश्रित कहा है, साधु साध्वी के पास किसी अन्य गच्छ से

सूत्र

अण्णगणाओ आगयं; क्खूयायारं सबलायारं भिन्नायारं, संकिलिट्ठायारं चरित्तं तस्स ट्ठाणस्स अणालोयावेत्ता अपडिक्कमावेत्ता पायच्छित्तं अपडिवज्जावेत्ता पुच्छित्तएवा वाईत्तएवा उवट्ठावित्तएवा संभूजित्तएवा संवसावित्तएवा, तीसे इत्तरियदिसंवा अणुदिसंवा उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा ॥ १८ ॥ कप्पति निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा निग्गंथी अण्णगणातो आगई क्खुयायारं सबलायारं भिन्नायारं संकिलिट्ठायारं चरित्तं तस्सट्ठाणस्स आलोयावेत्ता पडिक्कमावेत्ता पायच्छित्तं पडिवज्जावेत्ता पुच्छित्तएवा वाईत्त-

अर्थ

साधु आये हो, जिसका आचार खण्डित हुवा है, इक्कीस सबले दोषोंमें का कोई दोष लगा हो, आचार का भेद अनाचार से हुवा हो, क्रोधादि कर मलीन हुवा हो, उस को उस पाप स्थानक की आलोचना दिये बिना, प्रतिक्रमण कराये बिना प्रायश्चित्त दिये बिना नवा दीक्षा दिये बिना उसको सुख साता पूछना सूत्रादि की वाचना देनी, महा व्रतादि में स्थापन करना-बडी दीक्षा देना, उस के साथ आहार करना, उस के साथ एक स्थान में रहना, तथा उस को आचार्यादि की पद्वी थोडे काल के लिये तथा जावजीव पर्यन्त की देना नहीं कल्पता है ॥ १८ ॥ परंतु ऐसे ही किसी साधु साध्वी के पास कोई साध्वी अपने गच्छ को छोड आई हुई जिस का आचार खंडित हुवा हो, जिसने २१ सबले दोष में का दोष सेवन किया हो, जिस का आचार अनाचार से भिन्न हुवा हो, क्रोधादि से संक्लिष्ट आचार हुवा हो, उस को उ

मुवा उवट्ठावित्ताएवा संभुंजित्तएवा संवासावित्तएवा तीसं इत्तरियं दिसंवा अणुदिसंवा उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा ॥ १९ ॥ नो कप्पति निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा णिग्गंथे अण्णगणाओ, आगय खुयायार सबलायारं भिण्णायारं संकिलिट्ठायार चरित्तं, तस्स ठाणस्स अणालोयावेत्ता अपडिक्कमावेत्ता पायच्छित्तं अपडिवजावेत्ता पुच्छित्तएवा वाइत्तएवा उवट्ठावित्तएवा संभुंजित्तएवा संवासावित्तएवा तीसंइत्तरियं दिसंवा अणुदिसंवा उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा ॥ २५ ॥ कप्पति निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा निग्गंथं अण्णगणातो आगयं अक्खुयायार

प्रायश्चित्त के स्थान की आलोचना करा, प्रतिक्रमण करा, प्रायश्चित्त दे फिर उसे सुखसाता पूछना, वाचना देना, बड़ी दीक्षा देना, साथ में आहार करना, साथ में रहना। थोड़े काल तक अथवा जावजीव की पदवी आदि की पद्वी पर स्थापन करना कल्पता है ॥ १९ ॥ अब साधु आश्रिय कहते हैं— साधु साध्वी को किसी दूसरे गच्छ का आया हुवा साधु खंडताचारी सबल दोष लगानेवाला, भिन्न आचारी, क्रोधादि से संक्लिष्टपरिणामी, उस दोषस्थान की आलोचना प्रतिक्रमण बिन किये प्रायश्चित्त बिन दिये सुख साता पूछना वाचना देना महाव्रतारोपण करना, साथ आहार करना, साथ रहना, थोड़े काल तथा जावजीव की पद्वी देना नहीं कल्पता है ॥ २० ॥ परंतु साधु अथवा साध्वी को दूसरे गच्छ से

सूत्र

असबलायारं अभिण्णायारं असंकिलिट्ठायारं, चरित्तं तस्स ट्ठाणस्स आलोयावेत्ता पडिक्कमावेत्ता पायच्छित्तं पडिवज्जावेत्ता, पुच्छिचएत्वा वाइत्तएत्वा उवट्ठावित्तएत्वा सं भुंजित्तएत्वा, संवसावित्तएत्वा, तीसे इत्तरियं दिसंवा अणुदिसंवा उद्दिसित्तएत्वा, धारित्तएत्वा ॥२१॥ त्तिबेमि ॥ विवहार सुयस्स छट्ठो उद्देसो सम्मत्तं ॥६॥

अर्थ

कोई साधु किसी कारण प्रयोजन से निकल कर आया हो, उस का आचार अखंडित हो पहले किसी भी सबले दोष का सेवन नहीं किया हो, उस का आचार अनाचार से भंग नहीं हुवा हो, जो क्रोधादि से संक्लिष्ट मन नहीं निकला हो, जिस कारण से आया हो, उस कारण की आलोचना प्रतिक्रमण करे, दोष लगा हो उस का प्रायश्चित्त लेवे तो उस को सुख साता पूछना, सूत्र की वाचनी देना, महाव्रत में स्थापन करना, उस के साथ आहार पानी करना, उन के साथ रहना जो वह योग्य हो तो उसे थोडे काल के लिये अथवा यावज्जीव के लिये आचार्यादि की पद्वी पर स्थापन करना कल्पता है ॥ २१ ॥ यह व्यवहार सूत्र का छठा उद्देशा संपूर्ण हुवा ॥ ६ ॥

॥ सप्तम् उद्देशा ॥

जे निग्गंथाय निग्गंथीओय संभोइयासिया नो कप्पइ निग्गंथीणं निग्गंथे अणापुच्छित्ता निग्गंथी अण्णगणाओ आगयं खूयायारं भिण्णायारं सबलायारं, संकिलिट्ठायारं चरित्तं, तस्स ठाणस्स अणालोयावित्ता अपडिक्कमावेत्ता पायच्छित्तं अपडिवज्जावेत्ता पुच्छित्तएवा, वाइत्तएवा, उवट्ठावित्तएवा, संभुंजित्तएवा, संवसावित्तएवा, तीसे इत्तरियं दिसंवा अणुदिसंवा उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा॥ १॥ जे णिग्गंथाय निग्गंथीओय संभोइयासिया कप्पति निग्गंथीणं निग्गंथे अपुच्छित्ता निग्गंथी अण्णगणाओ आगयं

जो कोइ निर्ग्रन्थ-साधु निर्ग्रन्थनी-साध्वी बारे प्रकार के संभोग कर संभोगी होवे उन में साध्वी को साधु को बिना पुछे कोइ साध्वी दूसरे गच्छ से निकलकर आई हो वह भी आचार को खंडित करने वाली हो, अनाचार से आचार को भेदनेवाली हो, सबले दोषों में से दोष को लगाने वाली हो, क्रोधादि कषाय कर संक्लिष्ट आचार वाली हो, इस पाप की आलोचना प्रतिक्रमण बिन किये प्रायश्चित्त बिन लिये इस को सुखसाता पूछना, वाचनादेना, महाव्रत में स्थापना मांडले में आहार करना एक स्थान साथ रहना उस को थोडे काल के लिये अथवा जाव जीव के लिये पवित्तणी आदि पद्वी पर स्थापन करना कल्पता नहीं है॥ १॥ जिन साधु साध्वी का १२ प्रकार का संभोग मेला हो उस में साध्वी को कोइ अन्य संभोगी

सूत्र

क्खूयायारं भिन्नायारं जाव उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा ॥ २ ॥ जे निग्गंथाय निग्गं-थीओय संभोइयासिया कप्पंति निग्गंथाणं निग्गंथीओय आपुच्छित्ता निग्गंथी अण्णगणओ आगयं क्खुयायारं सबलायारं भिण्णायारं संकिलिट्ठायार चरित्तं, तस्स ट्ठाणस्स आलोयावेत्ता पडिक्कमावेत्ता पायच्छित्तं पडिवज्जावित्ता पुच्छित्तएवा वाइत्तएवा उवट्ठावित्तएवा, संभुंजित्तएवा, संवसित्तएवा, तीसे इत्तरियं दिसंवा अणुदिसंवा उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा ॥ नंच निग्गंथीओ णो इच्छेज्जा सयमेव णियट्ठाणं ॥ ३ ॥ जे निग्गंथाय,

अर्थ

साध्वी आइ हो उस का आचार खंडित हुवा हो यावत् अपने संभोगीक साधु को पूछकर यावत् पद्वी पर स्थापन करना कल्पता है ॥ २ ॥ जिन साधु साध्वी का संभोग मेला हो, तो साधु को अपने संभोग की साध्वी को पूछकर अन्य गच्छ से आइ हुई साध्वी को खंडिताचारी को सबल दोष वाली को भिन्ना चारी को कषाय से संक्लिष्ट चारित्रीनी की उस स्थानक की आलोचना प्रतिक्रमणा करा कर प्रायश्चित्तसे शुद्ध करके सुख साता पूछना, वाचना देना पदमत में स्थापन करना साथ आहार करना साथ रहना उसे थोडे काल की अथवा विशेष काल की पद्वी पर स्थापन करना कल्पता है, परंतु उस बडी साध्वी को अपने संभोगिक साधुकी राजा विना अपने मनसे ग्रहण करने की इच्छामात्र भी नहीं करो॥३॥जो साधु

सूत्र

णिग्गंथीओय संभोइयासिया णोण्हं कप्पति णिग्गंथे परोक्खं पाडियक्कं संभोइयं वीसंभोइयं करित्तए, कप्पतिण्हं पच्चक्खं पाडियक्कं संभोइयं विसंभोइयं करित्तए, जत्थेवते अण्णमण्णं पासेज्जा तत्थेव एवं वएज्जा अहण्णं अज्जो ! तुमए सद्धिं इमंमियकारणंमि पच्चक्खं पाडियक्कं संभोइयं विसंभोइयं करेमि, सेय पडितप्पेज्जा, एवं से नो कप्पति पच्चक्खं पाडियक्कं संभोइयं विसंभोइयं करित्तए, सेय नो पडि-

अर्थ

साध्वी एक संभोगी हो, और किसी संभोगीका विसंभोग करना हो अर्थात् संभोग में से निकालना होवे वह समक्ष हुवा विना उसको विसंभोग करना नहीं कल्पता है परंतु वह प्रत्यक्ष सन्मुख हो तब उन का दोष उन को कबूल करावे कि अहो आर्य ! तुम पासत्थादि को आहार पानी आदि देवे हो हमने तुमारे को दो तीन वक्त मना किया तो भी तुम मानते नहीं हो और चौथी वक्त भी देते हो इत्यादि करण से तुम हमारे संभोग के बाहिर हो, हमारे संभोगी साधु सब तुमारे साथ बाराही प्रकार के संभोग में का किसी भी प्रकार का संभोग नहीं करेंगे. इत्यादि कह के उन को विसंभोग करे, परंतु वह साधु उस सेवित दोष का पश्चाताप करे. मिथ्या दुष्कृतदेदे शुद्ध होवे और कहे कि अब मैं ऐसा नहीं करूंगा तो उस के साथ प्रत्यक्ष में अथवा परोक्ष में संभोग का विसंभोग करना नहीं कल्पता है. और जो वह उस दोष का पश्चाताप नहीं करे प्रायश्चित्त के शुद्ध न होवे, आगे दोष से

सूत्र

तप्पेज्जा एवं से कप्पति पच्चक्खं पाडियक्कं संभोइयं विसंभोइयं करित्तए ॥ ४ ॥ जाओ निग्गंथीओ निग्गंथावा संभोइयासिया णोण्ण कप्पति निग्गंथी पच्चक्खं पाडियक्कं संभोइयं विसंभोइयं करित्तए, कप्पतिणं परोक्खं पाडियक्कं संभोइयं विसंभोइयं करित्तए, जत्थेवताओ अप्पणो आयरियं उवज्झाय पासेज्जा तत्थेव एवं वएज्जा अहणं भंते ! अमुग्गाए अज्जाए सद्धिं इनंमियं २ कारणांमि परोक्खं पाडियक्कं संभोइयं विसंभोइयं करोमि, सायसे पलिकप्पेज्जा, एवं से नो कप्पति परोक्खं

अर्थ

निवृतना कबूल नहीं करे, तो उस को प्रत्यक्षमें अथवा परोक्ष में विसंभोगी करना कल्पता है॥४॥परोक्षमें किस प्रकार विसंभोग करे यह कहते हैं. कोई साध्वी साधु चारे प्रकार का संभोग शामिल करते हो उस में से किसी साध्वी का प्रत्यक्ष उपाश्रय में संभोगी की विसंभोगी, करना नहीं कल्पता है. परंतु दूसरे साधु के पास अथवा साध्वी के पास वह जिस स्थान रहती हो वहां कहलावे कि इस कारण से तुम को विसंभोगी की है. इस प्रकार करना कल्पता है. तब वह आर्जिका जिस स्थान अपने आचार्य उपाध्याय हो वहां जाकर कहे कि अहो भगवन् ! अमुक आर्या के साथ अमुक कारण करके परोक्षपने में मेरा विसंभोग किया, ऐसा मेरे स्थान मुझे कहलाया. तब वे आचार्य उपलक्षण से उस प्रवृतीनों को जानकर

सूत्र

पाडियक्कं संभोइयं विसंभोइयं करित्ताए; सायसे णो पडितप्पेज्जा एवं से कप्पति परोक्खं पडियक्कं संभोइयं विसंभोइयं करित्ताए ॥ ५ ॥ नो कप्पति निग्गंथाणं निग्गंथिं अप्पणो अट्ठाए पव्वावित्तएवा मुंडावित्तएवा सिक्खावित्तएवा सेहावितएवा उवट्ठावित्तएवा, संभुंजित्तएवा, संवासित्तएवा, तीसे इत्तरियं दिसंवा अणुदिसंवा उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा ॥ ६ ॥ कप्पति निग्गंथाणं निग्गंथीणं अप्पणोसिं अट्ठाए

अर्थ

कहे कि अहो आर्या ! उस साधु का कहना है कि अमुक प्रकारका मिथ्या दुष्कृत्य देवे तो विसंभोगीपना नहीं करूं. तब वह आर्जिका उस सेवित दोप का मिथ्या दुष्कृत्य दे देवे तो प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष विसंभोगी नहीं करे. इन दो आलापक में प्रथम आलाप का साधु का है और दूसरा साध्वी का है ॥ ५ ॥ साधु साध्वी को अपने लिये—अपनी नेश्राय में कर दीक्षा देना मुण्डित करना, आचारादि की शिक्षा देना शिष्यनी करना, महाव्रत में स्थापन करना शामिल आहार पानी करना, एक स्थान रहना, उसे थोडे काल के लिये अथवा जावजीव के लिये किसी पद्वी पर स्थापन करना, इतने काम करना साधु को नहीं कल्पता है ॥ ६ ॥ परंतु साधु साध्वी को दूसरे के लिये दीक्षा देना, मुण्डित करना यावत् पद्वी देना कल्पता है. अर्थात् किसी दूर देशान्तर में विहार करते किसी गृहस्तीनीयों को वैराग्य भाव प्राप्त हुवा हो और वहां नजीक में कोई आर्जिका आने जैसी न हो तो साधु उन को कहे कि मैं तुमारे को दीक्षा

मूल पव्वावित्तएवा मुंडावित्तएवा जाव उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा॥७॥ णो कप्पत्ति निग्गंथीणं निग्गंथं अप्पणो अट्ठाए पव्वावित्तएवा मुंडावित्तएवा जाव उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा ॥८॥ कप्पति निग्गंथीणं निग्गंथाणं अट्ठाए पव्वावित्तएवा मुंडावित्तएवा जाव उद्दिसित्तएवा धारित्तएवा॥९॥नो कप्पंति निग्गंथीणं वितिकिट्ठायं दिसंवा अणुदिसंवा उद्दिसीत्तएवा धरित्तएवा॥ १०॥ कप्पंति निग्गंथाणं वितिकिट्ठियं दिसंवा अणुदिसंवा उद्दिसित्तएवा धारित्तए-

अर्थ देऊंगा, आहार पानी आदि का देऊंगा, परंतु आचार्यादि का योग मिले वे करे उन आर्जिका के नेश्राय में तुमारे को रहना होगा. यों अन्य की नेश्राय की उन को जान दीक्षा दे मुण्डित करे यावत् पद्वी पर स्थापे ॥ ७ ॥ आर्जिका को किसी साधु को अपने लिये दीक्षा देना मुण्डित करना यावत् पद्वी पर स्थापन करना नहीं कल्पता है ॥ ८ ॥ साध्वी को दूसरे साधु के लिये दीक्षा देना मुण्डित करना यावत् पद्वी देना कल्पता है. उक्त कथनानुसार जो किसी देश में साधु न हो आर्जिका का उपदेश सुन किसी को वैराग्य प्राप्त होवे तो आर्जिका उस को दीक्षा दे आहार पानी आदि योग्य भक्ति कर अन्य साधु के सुपरत करे ॥ ९ ॥ साध्वी को विकट दिशा- (जिस दिशा में चोर जार अनार्यों रहते हों उस दिशा) में विहार करना नहीं कल्पता है, क्यों कि ऐसे स्थान वस्त्रादि के हरण होनेका तथा भ्रत भंग आदि संयम विराधना का संभव होता है ॥ १० ॥ परंतु साधु को विकट दिशा में अनुदिशा में विहार करना रहना कल्पता

सूत्र

एथा ॥ ११ ॥ नो कप्पंति निग्गंथाणं वितिकिट्ठायं पाहुडाइं विओसवित्तएवा ॥ १२ ॥ कप्पंति निग्गंथीणं वितिकिट्ठाइं पाहुडाइं विओसवित्तएवा ॥ १३ ॥ नो कप्पति निग्गंथाणं वा निग्गंथीणवा वितिकिट्ठाए कालेसज्झायं उद्दिसित्तएवा करित्तएवा ॥ १४ ॥ कप्पति निग्गंथीणं वितिकिट्ठाए कालेसज्झायं उद्दिसित्तएवा, करित्तएवा निग्गंथणिस्साए ॥ १५ ॥ नो कप्पंति निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा अस-

अर्थ

है ॥ ११ ॥ किसी साधु आदि से विरोध होगया हो और वे साधु विकट दिशा में जाकर रहे हों तो उन को साधु विकट दिशा में जाकरही खमावे. परंतु स्वस्थान रहा नहीं खमावे ॥ १२ ॥ किसी आर्जिका को किसी के साधु से विरोध हुआ हो और वह विकट दिशा में जाकर रहा हो तो उन को क्षमाने जाना नहीं कल्पता है परंतु स्वस्थान रही हुई ही क्षमावना करे ॥ १३ ॥ साधु साध्वी को विकट काल में-अकाल में शास्त्र की स्वध्याय करना नहीं कल्पता है (विकट काल दो प्रकार के-१कालिक विकट तो प्रथम पहर चौथा पहर दिन रात्रि का छोड बाकी के काल में कालिक शास्त्र की स्वध्याय करे, और उत्कालिक सो प्रातःकाल सन्ध्या काल मध्यान्ह और अर्ध रात्रि इस में शास्त्र की स्वध्याय करे, यह दोनो काल टालकर यथा उचित शास्त्र की स्वध्याय करना कल्पता है) ॥ १४ ॥ साध्वी को विकट काल में पांच प्रकार की स्वध्याय करना अन्य को उद्देश करना कल्पता है. परंतु साधु की नेश्राय में रहकर कोइ कार्य प्रयोजन साधु कहे कि तुम यहां रहे इतनी स्वध्याय करो तो करना कल्पता है ॥ १५ ॥ साधु साध्वी

सूत्र

ज्झाए सज्झायं करित्तए ॥१६॥ कप्पंति निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा सज्झाईए सज्झायं करित्तए ॥ १७ ॥ नो कप्पति निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा अप्पणो असज्झाइए सज्झायं करित्तए, कप्पतिणं अण्णमण्णस्स वायणं दलिइत्तए ॥ १८ ॥ तिवास परियाए समणे निग्गंथे तीसंवास परियाए समणीनिग्गंथीए कप्पति उवज्झायत्ताए उदिसित्तएवा ॥ १९ ॥ पंचवास परियाए समणेनिग्गंथे सट्ठिवास परियाए समणीए

अर्थ

को असज्झाय की वक्त स्वध्याय करना कल्पता नहीं है ॥ १६ ॥ साधु साध्वी को स्वध्याय करने के काल में स्वध्याय करना कल्पता है ॥ १७ ॥ साधु साध्वी को अपने शरीर से उत्पन्न हुई असज्झाइ रक्तरादि विष्टादि उस में स्वध्याय करना नहीं कल्पता है परंतु परस्पर वांचना देना लेना कल्पता है. अर्थात् साधु को कोइ व्रण (गुमडा) दि हुवा हो वह झरता हो तो उसपर तीन पडलका वस्त्र बांध कर परस्पर वांचना देवे लेवे, तैसे ही साध्वी के व्रणादि हुवा हो अथव ऋतु मास हुवा हो तो उस को राक्षादि की पोटली युक्त सात पट का वस्त्र बांधकर वांचना देना लेना कल्पता है ॥ १८ ॥ जिस साधु की तीन वर्ष की दीक्षा हुई है उनको तीस वर्षकी जिसकी दीक्षाहुइ ऐसी आर्या की उपाध्याय पदपर स्थापन करे, तीन वर्ष की दीक्षित साध्वी को उपाध्याय स्थापे बिना न रहना ॥ १९ ॥ जिस साधु की पांच वर्ष की दीक्षा होगइ है उस साधु को साठ वर्ष की जिस की दीक्षा हुई है ऐसी साध्वी को आचार्य पने

सूत्र

निग्गंथे कप्पति आयरियत्ताए उद्दिसित्तएवा ॥ २० ॥ गामाणुगामं दुईज्जमाणे भिक्खूए अहच्च वीसुंभेज्जा तंचसरीयं केइसाहम्मियाए पासेज्जा, कप्पति से तंसरीरयं मासागारियंमि तिकट्टु तं सरीरायं एगंते अचित्ते बहुफासुए थंडिले पडिलेहित्ता पमज्जित्ता परिट्ठवित्तए, अत्थिया इत्थंकेइ साहम्मियं संतिए उवगरणजाए परिहरणारिहे कप्पतिणं सागारकडं गहाय दोच्चंपि उग्गहं अणुवेत्ता परिहारं परिहरित्तए ॥ २१ ॥ सागारीए उवस्सयं वक्कएणं पडजेज्जा, सेयवकइयं वएज्जा,

अर्थ

स्थापन करना कल्पता है. विना आचार्य रहना नहीं कल्पता है * ॥ २० ॥ ग्रामानुग्राम विहार करते हुवे मार्ग अथवा साध्वी में कोइ साधु साध्वी अचित आयुष्य पूर्ण कर जावे तब साथ के साधर्मिक साधु साध्वी उस साधु साध्वी के शरीर की ग्रहस्थ के शरीर ममाणे विटम्बना नहीं होवे ऐसा विचार कर उस मृत्युक शरीर को एकान्त में लेजाकर उत्तम भूमीका को प्रति लेखकर प्रमार्जनकर परिठावे. और उन का उपकरण जो साधु के काम में आने लायक बचा हुवा हो उस को गृहस्थ की आज्ञा मांगकर ग्रहण करे, उसे जहां आचार्य उपाध्याय होवे वहां आवे. उन के सुमत वह उपाधी करे, जो आचार्य उपाध्याय वह उपाधी उस साधु को देवे तो उन की आज्ञा से उसे ग्रहण कर भोगवे ॥ २१ ॥ जिस मकान-स्थानक में

* जघन्य तीन वर्ष की दिक्षा वाली आर्या को भी आचार्य पदपर स्थापन करना, ऐसा अर्थ में लिखा है.

सूत्र

इमंमियं २ उवासेसमणा णिग्गंथा परिवसंति, से सागारिए परिहारिए सेयणो एवं वएज्जा वक्कइएवेएज्जा, इमंमिय २ उवासे समणा निग्गंथा परिवसंति से सागारिए परिहारिए दोविए एवं वएज्जा जाव दोवित्ते सागारिया परिहारिया ॥ २२ ॥ सागारिए उवस्सयं विक्किणेया सेयवक्कइयं वदेज्जा, इमंमिय २ उवासे समणा निग्गंथा

अर्थ

साधु रहे हैं उस मकान का मालक उस मकान के खाली विभाग को भाडे देवे. तब वह मकानवाला साधु से कहे कि इस कमरे में आप रहो मेरी आज्ञा है, इतना मकान भाडे दिया है. उस में भाडेती रहेगा. तो साधु उस मकान के धणी को शैयांतर मान कर उस के घर से आहार आदि ग्रहण नहीं करे. कदापि घर का मालक गृहस्थ कुछ नहीं बोले वह मकान भाडे देदे. तब भाडेलेने वाला कहे कि अहो साधु तुम इतने मकान में रहो मेरी आज्ञा है. तो साधु वहां रहे और उस भाडेती को शैयांतर मानकर उस के घर का आहार पानी ग्रहण नहीं करे. कदाचित घर का मालिक और भैयातर दोनों ही कहे हमारी आज्ञा है आप यहां रहोतो साधु मकान के मालिक को और भाडेती को दोनों को शैय्यातर मानकर दोनों के घर का आहार पानी आदि ग्रहण नहीं करे ॥ २१ ॥ जिस मकान में साधु रहते हैं उस का मालक किसी को मकान बेचता है. उस के पहिले ऐसा कहे कि इतनी जगह साधु के रहने को हैं. यहां इतने दिन यह साधु रहे मेरी आज्ञा है. तो साधु रहे और उस

॥ अष्टम उद्देशा ॥

गिहीउडुपज्जोसविए ताए गिहाए ताए पएसाए ताए उवासंतराए जमिणं सेज्जासंथरेयं लभेज्जा तमिणं तमियं ममेवत्तिया थेरायसे अणुजणेज्जा तस्सेवसिया थेरायसे णो अणुजाणेज्जा, णो तस्सेवसिया एवं से कप्पति आहारपाणियाए सेज्जासंथारयं परिग्ग-

साधुओं चौमासा करने के लिये किसी ग्रामादि में गये पाढा अषाढ से आगे और कार्तिक से पीछे अर्थात् कार्तिक पूर्णिमा पर्यन्त रहने को इच्छे वहां रहने को स्थानक-मकान की याचना की उस में कोई योग्य स्थान देखकर कोई साधु रत्नादि गुरु से कहे कि यह कोटडी कमरा इतना अंदर के प्रदेश और इतना बाहिर का प्रदेश श्लेषमादि परिठाने की जगाह मेरे नेश्राय में रखूं यहां मैं संथारा शयन करुंगा पढूंगा स्वाध्यायादि करूंगा. इत्यादि कारणसें रखुं? तब स्थविर उस के स्वभाव से मुख मुख दिसे अधूर्त सरल स्वभाव जान कर आज्ञादे कि यह तुमारी नेश्राय में रहने दो. इस प्रकार स्थविर आज्ञादेवे तो आप उसे भोगवे-वहां रहे. और जो स्थविर उसे धूर्त जाने कंदर्पादि इच्छा से यह जगा रखता है ऐसा जानने में आवेतो उसे कहे कि पहिले बडे फिर उन से छोटे फिर उन से छोटे जगह ग्रहण करते २ जो तुमारे नेश्राय में जगा अवे उसे ग्रहण कर रहो. तो उस ही प्रमाणे कर यथा रत्नादि ग्रहण किये

हित्तए ॥ १ ॥ से अहालहुस्सयं सेज्जासंथारगं गवेसेज्जा जं चक्किया एगेहत्थेणं ओगिज्झिय २ जाव एगाहंवा दुयाहंवा तियाहंवा अद्धाणं परिवहित्तए एसमे हेमंत गिम्हासु भविस्सति ॥ २ ॥ से अहालहुस्सयं सेज्जासंथारयं गवेसेज्जा जं चक्किया एगेणहत्थेणं उगिज्झिय २ जाव एगाहंवा दुयाहंवा तियाहंवा अद्धाणं परिवहित्तए, एसमे वासासु भविस्सति ॥ ३ ॥ से अहालहुस्सगं सेज्जासंथारयं गवेसेज्जा जं चक्किया

पाट मकान बिछोना पाट पाटलादि आप ग्रहण करे. ॥ १ ॥ जो पाट पाटला संथारक-पराल आदि याचन किये उस को एक हाथ से उठाके उठाकर एक दिन के पंथ जितनी दूर से अथवा दो दिन के पंथ जितनी दूरसे अथवा तीन दिन के पंथ जितनी दूरसे ला सके अर्थात् उसगाम में नहीं मिले तो दूसरे ग्राम से लाकर के तो चार महिने शीत काल और चार महिने उष्ण काल के दिन में इतनी दूरसे ले आना कल्पता है ॥ २ ॥ वे शय्या संथारे के इच्छक साधु छोटा हलका पाट संथारा आदि की गवेषना करे और उसे एक हाथ में ग्रहण कर उठा लाने समर्थ होवे यावत् रास्ते में एक दिन दो दिन तीन दिन विश्राम करती लाय के तो चतुर्मास के लिये ले आना कल्पता है ॥ ३ ॥ १६ शय्या संथारा का अर्थी साधु छोटा हलका शय्या-पाट संथारा आदि की याचना करते

एगेण हत्थेण उगिज्झिय २ जाव एगाहंवा दुयाहंवा तियाहंवा चउयाहंवा पंचाहंवा दुरमवि अद्धाणं परिवहित्तए, एसमे बूढावासासु भविस्सति॥४॥थेराणं थेरभूमि पत्ताणं कप्पति दंडएवा, भंडएवा, छत्तएवा मत्तएवा, लट्ठियंवा, भिसिवा, चेलेवा, चेलचिलि-मिलिवा, चम्मंवा, चम्मकोसवा, चम्मपलिछएणं, अविरहिते, उवासेट्ठवेत्ता, गाहावति

पिले. उसे एक हाथ में उठाकर एक दिन में दो दिन में तीन दिन में चार दिन में पांच दिन में इतनी र के रास्ते लाय के तो लाना कल्पता है, चिन्तवे की यह मेरी वृद्ध कायाको आश्रय भूत होगा ऐसा जान । कल्पता है (स्थिरवासित कलिये)॥४॥ अब स्थविरकी उपाधी कहते हैं॥ जो स्थविर साधुकी भूमीका प्राप्त हुये हैं, उनको इतने उपकरण कल्पते हैं १ दंड-रास्ते में आश्रय भूत, २ भंड-भाविक पात्रे, ३ त्राप वर्षाद की रक्षार्थ, ४ मटी के वर्तन, ५ मात्रीया-लघुनीत के लिये, ६ लाठिक टेकालेने पूठ पीछे कपटिया, ७ स्वाध्याय स्मरणादि करने बैठते को पाटला, ८ आहार करते कोई जंतू आहार में न पडे र का आदि वस्त्र का रस चिलमिली, ९ पांव में चौरी पडजाय और चला नहीं जाय तो वहाँ के लिये चमडे का टुकडा, १० किसी गुप्त रोगादि पर बांधने चमडे की कोथली, ११ किसी रोगादि स्थान बंधने चमडे का टुकडा, इन उपकरणों में से जो उपकरण उठाकर साथ लेजाने असमर्थ हो उन को उपाश्रय के नजीक में रहते हुवे गृहस्थ के यहां रखकर गोचरी वगैरह जाना आदि कारण के लिये

सूत्र

कुलं, भराएवा, पाणाएवा, पविसित्तएवा, निक्खमित्तएवा. कप्पतिसे संनियट्टचारीणं दोचंपि उग्गहं, अण्णुणवेत्ता, परिहारं परिहरित्तएवा ॥ ५ ॥ नो कप्पति निग्गंथाणवा नीग्गंथीणवा, पाडिहरियंवा, सागारियंवा, सतियंवा, सेज्झासंथारगं दोच्चंपिउग्गहं अण्णुणवेत्ता बहियाणीहरित्तएवा ॥ ६ ॥ कप्पति निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा पाडिहारियंवा सागारियंवा संतियंवा सेज्झासंथारगं दोच्चंपि उग्गहं अणुणावित्ता

अर्थ

बाहिर जावे और पीछे आवे तब गृहस्थ की आज्ञा लेकर उन को ग्रहण कर ले. उन को भोगवे, परंतु गृहस्थ के घर रखे गये बाट पीठा आकर गृहस्थ की आज्ञा बिना ग्रहण नहीं करे क्यों कि गृहस्थ को संशय होवे कि कोई चोरादि तो न लाये, इस लिये जितनी वक्त ग्रहण करे उतनी वक्त आज्ञा लेकरही ग्रहण करे ॥ ५ ॥ साधु साध्वी एक स्थान रहते हुवे गृहस्थ के यहां से पडिहारा (लाये हुवे पीछा दे ऐसे) पाट पराले आदि याचकर लाया हो. उसे एक मकान को छोड दूसरे मकान में जाते तथा एक ग्राम छोड दूसरे ग्राम जाते जिस गृहस्थ की वह वस्तु है उस को पूछे बिना ग्रहण कर लेजाना कल्पता नहीं है ॥ ६ ॥ परंतु साधु साध्वी गृहस्थ के यहां से पडिहार पाट पाटला पराल जो लाये हैं वे दूसरे मकान में या दूसरे ग्राम में लेजाना हो तो उन की आज्ञा मांगकर वे आज्ञा दे तो बाहिर लेजाना कल्पता है ॥ ७ ॥

एगेण हत्थेण उगिज्झिय २ जाव एगाहंवा दुयाहंवा तियाहंवा चउयाहंवा पंचाहंवा दुरमवि अद्धाणं परिवहित्तए, एसमे वूढात्रासासु भविस्सति॥४॥थेराणं थेरभूमि पत्ताणं कप्पति दंडएवा, भंडएवा, छत्तएवा मत्तएवा, लट्ठियंवा, भिसिंवा, चेलेवा, चेलचिलि- मिलिवा, चम्मंवा, चम्मकोसंवा, चम्मपलिछएणं, अविरहित, उवासेट्ठवेत्ता, गाहावति

मिले. उसे एक हाथ में उठाकर एक दिन में दो दिन में तीन दिन में चार दिन में पांच दिन में इतनी दूरके रास्ते लाकर तो लाना कल्पता है, चिन्तवे की यह मेरी वृद्ध कायाको आश्रय भूत होगा ऐसा जान लाना कल्पता है (स्थविरास्ति कल्पि)॥४॥ अब स्थविरकी उपाधी कहते हैं॥ जो स्थविर साधुकी भूमीका को प्राप्त हुवे हैं, उनको इतने उपकरण कल्पते हैं. १ दंड-रास्ते में आश्रय भूत, २ भंड-अधिक पात्रे, ३ छत्र-ताप वर्षादि की रक्षार्थ, ४ मटी के वर्तन, ५ मात्रीया-लघुनीत के लिये, ६ लाठिक टेकालेने पूठ पीछे रखने कपटिका, ७ स्वाध्याय स्मरणादि करने बैठने को पाटला, ८ आहार करते कोई जंतू आहार में न पडे इस प्रकार का आच्छादन वस्त्र का रख चिलमिली; ९ पांव में चांदी पडजाय और चला नहीं जावे तो वहां बंधन के लिये चमडे का टुकडा, १० किसी गुप्त रोगादि पर बांधने चमडे की कोथली, ११ किसी रोगादि स्थान बंधने चमडे का टुकडा, इन उपकरणों में से जो उपकरण उठाकर साथ लेजाने असमर्थ हो उन को उपाश्रय के नजीक में रहते हुवे गृहस्थ के यहां रखकर गोचरी वगैरे नीत आदि कारण के लिये

मूल

कुलं, भत्ताएवा, पाणाएवा, पविसित्तएवा, निक्खमित्तएवा. कप्पतिसे संनियट्टचारीणं दोच्चंपि उग्गहं, अणुणवेत्ता, परिहारं परिहरित्तएवा ॥ ५ ॥ नो कप्पति निग्गंथाणवा. नीग्गंथीणवा, पाडिहरियंवा, सागारियंवा, संतियंवा, सेज्जासंथारगं दोच्चंपिउग्गहं अणुणवेत्ता बहियाणीहरित्तएवा ॥ ६ ॥ कप्पति निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा पाडिहारियंवा सागारियंवा संतियंवा सेज्जासंथारगं दोच्चंपि उग्गहं अणुणवित्ता

अर्थ

बाहिर जावे और पीछे आवे तब गृहस्थ की आज्ञा लेकर उन को ग्रहण कर ले. उस को भोगवे. परंतु गृहस्थ के घर रख गये बाट पीछा आकर गृहस्थ की आज्ञा बिना ग्रहण नहीं करे क्यों कि गृहस्थ को संशय होवे कि कोई चोरादि तो न लगाय, इस लिये जितनी वक्त ग्रहण करे उतनी वक्त आज्ञा लेकरही ग्रहण करे ॥ ५ ॥ साधु साध्वी एक स्थान रहते हुवे गृहस्थ के यहां से पडिहारा (पाछे हुवे पीछा दे ऐसे) पाट पराले आदि याचकर लाया हो. वसे एक मकान को छोड दूसरे मकान में जाते तथा एक ग्राम छोड दूसरे ग्राम जाते जिस गृहस्थ की वह वस्तु है उस को पूछे बिना ग्रहण कर लेजाना कल्पता नहीं है ॥ ६ ॥ परंतु साधु साध्वी गृहस्थ के यहां से पडिहार पाट पाटला पराल जो लाये हैं वे दूसरे मकान में या दूसरे ग्राम में लेजाना हो तो उन की आज्ञा मांगकर वे आज्ञा दे तो बाहिर लेजाना कल्पता है ॥ ७ ॥

सू॰ वहिया णिहरित्तए ॥ ७ ॥ नो कप्पति निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा पडिहारियंवा सागारिय संतियं वा सेज्जासंथारगं पच्चप्पिणित्ता दोच्चंपि तमेव उग्गहं अणुण्णवेत्ता अहिट्ठित्तए ॥ ८ ॥ कप्पति निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा पडिहारियंवा सागारियं संतियंवा सेज्जासंथारयं पच्चप्पिणित्ता दोच्चंपि उग्गहं अणुण्णवेत्ता अहिट्ठित्तए ॥ ९ ॥ नो कप्पति निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा पुव्वामेव उग्गहं ओगिणित्ता ततोपच्छा अण्णुणवित्ता. कप्पति निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा पुव्वामेव उग्गहं अण्णुणवित्ता तत्तोपच्छाओ गिणित्ताएवा

अर्थ साधु साध्वी किसी स्थान में रहे वहां रहे पाट पाटला पराल मकान की आज्ञा ग्रहण की है. उस में से अधिक लेवे नहीं, तथा जितने पाटादि की आज्ञा उस गृहस्थ का पीछा सुपरत करदी है और उनको पीछा दूसरी वक्त चाहा होवे तो गृहस्थ की आज्ञा ग्रहण किया विना भोगवना नहीं कल्पता है ॥ ८ ॥ परंतु साधु साध्वी को फिर उन को गर्ज हो तो पीछी याचना करनी आज्ञा लेनी वह आज्ञा दे तो उन को भोगवना कल्पता है ॥ ९ ॥ स्थानक पाट पाटले के मालिक की प्रथम आज्ञा लिया विना स्थान में उतरना पाट पाटले भोगवना नहीं कल्पता है. परंतु प्रथम भंडोपकरण अपने शरीर परही धारन किये हुवे मकान पाट पाटला पराल जो कल्पता उस की आज्ञा याचले, फिर उस मकान में उतरे पाट पाटला पराल भोगवे ॥ कदाचित ऐसा ही प्रसंग आजावे कि यहां यह उतारे के लिये एक ही मकान है दूसरा मकान

सूत्र

अहापुण एवं जाणेज्जा, इह खलु निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा णो सूलभे सेज्जासंथा-रए तिकट्टु एवंण कप्पति पुव्वामेव उग्गहं उगिण्हता ततोपच्छा अणुणाविता माहुहुओ अज्जोवात्तियं अणुलोमेणं अणुलोमेयव्वेमिया ॥ १० ॥ निग्गंथस्स गाहावति कुलं पिंडवाय पडियाए अणुप्पविट्ठस्स अहालहुस्सए उवकरणजाए परिभट्ठसिया तंच केइ साहंमिया पासेज्जा कप्पति से सागारकडंगहाय जत्थेवते अण्णमण्ण पासेज्जा,

अर्थ

मिलने का असंभव है. और यहां जो जगासंभालने में देर हो जावेगी तो अन्य कापादिया दिक आजावेंगे जिस से फिर जगा हाथलगनी मुशकिल हो जावेगी, एसा अवसर देखतो आज्ञा लिया बिना ही प्रथम वहां भंडोपकरण की स्थापना करे फिर आज्ञा लेने जावे, इतने में वह ग्रहस्थ कोपायमान हो लडने लग जावे और साधुओं उसे कठोर वचन कर उत्तर देते हों तो आचार्य अपने साधुओं को कहे कि एक तो इस के मकान में बिना पूछे उतरे और दूसरा कठोर वचन कहते हो, यह योग्य नहीं है, काम मीठास से होता है, इत्यादी कोमल वचन कर संतोषित करे ॥ १० ॥ किसी स्थान बहुत से साधु रहे उन में से कोइ साधु ग्रहस्त के वां किसी भंडोपकरण को भूल आया, फिर दूसरा कोइ साधु वहां गया हो तब गृहस्थ उनको देकर कहे कि यह भंडोपकरण आप के साधुकाइ भूले जाओ. तब वह साधु उस भंडोपकरण को लेकर उपाश्रय आवे, सब साधुओं को बतावे कि यह जिस का होवे वह ग्रहण करो. तब जो कोइ साधु साध्वी

अहियाणिहरित्तए॥७॥ नो कप्पति निग्गंथाणंवा निग्गंथीणवा पडिहारियंवा सागारियं सं तियं-
वा सेज्जासंथारगं पच्चप्पिणित्ता दोच्चंपि तमेव उग्गहं अणुण्णवेत्ता अहिट्ठित्तए ॥ ८ ॥
कप्पति निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा पडिहारियंवा सागारियं संतियंवा सेज्जासंथारयं
पच्चप्पिणित्ता दोच्चंपि उग्गहं अणुण्णवेत्ता अहिट्ठित्तए ॥ ९ ॥ नो कप्पति निग्गं-
थाणवा निग्गंथीणवा पुव्वामेव उग्गहं ओगिण्हित्ता ततोपच्छा अणुण्णविज्जा. कप्पति
निग्गंथाणंवा निग्गंथीणवा पुव्वामेव उग्गहं अणुण्णवित्ता तत्तोपच्छाओ गिण्हित्ताएवा

अर्थ साधु साध्वी किसी स्थान में रहे वहां रहे पाट पाटला पराल मकान की आज्ञा ग्रहण की है. उन में से अधिक लेवे नहीं, तथा जितने पाटादि की आज्ञा उन गृहस्थ को पीछी सुपरत करदी है और उनको पीछी दूसरी वक्त चहा होवे तो गृहस्थ की आज्ञा ग्रहण किया विना भोगवना नहीं कल्पता है ॥ ८ ॥ परंतु साधु साध्वी को फिर उन को गर्ज हो तो पीछी याचना करनी आज्ञा लेनी वह आज्ञा दे तो उन को भोगवना कल्पता है ॥ ९ ॥ स्थानक पाट पाटले के मालक की प्रथम आज्ञा लिया विना स्थान में उतरना पाट पाटले भोगवना नहीं कल्पता है. परंतु प्रथम भंडोपकरण अपने शरीर परही धारन किये हुवे मकान पाट पाटला पराल जो कल्पता उस की आज्ञा याचले, फिर उस मकान में उतरे पाट पाटला पराल भोगवे ॥ कदाचित ऐसा ही प्रसंग आजावे कि यहां यह उतारे के लिये एक ही मकान है दूसरा मकान

सूत्र

अहापुण एवं जाणेज्जा, इह खलु निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा णो सूलभे सेज्जासंथारए तिकट्टु एवंण कप्पति पुव्वामेव उग्गहं उगिण्हता ततोपच्छा अणुणविता मादुहओ अजोवाचियं अणुलोमेणं अणुलोमेयव्वेमिया ॥ १० ॥ निग्गंथस्स गाहावति कुलं पिंडवाय पडियाए अणुप्पविट्ठस्स अहालहुस्सए उवकरणजाए परिभट्ठसिया तंच केइ साहंमिया पासेज्जा कप्पति से सागारकडंगहाय जत्थेवते अण्णमण्ण पासेज्जा,

अर्थ

मिलने का असंभव है. और यहां जो जगासंभालने में देर हो जावेगी तो अन्य कापाडिया दिक आजावेंगे जिस से फिर जगा हाथलगनी मुशकिल हो जावेगी, एसा अवसर देखेतो आज्ञा लिया बिना ही प्रथम वहां भंडोपकरण की स्थापना कर फिर आज्ञा लेने जावे, इतने में वह ग्रहस्थ कोपायमान हो लडने लग जावे और साधुओं उसे कठोर वचन कर उत्तर देते हो तो आचार्य अपने साधुओं को कहे कि एक तो इस के मकान में बिना पूछे उत्तरे और दूसरा कठोर वचन कहते हो, यह योग्य नहीं है, काम मीठास से होता है, इत्यादी कोमल वचन कर संतोषित करे ॥ १० ॥ किसी स्थान बहुत से साधु रहे उन में से कोइ साधु ग्रहस्त के घर किसी भंडोपकरण को भूल आया, फिर दूसरा कोइ साधु वहां गया हो तब गृहस्थ उनको देकर कहे कि यह भंडोपकरण आप के साधुकोइ भूले जाते, तब वह साधु उस भंडोपकरण को लेकर अपने स्थान आवे, सब साधुओं को बतावे कि यह जिस का होवे वह ग्रहण करो. तब जो कोइ साधु साध्वी

सूत्र

तत्थव एव वदेज्जा इमंते अज्जो ! किंपरिणाए ? सेय वदेज्जा परिण्णाए तस्सेव परिणिज्जा यव्वेसिया, से वदेज्जा णो परिणाए त णो अप्पणा परिभुंजए णो अन्नसिंदावए एगंत बहु फासुए पदेसे पाडिलेहिंचा परिट्ठवेसिया ॥ ११ ॥ निग्गंथस्स बहिया विहारभूमिंवा वियारभूमिंवा णिक्खंतस्स अहालहुसए उवगरणजाए परिभट्ठेसिया तंचेव कईसाहम्मिया पासेज्जा, कप्पातिसे सागारकडगहाय जत्थेवते अण्णमण पासेज्जा तत्थेव एवं वएज्जा, इमंते अज्जो ! किं परिण्णाए ?

अर्थ

कबूल करे कि हां यह मेरी नेश्राय का है मैं भूल आया, तब उस के सुपत करे. और वे सब ही कहे कि हम को मालुम नहीं यह किस का है, तब उस भंडोपकरण को वह लाने वाला साधु भी नहीं भोगवे दूसरे साधु साध्वी को भी नहीं देवे परंतु एकान्त फासुक बहुत निर्दोष स्थान देखकर पूंजकर उस भंडोपकरण को परिठा देवे ॥ ११ ॥ साधु साध्वी ग्रामानुग्राम फिरते हुवे किसी स्थान कोई भंडोपकरण भूल जावे और पीछे से कोई साधु आवे उसे भंडोपकरण गृहस्थ देवे तब उसे गृहस्थ का पक्का ग्रहण कर जावे अन्य बहुत साधु होवे वहां जाकर उसे बतावे, तब वे साधु साध्वी कहे हमारा नहीं है अमुक का है तब साधु उस के पास जावे वह भी कहे कि मेरे को मालुम नहीं यह किस का है, तब वह भंडोपकरण लाने वाला साधु उस को आप भी नहीं भोगवे दूसरे को भी नहीं देवे परंतु एकान्त में जाकर फासुक निर्दोष

सूत्र

? सेय वएज्जा परिणाए, तस्सेव परिणिज्जायव्वेसिया, सेयंवएज्जा णो परिणाए तं नो अप्पणापरिभुंजए णो अण्णेहिं दावए एगंते बहुफासुए पदेसे पडिलेहित्ता परिट्ठवेयव्वेसिया ॥ १२ ॥ निग्गंथस्स गामाणुगामं दूइज्जमाणस्स अन्नयरे उवकरणजाए परिभट्ठेसिया, तंच केइ साहम्मिया पासेज्जा कप्पति से सागारकडं गहाय, दूरमवि अद्धाणं परिवहित्तए, जत्थेव अण्णमण्ण पासेज्जा तत्थेव एवं वएज्जा, इमेते अज्जो ! किं परिणाए ? सेय वदेज्जा परिणाए, तस्सेव परिणिज्जायव्वेसिया, सेय वएज्जा णो परिणाए, तं नो अप्पणापरिभुंजए, णो अण्णेहिं दावए, एगंते बहुफासुए

अर्थ

स्थानक प्रतिलेखकर पुंजकर यत्ना से परिठ देवे ॥ १२ ॥ साधु साध्वी उपाश्रय के बाहिर थंडील की भूमी का, अथवा स्वाध्याय की भूमि का में गमनागमन करते हुवे कोई छोटा [illegible] उपकरण भूल आवे वह किसी साधु साध्वी के जाते आते दृष्टी आवे तो जो [illegible] गृहस्थ की आज्ञा लेकर ग्रहण कर स्थान आवे, और साधु साध्वी को कहे कि अहो आर्यो ! यह उपकरण किस का है ? तब जो कोई कहे यह मेरा है. तो जिस का हो उस को देवे. और वे साधु साध्वी बोले कि हमारे का नहीं मालुम यह किस का है. तब उस को न तो आप भोगवे और न अन्य को दे परंतु एकांत अचित्त फासुक भूमी का देखकर परिठा देवे (उपकरण परिठाने का कारण यह

पदेसे पडिलेहित्ता परिट्ठवेयव्वेसिया ॥ १३ ॥ कप्पति निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा अतिरेगं पडिग्गहं अण्णमण्णस्स अट्ठाए दुरमवि अद्धाणं परिवाहित्तए, सोवाणं धारिस्सइ अहवा ण धारिस्सामि अण्णेवाणं धारिस्सइ नो से कप्पति ते अणापुच्छियस्स अणानिमंतिय अण्णमण्णेसिं दाओवा अणुप्पदाओवा, कप्पति सेतं आपुच्छियं आमंतिय अण्णमण्णेसिं दाओवा अणुप्पदाओवा ॥ १४ ॥ अट्ठकुक्कडअंडग प्पमाणमित्ते कवले आहारं आहारमाणे समणे णिग्गंथे अप्पाहारे, दुवालस्सक कुक्कड अंडग पमाणमित्ते कवले आहारं आहारमाणे समणे णिग्गंथे अवड्ढोमोयरिया, सोलस्सकुक्कड-अंडगप्प-

बताया है कि उनसाधु के पास मर्यादित उपकरण होने से, अधिक रख सकते नहीं है इसलिये परिठा देवे) ॥ १३ ॥ कोई साधु साध्वी को कहीं पात्रादि की प्राप्ती हुई हो तब वह विचारे कि मेरे तो खप नहीं है परन्तु अमुक साधु को खप है इस लिये यह लेलूं, यों विचार कर उस ले लेवे और जिस ग्राम में वह साधु होवे वहां आवे. तब वह कहे कि मेरे को तो खप नहीं है, तब वहां पर जो वह साधु होवे उन के पास ले जावे उन को बताये बिना दूसरे को आमंत्रण करना नहीं कल्पता है परंतु वह साधु को बताये बाद वे कहे कि जिस को खपता हो उसे दे दो, तो जिस को खपता होवे उस को वह पात्रादि देवे ॥ १४ ॥ १ साधु निग्रंथ कूकड अंड प्रमाण एक ग्रास ऐसे आठ ग्रास लेवे तो अल्प आहारी, २ कूकड के अंड

सूत्र

माणमित्ते कवले आहारं आहारमाणे समणे णिग्गंथे दुभागपत्ते, चउव्वीसं कुक्कड अंडगप्पमाणमित्ते, कवले आहारं आहारमाणे समणे णिग्गंथे पत्तोमोयरियां ॥ बत्तीसं कुक्कड अंडगप्पमाणमित्ते कवले आहारं आहारमाणे समणे णिग्गंथे प्पमाणपत्तेरिएत्तो, एगेणविघासेणं ऊणगं आहारं आहारमाणे समणे णिग्गंथे णो पगमरस भोईतिवत्तव्वसिया ॥ त्तिबेमि ॥ त्रिवहार सूयरस अट्ठमोद्देसो सम्मत्तं ॥ ८ ॥ * * * *

अर्थ

प्रमाण बारा कवल का आहार करे तो पोण उणोदरी तप, कुकड के सोलह अंड प्रमाण जो साधु आहार करे तो उसे आधी उणोदरी तप कहना, कुकड के अंड प्रमाण चौवीस ग्रास का आहार करे तो उस को पाव उणोदरी तप कहना, कूकड के अंड प्रमाण एक ग्रास ऐसे बत्तीस ग्रास का आहार करे उन, साधु को प्रमाणोपेत आहार का करनेवाला कहना, और बत्तीस ही ग्रास में से एक ही ग्रास कमी आहार करनेवाला साधु होवे तो उस कोपग्रामरम का भोक्ता नहीं कहना. अर्थात् उणोदरी तप करनेवाला कहना. यह नीशीथ सूत्र का आठवा उद्देशा संपूर्ण हुवा ॥ ८ ॥

सूत्र

पदेसे पडिलेहित्ता परिट्ठवेयव्वोसिया ॥ १३ ॥ कप्पति निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा अतिरेगं पडिग्गहं अण्णमण्णस्स अट्ठाए दुरमवि अद्धाणं परिग्गहित्तए, सोवाणं धारिस्सइ अहवा ण धारिस्सामि अण्णेवाणं धारिस्सइ नो से कप्पति ते अणापुच्छियत्वा अणाभिमंतिय अण्णमण्णेसिं दाओवा अणुप्पदाओवा, कप्पति सेतं आपुच्छियं आमंतिय अण्णमण्णेसिं दाओवा अणुप्पदाओवा ॥ १४ ॥ अट्ठकुक्कडअंडग प्पमाणमित्ते कवले आहारं आहारेमाणे समणे णिग्गंथे अप्पाहारे, दुवालसस कुक्कड अंडग पमाणमित्ते कवल आहारं आहारेमाणे समणे णिग्गंथे अवड्ढोमोयरिया, सोलसकुक्कड अंडगप्प-

अर्थ

बताया है कि उन साधु के पास मर्यादित उपकरण होने से, अधिक रख सकते नहीं हैं इसलिये परिठा देवे) ॥ १३ ॥ कोई साधु साध्वी को कहीं पात्रादि की प्राप्ती हुई हो तब वह विचारे कि मेरे तो खप नहीं है परन्तु अमुक साधु को खप है इस लिये यह लेलूं, यों विचार कर वस्त्र ले लेवे और जिस ग्राम में वह साधु होवे वहां आवे. तब वह कहे कि मेरे को तो खप नहीं है, तब वहां पर जो बड़े साधु होवे उन के पास ले जावे उन को बताये विना दूसरे को आमंत्रण करना नहीं कल्पता है परंतु बड़े साधु को बताये बाद वे कहे कि जिस के खपता हो उसे दे दो, तो जिस को खपता होवे उस को वह पात्रादि देवे ॥ १४ ॥ १ साधु निर्ग्रंथ कूकड अंड प्रमाण एक ग्रास ऐसे आठ ग्रास लेवे तो अल्प आहारी, २ कूकड के अंड

सूत्र माणमित्ते कवले आहारं आहारेमाणे समणे णिग्गंथे दुभागपत्ते, चउव्वीसं कुक्कुड अंडगप्पमाणमित्ते, कवले आहारं आहारमाणे समणे णिग्गंथे पत्तोमोयरिया ॥ बत्तीसं कुक्कड अंडगप्पमाणमित्ते कवले आहारं आहारमाणे समणे णिग्गंथे पमाणपत्तेरिएत्तो, एगेणविघासेणं ऊणगं आहारं आहारेमाणे समणे णिग्गंथे णो पकामरस भोईतिवत्तव्वं-सिया ॥ त्तिबेमि ॥ त्रिवहार सूयस्स अट्ठमोद्देसो सम्मत्तं ॥ ८ ॥ * * * *

अर्थ प्रमाण बारा कवल का आहार करे तो पोण उणोदरी तप, कुकड के सोलह अंड प्रमाण जो साधु आहार करे तो उसे आधी उणोदरी तप कहना, कुकड के अंड प्रमाण चौवीस ग्रास का आहार करे तो उस को पाव उणोदरी तप कहना, कूकड के अंड प्रमाण एक ग्रास ऐसे बत्तीस ग्रास का आहार करे उन साधु को प्रमाणोपेत आहार का करनेवाला कहना, और बत्तीस ही ग्रास में से एक ही ग्रास कमी आहार करनेवाला साधु होवे तो उस कोपग्रामरस का भोक्ता नहीं कहना अर्थात् उणोदरी तप करनेवाला कहना. यह नीशीथ सूत्र का आठवा उद्देशा संपूर्ण हुवा ॥ ८ ॥

॥ नवमम् उद्देशा ॥

सागारियस्स आ. अंतोवगडाए भुंजते णिट्ठिए णिसिट्ठे पाडिहारिए तम्हा दावए, नो से कप्पति पडिग्गाहित्तए ॥ १ ॥ सागारियस्स आएसे अंतो वगडाए भुंजाति णिट्ठिए णिसिट्ठे अपाडिहारिए तम्हा दावए, एवं से कप्पति पडिग्गाहित्तए ॥ २ ॥ सागारियस्स आएसे बाहिं वगडाए भुंजए णिट्ठिए णिसिट्ठे पाडिहारिए तम्हा दावए मा.रे

अर्थ शैय्यांतर के यहां पाहुने आये उन के लिये आहार निपजाया उन को जीमने को घर के अंदर बाड़ा आदि में बैठाये और उन को वह आहार देदिया, देकर बोले कि इस में से तुमारे को भावे जितना खाओ बचेसो पीछा हमको देदेना, वह आहार पाहुना जीम लिये बाद आहार बचा हो वह साधु को देना चहावे तो वह आहार साधु को नहीं कल्पता है, क्यों कि बचा वह शैय्यांतर का है ॥ १ ॥ शैय्यांतरने पाहुणे जीमाये घर के अन्दर बाड़ा आदि स्थान में बैठाये, उन को आहार आदि देकर बोला तुमारे को खपे सो खाना बाकी बचे उस का तुमारी इच्छा मुवाफिक करना, हमारे काम का नहीं है, वह बचा हुवा आहार साधु को बहरावे तो साधु को लेना कल्पता है, क्यों कि वह शैय्यांतर का नहीं रहा परन्तु उस पाहुणे का होगया ॥ २ ॥ वैसे ही शैय्यांतरने घर के बाहिर पाहुणे को जीमने बैठाये और मावनारि

सूत्र

कप्पति पडिगाहित्तए ॥ ३ ॥ सागारियस्स आएसे बाहिंवगडाई भुञ्जइ णिट्ठिए णिसिट्ठे अपाडिहारिए तम्हा दावए एवं से कप्पति पडिगाहित्तए ॥ ४ ॥ सागारियस्स दासेइवा पेसेइवा आयेइवा, भाइणइवा, अंतोवगडाए भुञ्जइ णिट्ठिए णिसिट्ठे पाडिहारिए तम्हा दावए नोसे कप्पति पडिग्गाहित्तए ॥ ५ ॥ सागारियस्स दासेतिवा पेसेतिवा भयएतिवा, भतिण्णतिवा, अंतोवगडाए भुञ्जति णिट्ठिए णिसिट्ठे

अर्थ

पडिहारादिया अर्थात् ज्यादा होगा वह हमको पीछा देदेना, और वह आहार बचा हो वो साधु को लेना नहीं कल्पता है ॥ ३ ॥ शैय्यातरने पाहुणे को घर के बाहिर जीमने को बैठाये भोजनादि परुषादिया और कहा ज्यादा हो तो हम नहीं लेंगे तुमारी इच्छा प्रमाने करना. वह बचा हुवा आहार जो साधु को वेहरावे तो लेना कल्पता है. यह पाहुणा के चार सूत्र कहे ॥ ४ ॥ अब दासादि के कहते हैं. शैय्यातर के यहां काम करने वाले दास दासी जावजीव तक काम करने वाले, पेसक, पेसिका (नोकर मर्यादित काल प्रमाण काम करने वाले) उन के वास्ते आहार निपजाया उन को खाने को दिया घर के अंदर बडे आदि में जीमने को बैठाये और कहा कि तुमारे को मर्जी जितना खाना बाकी बचे वह हमारे को पीछा देदेना. वे बचा हुवा आहार जो साधु को वेहरावे तो ग्रहण करना नहीं कल्पता है ॥ ५ ॥ शैय्यातर के दास प दे घर के अं र ब ादि में जीमने को बैठाये और कहा यह तुमारा है

अपाडिहारिए तम्हा दावए एवं से कप्पति पडिग्गाहित्तए ॥ ६ ॥ सागारियस्स दासे इवा पेसेइवा भयइवा भईणीइवा बाहिंवगडाए भुंजति णिट्ठिए णिसिट्ठे पाडिहारिए तम्हा दावए नो से कप्पति पडिगाहित्तए ॥ ७ ॥ सागारियस्स दासेतिवा पेसेइवा भएइवा भगिणिइवा, बाहिंवगडाए भुंजइ णिट्ठिए णिसिट्ठे अपाडिहारिए तम्हा दावए एवं से कप्पति पडिग्गाहित्तए ॥ ८ ॥ सागारियस्स णायएसिया सागारियस्स एगवगडाए अंतो सागारियस्स एगवगडाए सागारियंच उवजीवइ तम्हा दावए नो

पडेगा तो हमारे काम का नहीं है. उन के भोगवे बाद वह आहार बढजावे-पे साधु को देवे तो ऐसा कल्पता है ॥ ६ ॥ शैय्यांतर के दास प्रेसक घर के बाहिर जीमने बैठे हैं उन को पडिहारा आहार आदिक दिया है. वह अधिक हुवे साधु को वहरावे तो ग्रहण करना नहीं कल्पता है ॥ ७ ॥ शैय्यांतर के दास प्रेसक घर के बाहिर भोजन करने बैठाये उन को भोजन देकर कहदिया कि इस का तुमारी इच्छा सो करो हम नहीं लेंगे, वह साधु को वहरावे तो ग्रहण करना कल्पता है ॥ ८ ॥ अब शैय्यांतर के स्वजनों आश्रिया कहते हैं—शैय्यांतर के स्वजन ज्ञातीजन सम्बन्धी यों एक ही घर में रहते होवें एक ही चूले पर एक ही भाजन में जिन का भोजन तैयार होता होवे, उस से कर के सब आजीविका करते होवें उस

सूत्र

से कप्पति पडिगाहित्तए ॥ ९ ॥ सागारियस्स णायएसिया सागारियस्स एगवगडाए अंतो सागारियस्स अभिणिणयाए सागारियंच उवजीवति तम्हा दावए नोसे कप्पति पडिगाहित्तए ॥ १० ॥ सागारियस्स णायए सिया सागारियस्स एगवगडाए बाहिं सागारियस्स एगपयाए सागारियंच उवजीवति तम्हा दावए नो से कप्पति पडिगाहित्तए ॥ ११ ॥ सागारियस्स णायएसिया सागारियस्स एगवगडाए बाहिं सागारियस्स अभिभिणयाए सागारियंच उवजीवति तम्हादावए नोसे कप्पति पडिगा-

अर्थ

भोजन में से साधु को देवे तो ग्रहण करना कल्पता नहीं है. ॥ ९ ॥ शैय्यांतर के स्वजन ज्ञातीजन सम्बन्धी एक ही घर में रहते होवें, एक ही चूले-पर जिन के लिये आहार होता होवे, उन का पानी प्रमुख भी मेला होवे. परन्तु अलग २ भाजन में आहार रांधते होवें, वे उन से उपजीविका करते होवे वह आहार साधु को देवे तो ग्रहण करना नहीं कल्पता है ॥ १० ॥ शैय्यांतर के स्वजन ज्ञातीजन सम्बन्धी एक ही मकान में रहते होवें. परन्तु शैय्यांतर के घर के बाहिर चूल्हे पर सब का आहार शामिल तैयार होता हो, उस से वे उपजीविका चलाते होवें, उस में से साधु को देवे तो ग्रहण करना नहीं कल्पता है ॥ ११ ॥ शैय्यांतर के ज्ञाती स्वजन सम्बन्धी एक ही घर में रहते होवें परन्तु उन के आहार निपजाने के चूले अलग २ हों परंतु पानी रखने के पानी भरने के पात्र एक ही होवें. इस प्रकार के

हित्तए ॥ १२ ॥ सागारियस्स णायएसिया सागारियस्स अभिनिव्वगडाए एगदुवाराए एगनिक्खमणपवेसाए अंतो सागारियस्स एगपयाए सागारियं च उवजीवइ तम्हा दावए नोसे कप्पति पडिगाहित्तए ॥ १३ ॥ सागारियस्स णायएसिया सागारियस्स अभिनिव्वगडाए एगदुवाराए एगनिक्खमणपवेसाए अंतोसागारियस्स अभिनिपयाए सागारियंच उवजीवति, तम्हा दावए नोसे कप्पति पडिगाहित्तए ॥ १४ ॥ सागारियस्स

उपजीविका करते होवे, उस में से साधु को बहरावे तो ग्रहण करना नहीं कल्पता है ॥ २२ ॥ [illegible] तो एक घर आश्रिय कहा, अब अलग २ घर आश्रिय कहते हैं. शैय्यातर के ज्ञातिजन स्वजन सम्बन्धीयों होवे वे सब अलग २ घर में रहते होवे, परंतु उन सब घरों के निकलने का प्रवेश करने का एक ही रास्ता होवे. सब का एक ही चूले पर भोजन तैयार होता हो, एक ही बरतन में पानी रहता हो, इस प्रकार वे आजीविका करते हो उन में से कोई साधु को आहार पानी देवे तो लेना कल्पता नहीं है ॥ २३ ॥ शैय्यातर के स्वजन ज्ञातिजन सब अलग २ घरों में रहते होवे, सब घरों का एक ही द्वार होवे. एक ही द्वार से निकलते प्रवेश करते होवे. परंतु अन्दर सब घरों वालों के आहार पचाने का चूले अलग होवे परंतु अन्दर पानी का बरतन सब ही का एक होवे अर्थात् सब का भेला पानी रहते होवे इस प्रकार वे आजीवि का करते होवे, उस में से कोई साधु को आहार देवे तो लेना कल्पता नहीं है ॥ २४ ॥ शैय्यातर के ज्ञाती स्वजन

पायएसिया सागारियस्स अभिभिवगडाए एगदुवाराए, एगनिक्खमणपवेसाए बाहिंसा-गारियस्स एगप्पयाए सागारियंच उवजीवति, तम्हा दावए नोसे कप्पति परिगाहित्तए ॥ १५ ॥ सागारियस्स णायएसिया सागारियस्स अभिभिवग-डाए एगदुवाराए एगनिक्खमणपवेसाए बाहिं सागारियस्स अभिक्षिप्पयाए सागारियंच उवजीविति तम्हादावए एवं से नो कप्पति पडिगाहित्तए ॥ १६ ॥ सागारियस्स

अलग २ घर में रहते हों उन के कोटडी-कमरे अलग २ हों परंतु बाडे का एक ही द्वार हो निकलने प्रवेश करने का रास्ता एक ही हो, उन के भोजन पकाने का चूला एक हो परंतु पानी का भाजन अलग २ हो उस में से कोइ साधु को आहार आदि देवेतो ग्रहण करना कल्पता नहीं है ॥ १५ ॥ शय्यांतर के ज्ञाति स्वजन हो अलग २ घर में रहते हों घरों के द्वार अलग २ हो परंतु बाडे का द्वार एक हो निकलने का प्रवेश करने का रास्ता एक हो, सब के पचने के चूले अलग २ हो, उन का पानी भी अलग २ होवे, परंतु निमक मिरची मसाला एक ही बरतन में मेला रहता हो, इस प्रकार आहार निपजाकर आजीविका करते हो उस में से कोई साधु को आहार देवे तो ग्रहण करना कल्पता नहीं है ॥ १६ ॥ अब शैयांतर की वस्तु का कहते हैं, शैयांतर की तेल बेचने की दुकान है, वहां तेल बेचनेवाला अन्य कोई है, परंतु

वक्कियसाला साहारण वक्कयपउत्ता तम्हा दावए नो से कप्पति पडिगाहित्तए ॥१७॥ सागारियस्स वक्कियसाला णिस्साहरणं वक्कयपओत्ता तम्हा दावए एवं से कप्पति पडिगाहित्तए ॥ १८ ॥ सागारियस्स गोलियसाला साहरण वक्कयपओत्ता तम्हा दावए नो से कप्पति पडिगाहित्तए ॥ १९ ॥ सागारियस्स गोलियसाला निस्साहरणं वक्कयपओत्ता तम्हा दावए एवं से कप्पति पडिगाहित्तए ॥२०॥ सागारियस्स बोधियसाला साहारण वक्कयपओत्ता तम्हा दावए नो से कप्पति पडिगाहित्तए ॥ २१ ॥

शैय्यांतर का उस में विभाग (हिस्सा-पाती) है उस का क्रय विक्रय होता है वह बेचनेवाला उस में से तेल साधु को देवे तो ग्रहण ना करना कल्पता नहीं है ॥ १७॥ शैय्यांतर की दुकान है परंतु तेल बेचनेवाला अन्य है उस में शैय्यांतर का हिस्सा-पाती नहीं है, क्रय विक्रय करता का मालकी है, वह उस में से तेल साधु को देवे तो वह ग्रहण करना कल्पता है ॥ १८ ॥ शैय्यांतर की गुड बेचने की दुकान है उस में शैय्यांतर का भाग-हिस्सा है, वह क्रय विक्रय युक्त है, उस में से गुड साधु को देवे तो वह ग्रहण करना कल्पता नहीं है ॥ १९ ॥ शैय्यांतर की गुड बेचने की दुकान है परंतु उस में शैय्यांतर का कुछ हिस्सा नहीं है क्रय विक्रय करनेवाला का ही सब इख्तयार है वह जो साधु को गुड देवे तो ग्रहण करना कल्पता है ॥ २० ॥ शैय्यांतर की किराने की दुकान है उस में शैय्यांतर का हिस्सा है क्रय विक्रय होता है उस में से कोई चीज साधु को देवे तो वह लेना कल्पता नहीं है ॥ २१ ॥ शैय्यांतर की

सूत्र

सागारिया चोथिसाला निसाहरण वक्कयप्पओत्ता तम्हा दावए एवं से कप्पति पडिगाहि त्तए ॥ २२ ॥ सागारियस्स दोसियसाला साहरण वक्कयप्पओत्ता तम्हा दावए नोसे कप्पति पडिगाहित्तए ॥ २३ ॥ सागारियस्स दोसियसाला निसाहरण वक्कयप्पओत्ता तम्हा दावए एवं से कप्पति पडिगाहित्तए ॥ २४ ॥ सागारियस्स सोतियसाला साहरण वक्कयप्पओत्ता, तम्हा दावए नोसे कप्पति पडिगाहित्तए ॥ २५ ॥ सागारियस्स सोतियसाला निसाहरण वक्कयप्पओत्ता तम्हा दावए एवं से कप्पति पडिगा-

अर्थ

किराने की दुकान हो परंतु उस में शय्यातर का हिस्सा नहीं है, क्रय विक्रय करनेवाला भी मालक होवे उस में से साधु को कोई वस्तु देवे तो लेना कल्पता है ॥ २२ ॥ शय्यातर के कपडे की दुकान होवे, उस पर क्रय विक्रय करनेवाला अलग हो, परंतु उस में शय्यातर का हिस्सा हो तो, उस दुकान में से कपडा साधु को लेना कल्पता नहीं है ॥ २३ ॥ शय्यातर की कपडे की दुकान हो उस पर व्यापार दूसरा करता है, उस में शय्यातर का हिस्सा नहीं हो, देनेवाला भी दूसरा हो तो उस में से वस्त्र साधु को लेना कल्पता है ॥ २४ ॥ शय्यातर के सूत की दुकान हो व्यापार दूसरा करता हो परंतु उस में शय्यातर का हिस्सा हो उस में से कोई सूत देवे तो साधु को लेना कल्पता नहीं है ॥ २५ ॥ शय्यातर की सूत की दोरे की दुकान हो क्रय विक्रय दूसरा करता हो उस में शय्यातर का भाग नहीं

हिचए ॥ २६ ॥ सागारियस्स बोडियसाला साहारणविक्कय पओत्ता तम्हा दावए नो से कप्पति पडिगाहित्तए ॥ २७ ॥ सागारियस्स बोडियसाला निसाहारण वक्कयप्प-ओत्ता तम्हा दावए एवं कप्पति पडिगाहित्तए ॥ २८ ॥ सागारियस्स गंधियसाला साहारण वक्कयप्पओत्ता तम्हा दावए नो से कप्पति पडिगाहित्तए ॥ २९ ॥ सागा-रियस्स गंधिसालानिसाहारण वक्कयप्पओत्ता तम्हादावए एसे कप्पति पडिगाहित्तए ॥ ३० ॥ सागारियस्स सोडियसाला साहारण वक्कयपओत्ता तम्हादावए नोसे कप्पति

होवे दूसरा ही मालक होवे वह उस में से मूल साधु को देवे तो लेना कल्पता है ॥ २६ ॥ शैय्यांतर की कपास-रुई की दुकान हो, क्रयविक्रय दूसरा करता हो परंतु उस में शैय्यांतर का हिस्सा हो उस में से कोई कपास-रुई साधु को देवे तो लेना कल्पता नहीं है ॥ २७ ॥ २७ ॥ शैय्यांतर की रुई की दुकान है, उसपर क्रयविक्रय दूसरा करता है वही उस का मालक है, शैयांतर का उस में हिस्सा नहीं है, उस में से रुई कपास साधु को देवे तो यह लेना कल्पता है ॥ २८ ॥ शैय्यांतर की गंधी की (औषधियों की) दुकान हो उस में शैयांतर का हिस्सा है, उस में से कोई साधु को देवे तो वह लेना नहीं कल्पता है ॥ २९ ॥ शैयांतर के गांधी की दुकान हो उसपर व्यापार दूसरा करता हो शैयांतर का उस में हिस्सा नहीं होवे, वहां से कोई औषधी देवे तो साधु को लेना कल्पता है ॥ ३० ॥ शैयांतर के भीगार

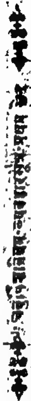


सूत्र

पडिगाहित्तए ॥ ३१ ॥ सागारियस्स सोडियसाला निसाहारण वक्कयपउत्ता तम्हा दावए, एवं से कप्पति पडिगाहित्तए ॥ ३२ ॥ सागारियस्स ओसहिओ संथडाओ तम्हा दावए नोसे कप्पति पडिगाहित्तए ॥ ३३ ॥ सागारियस्स ओसहिओ असंथडाओ तम्हा दावए एवं से कप्पति पडिगाहित्तए ॥ ३४ ॥ सागारियस्स अंबफला संथडाओ तम्हा दावए णो से कप्पति पडिगाहित्तए ॥ ३५॥ सागारियस्स अंबफला असंथडाओ तम्हा दावए एवं से कप्पति पडिगाहित्तए ॥ ३६ ॥ सत्तम॰

अर्थ

(हलवाई) की दुकान हो. उसपर व्यापार दूसरा करता हो, परंतु शय्यांतर का हिस्सा हो तो उस दुकान से मिठाई साधु को लेना नहीं कल्पता है ॥ ३१ ॥ शय्यांतर हलवाई की दुकान हो उस पर व्यापार दूसरा करता हो शय्यांतर का उस में हिस्सा नहीं हो पाचक दूसरा हो, उस में से को मिठाई साधु को देवेतो लेना कल्पता है ॥ ३२ ॥ शय्यांतर के [illegible] का भाजन (हामा-दीमी) हो. उस पर आहार आदि दूसरा निपजाता हो उस में शय्यांतर का हिस्सा है तो वह आहारादि साधु को लेना नहीं कल्पता है ॥ ३३ ॥ शय्यांतर का भोजन की शाला (हामा-दीमी) हो उस में भोजन दूसरा निपजाता हो. उस में शय्यांतर का हिस्सा नहीं होवे पाचक दूसरा होवे और उस में कोई दूसरा आहार आदिक साधु को देवेतो वह लेना कल्पता है ॥ ३४ ॥ वह शय्यांतर



सत्तसत्तमियाणं भिक्खुपडिमाणं एगुणपण्णाए राइदिएहिं एगेणयछण्णउएणं भिक्खासएणं अहासुत्तं अहाकप्पं अहामग्गं अहातच्चं सम्मंकाएणं फासित्ता पालित्ता सोहित्ता किट्टित्ता

क आहार आदि ग्रहण करने का निषेध किया अब साधु की प्रतिज्ञा का अधिकार कहते हैं ॥ सप्तमी भिक्षुकी प्रतिमा के धारण साधु सात दात आहार की और सात दात पानी की ग्रहण करे अर्थात् प्रथम सप्तक में प्रथम दिन एक दात आहार की एक दात पानी ग्रहण करे, दूसरे दिन दो दात आहार की दो दात पानी की ग्रहण करे तीसरे दिन तीन दात आहार की तीन दात पानी को ग्रहण करे यों यावत् सातवे दिन सात दात आहार की सात दात पानी की ग्रहण करे ॥ फिर दूसरे सप्त में प्रथम दिन एक दात आहार की एक दात पानी की यावत् सातवे दिन सात दात आहार की सात दात पानी की ग्रहण यों सात सप्ते तक करे, जिस से दिन ४९ होवे, और दातियों १९६ होवे इस प्रतिज्ञा को यथा सूत्र अर्थात् सूत्र में जिस विधी से आराधने का कहा उस ही विधी प्रमाने आराधे इस का यथा कल्प-अर्थात् जिस प्रकार कल्प है तैसा यथातथ्य कल्प आचार रखे, इस में यथा मार्ग अर्थात् प्रतिज्ञा में प्रवर्तने का जो क्षयोपशम मार्ग है उस में प्रवर्ते उदय भाव निषेध करे इस प्रतिज्ञा को यथातथ्य-अर्थात् जिस प्रकार मरणानुष्ठान आसनादि करने का कहा करे, इस को सम्यक् प्रकार कायाकर स्पर्श किया अर्थात् कथा मात्र नहीं परन्तु कर बताया, शुद्ध उपयोग रख पालन किया, समाप्ती तक

किट्टित्ता आणाए अणुपालित्ता भवति ॥ ३७ ॥ अट्ठम अट्ठमियाणं भिक्खु पडिमाणं चउसट्ठिए रातिदिएणं दोहिय अट्ठासितेहिं भिक्खासतेहिं अहासुत्तं अहाकप्पं अहामग्गं अहातच्चं सम्मंकाएणं फासित्ता पालित्ता सोहित्ता तीरित्ता किट्टित्ता आणाए अणुपालित्ता भवति ॥ ३८ ॥ णवणवमियाणं भिक्खू पडिमाणं एक्कासितेहिं

गुरुके आदेश प्रमाणे शोभित किया जिस उत्साह से ग्रहण किया उसही उत्साह से तीर पार पहोंचाया पारणे दिन समाप्ति के हर्ष युक्त भाराधा, जिस प्रकार इन को करने की जिनेश्वर की आज्ञा है उस ही प्रकार पालन कर सम्पूर्ण किया ॥ ३७ ॥ अब आठवी प्रतिज्ञा कहते हैं. अहो ! आठवी साधु की प्रतिज्ञा आठ सप्ताह तक आठ २ दात आहार की और आठ दात पानी की ग्रहण करे. अर्थात् प्रथम अठवाडिये में प्रथम दिन एक दात आहार की एक दात पानी की दूसरे दिन दो दात पानी की यावत् आठवे दिन आठ दात पानी की. ऐसे ही दूसरे अठवाडिये में और ऐसे ही यावत् आठवे अठवाडिये में जानना. यों इस प्रतिज्ञा में दिन ६४ होते हैं और २८८ दातों होती है. इस को सातवी प्रतिज्ञा प्रमाणे यथा सूत्र यथा कल्प यथा मार्ग यथा तथ्य सम्यक् प्रकार काया से स्पर्श कर पालकर शुद्ध कर तीर पहोंचा, कीर्ति युक्त जिनाज्ञा का अनुपालन करनेवाले होते हैं ॥ ३८ ॥ अब नवमी कहते हैं. नवमी साधु की प्रतिमा नव नवक की नव दात आहार की नव दात पानी की ग्रहण करे अर्थात् प्रथम नवक में प्रथम दिन

सत्तसत्तमियाणं भिक्खुपडिमाणं एगुणपण्णाए राइंदिएहिं एगेणयछण्णउएणं भिक्खासएणं अहासुत्तं अहाकप्पं अहामग्गं अहातच्चं सम्मंकाएणं फासित्ता पालित्ता सोहित्ता तीरित्ता किट्टित्ता

क आहार आदि ग्रहण करने का निषेध किया अब साधु की प्रतिज्ञा का अधिकार कहते हैं ॥ [illegible] भिक्खु की प्रतिमा के धारण साधु सात दात आहार की और सात दाति पानी की ग्रहण करे अर्थात् प्रथम सप्तक में प्रथम दिन एक दात आहार की एक दात पानी ग्रहण करे, दूसरे दिन दो दात आहार की दो दात पानी की ग्रहण करे तीसरे दिन तीन दात आहार की तीन दात पानी की ग्रहण करे यों यावत् सात वे दिन सात दात आहार की सात दात पानी की ग्रहण करे ॥ फिर दूसरे सप्त में प्रथम दिन एक दात आहार की एक दात पानी की यावत् सातवे दिन सात दात आहार की सात दात पानी की ग्रहण यों सात सप्त तक करे, जिस से दिन ४९ होवे और दातियों १९६ होवे इस प्रतिज्ञा को यथा सूत्र अर्थात् सूत्र में जिस विधी से आराधने का कहा उस ही विधी प्रमाने आराधे इस का यथा कल्प-अर्थात् जिस प्रकार कल्प है वैसा यथातथ्य कल्प आचार रखे, इस में यथा मार्ग अर्थात् प्रतिज्ञा में प्रवर्तने का जो क्षयोपशम मार्ग है उस में प्रवर्ते उदय भाव निषेध करे इस प्रतिज्ञा को यथ तथ्य-अर्थात् जिस प्रकार महोगानुष्ठान आसनादि करने का कहा करे, इस को सम्यक् प्रकार कायाकर स्पर्श क्रिया अर्थात् केवल मन से नहीं परन्तु कर बताया, शुद्ध उपयोग रख पालन किया, समाप्ती तक

किट्टित्ता आणाए अणुपालित्ता भवति ॥ ३७ ॥ अट्ठम अट्ठमियणं भिक्खु पडिमाणं चउसट्ठिए रातिदिएणं दोहिय अट्ठासितेहिं भिक्खासतेहिं अहासुत्त अहाकप्पं अहामग्ग अहातच्चं सम्मकाएणं फासित्ता पालित्ता सोहित्ता तीरित्ता किट्टित्ता आणाए अणुपालित्ता भवति ॥ ३८ ॥ णवणवमियाणं भिक्खू पडिमाणं एक्कासितेहिं

गुरु के आदेश प्रमाने शोभित किया जिम उत्साह से ग्रहण किया उसही उत्साह से तीर पार पहोंचाया पारने दिन समाप्ति के हर्ष युक्त भाराधा, जिस प्रकार इन को करने की जिनेश्वर की आज्ञा है उस ही प्रकार पालन कर समाप्त किया ॥ ३७ ॥ अब आठवी प्रतिज्ञा कहते हैं. अहो आठवी साधु की प्रतिमा आठ सप्ताह तक आठ २ दात आहार की और आठ दात पानी की ग्रहण करे, अर्थात् प्रथम अठवाडिये में प्रथम दिन एक दात आहार की एक दात पानी की दूसरे दिन दो दात पानी की यावत् आठवे दिन आठ दात पानी की, एसे ही दूसरे अठवाडाये में और ऐसे ही यावत् आठवे अठवाडाये में जानना. यों इस प्रतिज्ञा में दिन ६४ होते हैं और २८८ दाती होती है. इस को सातवी प्रतिज्ञा प्रमाने यथा सूत्र यथा कल्प यथा मार्ग यथा तथ्य सम्यक् प्रकार काया से स्पर्श कर पालकर शुद्ध कर तीर पहोंचा, कीर्ति युक्त जिनाज्ञा का अनुपालन करनेवाले होते हैं ॥ ३८ ॥ अब नवमी कहते हैं. नवमी साधु की प्रतिमा नव नवेरक की नव दात आहार की नव दात पानी की ग्रहण करे अर्थात् प्रथम नवक में प्रथम दिन

राइदिएहिं चउहिय पंचहुत्तरेहिं भिक्खासतेहिं अहासुत्तं अहाकप्पं जाव अणुपालित्ता भवंति ॥ ३९ ॥ दस दसमियाणं भिक्खुपडिमाणं एकेणराइंदियसएणं अद्धछट्ठेहिय भिक्खासएहिं अहासुत्तं आहातच्चं सम्मंकाएणं फासित्ता पालित्ता सोहित्ता तीरित्ता किट्टित्ता आणाए अणुपालिता भवंति ॥ ४० ॥ दो पडिमाओ पण्णत्ताओ तंजहा-खुड्डियाचेव, मोयपडि-

एक दात आहार की एक दात पानी की, दूसरे दिन दो दात आहार की दो दात पानी की, यावत् नवमे दिन नव दात आहार की और नव दात पानी की. ऐसे ही दूसरे नवक में, ऐसे ही तीसरे नवक में यावत् ऐसे ही नवमे नवक में. यों इस प्रतिज्ञा के ८१ दिन और ४०५ दाती होती है. इस प्रकार इस सूत्र में कहे प्रमाण इस के कहे मुक्त यावत् जिनाज्ञा प्रमाने पालन करनेवाले होते हैं ॥ ३९ ॥ अब [illegible] कहते हैं. दशवी प्रतिमा दश दशके की, साधु दश दात आहार का दश दात पानी की ग्रहण करे, अर्थात् प्रथम दशके के प्रथमदिन एक दात आहार की पानी की एक दात ग्रहण करे यों दशवे दिन दश दाति आहार की दश दाति पानी की ग्रहण करे. ऐसे ही दूसरे दशक में यावत् ऐसे ही दशवे दशके में भी जानना. इस के सब दिन १०० होते हैं. और ५५० दाति होती है. यथा सूत्र यथा कल्प, यथा मार्ग यथा तथ्य सम्यक् प्रकार काया कर स्पर्शी पाला शुद्ध किया और परिपूर्ण कर जिनाज्ञा सहित पालन करने वाले होते हैं ॥ ४० ॥ अब दश पूर्व से लगाकर चौदह पूर्व के पाठक की दो प्रतिमा कहते हैं. वे दो

मा ॥ महाल्लियाणं मोयपडिमा खुड्डियाणं मोयापडिमा पडिवन्नस्स अणगारस्स कप्पति से पढमे सरदकाल समयंसिवा चरिमेणिदहकालसमयंसिवा, बहिया गामस्सवा जाव सन्निवेसस्सवा वणंसिवा विदुग्गंसिवा पव्वयंसिवा पव्वयं विदुग्गंसिवा मोयःआहम्मइ चाइसमेणं पारेति आमोयाआहमति, सोलसमेणं पारेइ. जाएजाएमोए आइयवे दिपाआगच्छइ आइयवे राति आगच्छइ णो आइयवे समाणमचे आगच्छइ णो आइयवे अप्पाणमचे आगच्छइ आइयवे सबीएमचे

प्रकार की प्रतिमा कही है यथा—क्षुल्लक (छोटी) मोक प्रतिमा और महाल्लिका (बड़ी) मोक प्रतिमा इस के चार भेद—द्रव्य से प्रस्रवण (पेशाब) परिठावे नहीं, २ क्षेत्र से ग्राम बाहिर रहे, ३ काल से शीत काल में तथा उष्ण काल में जा करके उसको अंगीकार करे तो चौदह भक्त होवे और जो आहार बिना किये अंगीकार करे तो सोला भक्त होवे. ... न करे तहां पर्यन्त दिनको प्रस्रवण परिठावे नहीं, रात्री को करे नहीं. और ४ भाव से उपसर्ग सहे. इस प्रतिमा के धारने वाले साधु प्रथम शरद काल (मृगशिर) महिने के समय से अन्तिम आषाढ महिने पर्यन्त ग्राम के बाहिर यावत् सन्निवेश के बाहिर, वनकी विषम जगह में, पर्वत में पर्वत के विषम स्थान में आहार पानी कर अंगीकार करे तो चौदह भक्त अर्थात् छ उपवास से पूरी होवे बिना आहार किये अंगीकार करेतो सोले भक्त अर्थात् सात उपवास से पूर्ण

आगच्छइ णो आइयच्चे अवीएमत्ते आगच्छइ आइयच्चे ससणिद्धमत्ते आगच्छइ णो आइयच्चे अससणिद्धमत्ते आगच्छइ आइयच्चे ससरक्खमत्ते, आगच्छइ णो आइयच्चे अससरक्खमत्ते आगच्छइ आइयच्चे जाएजाएमीए आइयच्चे तंजहा-अप्पेवा, बहुएवा, एवं खलु एसा खुड्डियामोय पडिमा. अहासुत्तं जाव अणुपालित्ता भवति ॥ ४१ ॥ महल्लियाणं मोयपडिमं पडिवण्णस्स अणगारस्स कप्पति से पढमे सरदकाल समयंसिवा चरिमे निदहकाल समयांसिवा बाहिया दुइयव्वा

अर्थ—[illegible] पारणाकरे. जो मात्रा दिनको और उसको प्राशन करे और रात्रिको जो मात्रा प्राणी सहित बीज सहित [illegible] करे. और जो बीज रहित आवे तो प्राशन करे. जो मात्र बीर्य सहित आवे तो प्राशन नहीं करे और जो बीर्य रहित आवे तो प्राशन करे. जो मात्र चिकनास सहित आवे तो प्राशन नहीं करे और जो चिकनास रहित आवे तो प्राशन करे. जो रज सहित आवे तो प्राशन नहीं करे और रज रहित आवे तो प्राशन करे, जितनेक थोडा बहुत मात्रा आवे उसको उक्त प्रकार करे, निश्चय से यह क्षुल्लक (छोटी) मोक प्रतिमा को यथा सूत्र आराधे यावत् जिनाज्ञा युक्त और पहोंचावे ॥ ४१ ॥ अब परिमास प्रतिमा कहते हैं. बडी मोक प्रतिमा प्रतिपन्न-अंगीकार करने वाले अनगार १ द्रव्य से मात्रा परिठावे नहीं, २ क्षेत्र से ग्रामादि के बाहिर रहे. ३ काल से सियाले उन्ह ले, आखिर का अंगीकार करे तो सोलाभक्त आहार

सूत्र

गामस्सवा जाव सन्निवेसस्सवा, वणंसिवा वण्णविदुगंसिवा पव्वयंसिवा पव्वयविदुगंसिवा भोचा, आरुभइ सोलसमेणं पारेति अभोचा आरुभति अट्ठारसमेणं पारेति, जाए २ मोए आइच्च तहचेव अणाए अणुपालित्ता भवति ॥ ४२ ॥ संखादातियस्सणं भिक्खुस्स पडिग्गह धारिस्स गाहावतिकुलं पिंडवाय पडियाए अणुपविट्ठस्स जावतियं २ अंतो पडिग्गाहस्स उवित्ता दलएज्जा तावतियाओ ताओ दत्तिओ वत्तव्वसिया,

अर्थ

बिना किये अंगीकार करतो अठारा भक्त, और मोह से उपसर्ग भयन करे, इस प्रकार प्रतिमा अंगीकार करनेवाले अनगार को द्रव्य से शरद काल के मृगशीर्ष महिने से अन्तिम आषाढ़ महिने पर्यंत ग्राम के बाहिर यावत् सन्निवेश के बाहिर वन में वन के कठिन स्थान में पर्वत में पर्वत के कठिन स्थान में, आहार कर के अंगीकार करतो सोला भक्त (सात उपवास) और बिना आहार किये अंगीकार करतो अठारा भक्त (आठ उपवास) बाद पारना करे, तो याथा भ्रत तो वक्ता प्रमाण करे. यावत् इस प्रकार जिनाज्ञा को आराधन करे ॥ ४२ ॥ अब प्रथम जो दात की प्रतिज्ञा कही उस का खुलासा करते हैं. दाती की संख्या का प्रमाण कर ग्रहण कर भिक्षा के लिये गये हुवे साधु को गृहस्थ आहार पानी बहेराता हुवा एक ही वक्त में जितना साधु के पात्र में डाले उसे एक दाति आहार की कहते हैं. फक्त एक चांवल का दाणा गिरजावे तो यही एक दाति गिनी जाती है. ऐसे ही पानी आदि पतला पदार्थ देने की इच्छा से गृहस्थ किसी

आगच्छइ णो आइयव्वे अत्ताएमत्ते आगच्छइ आइयव्वे ससणिद्धमत्ते आगच्छइ णो आइयव्वे अससणिद्धमत्ते आगच्छइ आइयव्वे ससरक्खमत्ते, आगच्छइ णो आइयव्वे अससरक्खमत्ते आगच्छइ आइयव्वे जाएजाएमाए आइयव्वे तजहा-अप्पेवा, बहुएवा, एवं खलु एसा खुड्डियामोय पडिमा, अहासुत्तं जाव अणुपालित्ता भवति ॥ ४१ ॥ महल्लियाणं मोयपडिमं पडिवण्णस्स अणगारस्स कप्पति से पढमं सरदकाल समयंसिवा चरिमे निदहकाल समयंसिवा बहिया ठाइ पुव्वा

होने पारणा करे. जो मात्रा दिनको आवे उसका पासन करे और रात्रि को जो आवा मात्रा सहित जीव सहित नहीं करे. और जो जीव रहित आवे तो पासन करे. जो पात्र वीर्य सहित आवे तो पासन नहीं करे और जो वीर्य रहित आवे तो पासन करे. जो मात्र चिकनास सहित आवे तो पासन नहीं करे और जो चिकनास रहित आवे तो पासन करे. जो रज सहित आवे तो पासन नहीं करे और रज रहित आवे तो पासन करे, जितनक थोडा बहुत मात्रा आवे उस को उक्त प्रकार करे, निश्चय से यह क्षुल्लक (छोटी) मोक प्रतिमा को यथा सूत्र आराधे यावत् जिनाज्ञा युक्त वार पहोंचावे ॥ ४१ ॥ अब परिमोक्ष प्रतिमा कहते हैं. बडी मोक्ष प्रतिमा प्रतिपक्ष-अंगीकार करने वाले अनगार १ द्रव्य से मात्रा परिठावे नहीं, २ क्षेत्र से ग्रामादि के बाहिर रहे, ३ काल से शियाल उन्ह ले, आखिर कर अंगीकार करे तो सोलभक्त आहार

सूत्र

गामस्सवा जाव संनिवेसस्सवा, वणंसिवा वणविदुगंसिवा पव्वयंसिवा पव्वयविदुगंसिवा भोच्चा, आरुभइ सोलसमेणं पारेति अभोच्चा आरुभति अट्ठारसमेणं पारेति, जाए २ मोए आइच्च तहेव अणाए अणुपालित्ता भवति ॥ ४२ ॥ संखादातियस्सणं भिक्खुस्स पडिग्गह धारिस्स गाहावतिकुलं पिंडवाय पडियाए अणुपविट्ठस्स जावतियं २ अंतो पडिग्गहंस्स उचित्ता दलएज्जा तावतियाओ ताओ दत्तिओ वत्तव्वसिया,

अर्थ

विना किये अंगीकार करतो अठारा भक्त, और मात्र से उपसर्ग सहन करे, इस प्रकार प्रतिमा अंगीकार करनेवाले अनगारको द्रव्य से शरद काल के मृगशीर्ष माहिनसे अन्तिम अषाढ माहिने पर्यंत ग्रामके बाहिर यावत् सन्निवेशके बाहिर वनमें वन के कठिन स्थान में पर्वत में पर्वत के कठिन स्थान में, आहार कर के अंगीकार करतो सोला भक्त (सात उपवास) और बिना आहार किये अंगीकार करतो अठारा भक्त (आठ उपवास) बाद पारना करे, जो पानी आवे तो उसका प्रमाण करे. यावत् उस प्रकार जिनाज्ञा को आराधन करे ॥ ४२ ॥ अब प्रथम जो दात की प्रतिज्ञा कही उस का खुलासा कहते हैं. दाती की संख्याका प्रमाण कर ग्रहण कर भिक्षा के लिये गये हुवे साधु को गृहस्थ आहार पानी भातलामता हुवा एक ही वक्त में जितना साधु के पात्र में डाले उसे एक दाति आहार की कहते हैं. फक्त एक चांवल का दाना गिरजावे तो वही एक दाति गिनी जाती है. ऐसे ही पानी आदि प्रवाही पदार्थ देने की इच्छा से गृहस्थ किसी

सूत्र

तत्थ से केइत्थछंएणंवा दुस्सएणंवा चालएणवा अंतोपडिग्गहंसि उचित्ता दलएज्जा सव्वा विणं सा एगा दत्ता वत्तव्वंसिया तत्थसे बहवे भुंजमाणा सव्वेते सयं २ पिंडसाहणियं अंतो पडिग्गहंसि उचित्ता दलएज्जा सव्वविणं सा एगादत्ताति वत्तव्वं सिया ॥ ४३ ॥ संखादत्तियस्सणं भिक्खुस्स पाणिपडिग्गहस्स गाहावतिकुलं पिंडवायपडियाए अणुपविट्ठस्स जावतियं अंतोपाणिसि उचित्तं दलएज्जा तावइयाओ ताओ दत्तीओ वत्तव्वसिया, तत्थ सेकेइ छप्पएणवा दुस्सएणवा चालएणवा अंतोपाणिसु उचित्ता दलएज्जा, सव्वाविणं सा एगादत्तीति वत्तव्वंसिया तत्थसे बहवे भुंजमाणा सव्वे ते सयं २

अर्थ

वस्त्र में या चालनी में छान कर पात्र में डाले, उस की धार खंडन नहीं होवे, वहां तक एक दाती कही है, कदाचित् साधु भिक्षा अर्थ गया और वहां बहुत लोक भोजन करते हैं. वे सब जीमते हुवे अपने २ निश्राय का आहार भेला करके एक पिंड बनाकर पात्र में प्रक्षेपे तो वह एक ही दाति गिनी जाती है ॥ ४३ ॥ अब पानी की दात का कहते हैं. दात की संख्या बांधकर साधु पानी ग्रहण करे वह साधु गृहस्थ के घर में पानी के लिये प्रवेश करे. पानी को वस्त्र या चालनी से छानकर देता हुवा ऊपर से डालता हुवा जहां तक उस वस्त्र में से या चालनी में से पडते हुवे पानी की धार खंडित नहीं होवे वहां





सूत्र

पिंडसाहाणिये एगंपिंड अंतो पडिग्गाहंसि पाणिसु उचित्ता दलएज्जा, सव्वाविणं सा एगा दत्तीति वत्तव्वंसिया ॥ ४४ ॥ तिविहं ओवहडे पण्णत्ते तंजहा-फलिहोवहडे, सुद्धोवहडे, संसट्ठोवहडे ॥ ४५ ॥ तिविहे उवग्गहे पण्णत्ते तंजहा-जंचउगिण्हइ, जंचसाहरइ, जंचआसयंसि पक्खिवइ ॥ एगे एव माहंसु ॥ ४६ ॥ एगेपुण एव माहंसु दुविहे उवग्गहे पण्णत्ते तंजहा-जंच ओगिण्हंति जंचआसयंति पक्खिवइ ॥ तिबेमि ॥ विवहार सुयस्स नवमो उद्देसो सम्मत्तो ॥ ९ ॥

अर्थ

तक एक दाती गिनकर ग्रहण करे. जहां बहुत लोक भोजन करते हुवे अपनी २ नेश्राय का पानी ग्रहण कर भेला कर जो एक ही वक्त पात्र में डाल दे तो वह एक ही दात कही जाती है ॥ ४४ ॥ अब अभिग्रह का कहते हैं. तीन प्रकार के अभिग्रह कहे हैं—१ काष्ठ पात्र में डालकर देवे तो उसे ग्रहण करूंगा, २ शुद्ध आहार चांवलादि शुद्ध हाथ से देवे तो ग्रहण करूंगा, और ३ अशुद्ध भरे हुवे हाथ से तथा भाजन से देवे तो ग्रहण करूंगा. ॥ ४५ ॥ और भी तीन प्रकार के अभिग्रह कहे हैं—तद्यथा—१ भाजन से वस्तु निकालता हुवा देवे तो लेवूंगा, २ भाजन में वस्तु प्रक्षेपता देवे तो लेवूंगा, और ३ जो कोई वस्तु आस्वादने को मुख में रखता हो उस वस्तु में से देवे तो लेवूंगा, एक ऐसा कहते हैं ॥ ४६ ॥ एक फिर ऐसा भी कहते हैं कि—दो प्रकार के अभिग्रह हैं. तद्यथा—१ ग्रहण करते देवे और २ जो आस्वादन करता रखता देवे तो लेवूंगा ॥ इति नववा उद्देशा समाप्त ॥ ९ ॥

॥ दशमोद्देशः ॥

सूत्र

दो पडिमाओ पण्णत्ता ओ तंजहा-जवमज्झचंदपडिमा वयरमज्झाय चंदपडिमा ॥ १ ॥ जवमज्झचंदपडिमं पडिवण्णस्स अणगारस्स मासंवोसट्ठकाए चियत्तदेहे जे केइ उवसग्गा उप्पज्जंति तंजहा- देवावा, माणुसावा, तिरिक्खजोणिएवा, अणुलोमावा पडिलोमावा, तत्थ अणुलोमावा तावबंदेज्जा वा नमंसेज्जावा, सक्कारेज्जावा, सम्माणेज्जावा,

अर्थ

तप रूप अभिग्रह धारन करने की दो प्रतिज्ञा कही हैं. उन के नाम-१ जो जव के समान मध्य में जाडी और दोनों तरफ पतली तपस्या करे वह यवमध्य चन्द्र प्रतिज्ञा और जो वज्र के सामान मध्य में पतली दोनों तरफ जाडी तपस्या करे सो वज्र मध्य चन्द्र प्रतिमा ॥ १ ॥ अब इस में से प्रथम जवमध्य चन्द्र प्रतिमा किस प्रकार करते हैं. वह कहते हैं. यवमध्य प्रतिज्ञा को धारन कर प्रतिपन्न-प्रनते हुवे अनगार-साधु एक महिने पर्यन्त अपने शरीर को वोसिराते हैं. अर्थात् एक महिने पर्यन्त शरीर के ममत्व का त्यागकर जो किसी प्रकार का उपसर्ग परिसह कर किया हुवा दुःख प्राप्त होवे उस को समभाव से सहते हैं. वे उपसर्ग तीन प्रकार के कहे हैं उन के नाम-१ देवता से किया हुवा उपसर्ग, २ मनुष्य का किया हुवा, और ३ तिर्यंच योनिक (जानवरों) का किया हुवा उपसर्ग. इन तीनों के किये उपसर्ग दो प्रकार के होते हैं उन के नाम-१ अनुलोम-अनुकूल मनको अच्छा लगे सुखप्रद होवे और २ प्रतिलोम-प्रतिकूल बुरा दुःखप्रद होवे सो इस में अनुलोम उपसर्ग इस प्रकार होते हैं. कोइ वंदना

सूत्र

कल्लाणं मंगलं देवयं, चेइयं, पज्जुवासेज्जा ॥ तत्थ पडिलोमा अण्णयरेणं दंडेणवा, अट्ठीणवा जोत्तेणवा, वेत्तेणवा, कसेणवा, काए आओडेज्जा ते सव्वे उप्पण्णे सम्मं सहेज्जा खमेज्जा, तितिक्खेज्जा, अहियासेज्जा ॥ २ ॥ जवमज्झणं चंद पडिमं पडिव-

अर्थ

नमस्कार करे, सत्कार सन्मान देवे, कल्याण के करता, मंगलिक के करता देवता समान धर्म देव ज्ञानवंत जान कर पर्युपासना सेवा भक्ति करे उस वक्त जो मनमें हर्ष लावे सुख पाने तो वह उपसर्ग से हारगये सहन नहीं करसके और जो समभाव रक्खे अहंपना ममत्व भाव नहीं लावे तो उस उपसर्ग को जीते कहे जाते हैं. ऐसे ही दूसरा प्रतिलोम उपसर्ग इस प्रकार होता है. उक्त तीनों में से कोइक दंडकर हड्डीकर रस्सी कर, बेतकर, चाबुक कर इत्यादि कर शरीर को परिताप उपजावे मारे, और भी अनेक प्रकार के दुःख मद उपसर्ग करे जो उन उपसर्ग से घबरा कर शरीर को छिपाने बचाने का प्रयत्न करे उपसर्ग करने का बुरा चिन्तवे तो उस उपसर्ग से हारगये और समभाव सहे, महाकर्मों की निर्जरा का अवसर प्राप्त हुवा मान द्वेष भाव न लावे तो उस उपसर्ग को सहन किया कहा जाता है. इस प्रकार तीनों की तरफ से किये दोनों प्रकार के परिषह उपसर्ग हुवे समभाव सहित राग द्वेष रहित सहन करे क्षमा भाव धारन करे दीनपना धारन नहीं करे, काया को स्थान से चलावे नहीं ॥ २ ॥ अब यव मध्य चन्द्र प्रतिमा

सू

णस्स अणगारस्स सुक्कपक्खस्स पडिवए कप्पंति एगादत्ति भोयणस्स, पडिगाहित्तए एगायणस्स, सव्वेहिं दुप्पयचउप्पयादिएहिं आहारकंखी सत्तेहिं पडिणियत्तेहिं अण्णाय उत्थं सुद्धोवहडं कप्पति से एगस्स भुंजमाणस्स पडिगाहित्तए नो दुण्णं, नो तिण्हं, नो चउण्णं नो पंचण्णं, नो बालवच्छाए, नो गुव्विणीए, नो दारगं पेज्जमाणीए, नोसे कप्पंति अंतोएलूस्स दोविपाए साहट्टु दलमाणीए पडिगाहित्तए अह पुण एवं जाणेज्जा एगपायं अंतोकिच्चा एगं पायं बाहिकिच्चा एलूय विक्खंभइत्ता एयाए एसणाए एसमाणे लब्भेज्जा आहारेज्जा, एयाए ए ।णाए एसमाणे णो लभेज्जा णो

अर्थ

कर तप करने की विधी बताते हैं—पत्रमध्य चन्द्र प्रतिमा को प्रतिपन्न हुवे साधु शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा को एक दात आहार की और एक ह त पानी की ग्रहण करे, वह आहार ग्रहण करने की विधि बताते हैं, जिस वक्त आहार की इच्छा करने वाले भिक्षु को बावा जोगी वगैरे द्विपद तथा पक्षियों कौवा वगैरे चतुष्पद, गौ कुत्ता आदि जानवरों को भोजनार्थ निकलवे ने गृहस्थों के यहां से भोजन ग्रहण कर स्वस्थान गये उस वक्त अर्थात् दो प्रहर दिन आये भिक्षालेने ः।स्थान से निकले, उद्वेग रहित चपलता रहित आज्ञात कुल जिन २ कुलों में से साधु को भिक्षा ग्रहण करने की आज्ञा तीर्थंकरोंने दी है, उन २ कुलों में प्रवेशकर भिक्षा ग्रहण करे वह भिक्षा इस प्रकार ग्रहण करे कि जहां एक ही मनुष्य भक्ष

सूत्र

आहारेज्जा बीयाए कप्पति दो दत्तीओ भोयणस्स पडिगाहित्तए दो पाणस्स सव्वेहिं दुप्पयचउप्पयादिएहिं आहार कंखीहिं सत्तेहिं, पडिणियत्तेहिं अणायओच्छं सुद्धो वहड कप्पति से एगस्स भुंजमाणस्स पडिगाहित्तए, नो दुण्णं, नो तिण्णं, नो चउण्णं, नो पंचण्णं, नो बालच्छाए, णो गुव्विणीए, नो दारगं पेज्जमाणीए, नो से कप्पति अंतो एलुयस्स दोवि पाए साहट्टु दलयमाणीए पडिगाहित्तए, अहं पुण एवं जाणेज्जा एगं पायं अंतो किच्चा, एगं पायं बाहिं किच्चा एलुयं विक्खंभइत्तए याए एसणाए एसमाणे णो लब्भेज्जा णो आहारेज्जा ततीयाए कप्पति तिण्णं दत्तीओ भोयणस्स

अर्थ

बैठ कर अपनी नेश्राय का भोजनादि ग्रहण कर [illegible] उस के पास से ग्रहण करे परंतु दो, तीन चार पांच जन एकत्र बैठ भोजन करते हों उस [illegible] आहार आदिक ग्रहण नहीं करे, वैसे ही बालक के भोजन में से देवेतो नहीं लेवे. गर्भिणी के [illegible] या गर्भवंती देवेतो वह भी ग्रहण नहीं करे, माता बालक को दुग्धपान कराती छोडाकर देवेतो ग्रहण नहीं करे, दोनों पांव एकत्र कर भेले रख घर के अंदर या घर के बाहिर खडा रहे देवेतो ग्रहण नहीं करे, परंतु ऐसा जानने में आवे की एक पांव तो घर की देहली (ऊंबर) के बाहिर है और एक पांव घर के अंदर है दोनों पांव के मध्य देहली रही इस प्रकार अभिग्रह धारन कर एषणा शुद्ध ४२ दोष रहित गवेषणा करते जो आहार मिलतो उसे ग्रहण

पडिगाहित्तए तिण्णं पाणस्स सव्वेहिं, दुप्पयचउप्पयादिएहि आहारकंखीहिं सत्तेहिं पडि-णियत्तेहिं जाव नो लभेज्जा णो आहारेज्जा चउत्थीए कप्पति चउदत्तीओ भोयणस्स पडि-गाहित्तए चउपाणस्स सव्वेहिं दुप्पयचउप्पयादिएहिं जाव नो आहारेज्जा पंचमियाए कप्पति पंचदत्तीओ भोयणस्स पडिगाहित्तए जाव नो आहारेज्जा छट्ठीए कप्पति छ दत्तीओ भोयणस्स पडिगाहित्तए जाव नो आहारेज्जा सत्तमीए कप्पति सत्तदत्तीओ भोयणस्स पडिगाहित्तए जाव नो आहारेज्जा अट्ठमीए कप्पति अट्ठदत्तीओ भोयणस्स पडिगाहित्तए जाव णो आहारेज्जा णवमीए कप्पति णवदत्तीओ भोयणस्स पडि-

अर्थ

करे मगवे और जो उक्त प्रकार की गवेषणा करते विधि युक्त आहार नहीं मीलेतो ग्रहण विना किये ही रहे ॥ यह प्रथम दिन की विधि कही इस ही प्रकार दूसरे दिन द्वितीया को दो दाति आहार की ग्रहण करे और दो दाती पानी की ग्रहण करे, इस ही विधी भी उक्त प्रमान व द्वि पद चतुष्पद आहारादि ग्रहण कर स्वस्थान गये उस वक्त जिनका प्रमाने कुल में प्रवेशकर शुद्ध निर्दोष एक ही जीमता हो उस के पास से परंतु दो तीन चार पांच जीमते हो उस के पास से नहीं ग्रहण करे, बालक को गर्भवती को, दूधपीते बच्चे को अन्तरायदे ग्रहण नहीं करे. दोनों पांव घर के अंदर वा घर के बाहिर रखदे तो ग्रहण नहीं करे परंतु एक पांव घर के बाहिर और एक घर के भीतर रखकर देवेतो ग्रहण करे, यों ४२ दोष

सूत्र

गाहित्तए जाव नो आहारेज्जा दसमीए कप्पति दसदत्तीओ भोयणस्स पडिगाहित्तए जाव नो आहारेज्जा एगारसीए कप्पति एगारस दत्तीओ भोयणस्स पडिगाहित्तए जाव नो आहारेज्जा बारसीए कप्पति बारसदत्तीओ भोयणस्स पडिगाहित्तए जाव नो आहारेज्जा तेरसीए कप्पति तेरसदत्तीओ भोयणस्स पडिगाहित्तए जाव नो आहारेज्जा चउदसीए कप्पति चउदसदत्तीओ भोयणस्स पडिगाहित्तए जाव नो आहारेज्जा पुण्णिमाए कप्पति पण्णरसदत्तीओ भोयणस्स पडिगाहित्तए जाव नो आहारेज्जा बहुपक्खस्स पडिवाए से कप्पति चोद्दसभत्तीओ भोयणस्स पडिगाहित्तए, चोद्दस

अर्थ

रहित शुद्ध आहार पानी मिले तो भोगवे, नहीं तो बिना आहार रहे. तृतिया के दिन तीन दात आहार की व तीन दात पानी की उक्त विधि से मीले तो ग्रहण करे नहीं तो आहार बिना रहे, चतुर्थी के दिन चार दात आहार की चार दात पानी की उक्त विधी से मिलतो ग्रहण करे नहीं तो आहार बिना रहे. पंचमी को पांच दात आहार की पांच दात पानी की उक्त विधी से मिलेतो लेवे. षष्टी को छ दात आहार की छ दात पानी की उक्त विधी मे मिलतो ग्रहण करे. सप्तमी को सात दात आहार की सात दात पानी की उक्त विधी से मिलेतो ग्रहण करे. अष्टमी को आठ दात आहार की आठ दात पानी की उक्त विधी से ग्रहण करे. नवमी को नवदात आहार की नव दात पानी की उक्त विधी मे मिलेतो ले. दशमी को दश दात आहार की दश दात पानी की ॥ एकादशी को इग्यारा दात आहार

पाणस्स सव्वेहिं दुप्पयं जाव नो आहारेज्जा, बितियाए कप्पति तेरसदत्तीओ भोयणस्स पडिगाहित्तए तेरस्स पाणस्स जाव अहारेज्जा, तत्तियाए कप्पति बारस दत्तीओ भोयणस्स जाव नो आहारेज्जा चउत्थीए कप्पति एक्कारसदत्तीओ भोयणस्स जाव नो आहारेज्जा, पंचमीए कप्पति दसदत्तीओ भोयणस्स जाव नो आहारेज्जा, छट्ठीए कप्पति णवदत्तीओ भोयणस्स जाव णो आहारेज्जा, सत्तमीए कप्पति अट्ठदत्तीओ भोयणस्स जाव नो आहारेज्जा, अट्ठमीए कप्पति सत्तदत्तीओ भोयणस्स जाव नो आहारेज्जा, णवमीए कप्पति छ दत्तीओ जाव नो आहारेज्जा

की इग्यारा पानी की, द्वादशी को बारा २ दात आहार पानी की, तेरस को तेरा २ दात आहार पानी की चउदस को चौदा २ दात आहार पानी की, और पूर्णिमा को पन्दरे दात आहार की व पन्दरा दात पानी की प्रथम कही हुइ विधी प्रमाने मिलतो ग्रहण करे नहीं तो आहार बिना रहे. पुनरपि कृष्ण अंधारे पक्ष की प्रतिपदा को उन साधु को कल्पता है चौदा दात आहार की और चौदा दात पानी की वह भी सब द्विपद चतुष्पद आहारअर्थी आहार ग्रहण कर चल गये हो पश्चात् उक्त विधी प्रमाने मिलतो ग्रहण करे. नहीं तो आहार बिना ही रहे. द्वितिया को तेरा २ दाति आहार पानी की उक्त विधी प्रमाने मिलतो लेवे, तृतिया को बारा २ दाती आहार पानी की, चतुर्थी को इग्यारा २ दाति आहार पानी की पंचमी को

सूत्र

दसमीए कप्पति पंचदत्तीओ भोयणस्स जाव नो आहारेज्जा, एक्कारसमीए कप्पति चउदत्तीए भोयणस्स जाव नो आहारेज्जा, बारसमीए कप्पति तिदत्तीओ भोयणस्स जाव नो आहारेज्जा, तेरसीए कप्पति दोदत्तीओ भोयणस्स जाव नो आहारेज्जा, चउद्दसीए कप्पति एकादत्तीओ भोयणस्स पडिगाहित्तए एगा-पाणस्स सव्वेहिं दुप्पयचउप्पयाएहिं आहार कंखीहिं सत्तेहिं जाव अःहारेज्जा, अमावासाए सेय अभत्तट्ठे भवइ ॥ एवं खलु एगाजवमज्झ चंदपडिमा अहासुत्तं अहाकप्पं जाव अणुपालित्ता भवति ॥ ३ ॥ वइरमज्झणं चंदपडिमं पडिवण्णस्स

अर्थ

दश २ दाती आहार पानी की, षष्ठी को नव २ दाति आहार पानी की, सप्तमीको आठ २ दाती आहार पानी की, अष्टमी को सात २ दाती आहार पानी की, नवमी को छ २ दाती आहार पानी की दशमी को पांच २ दाति आहार पानी की एकादशी को चार २ दाती आहार पानी का द्वादशी को तीन २ दाती आहार पानी की त्रयोदशी को दो दो दाती आहार पानी की चौदस को एकेक दाति आहार पानी की ग्रहण करे, यह भी [illegible] चतुष्पद आहार ग्रहण कर गये हों यावत् प्रथम कही विधी प्रमाणे मिले तो ग्रहण करे, नहीं तो आहार बिना ही रहे और अमावस्या के दिन उपवास करे. यों निश्चय यह यवमध्यप्रतिमा को सूत्र में कही विधी प्रमाने प्रतिज्ञा के कल्प-मार्ग प्रमाने यावत् जिनाज्ञा प्रमाणे पालने वाले होते हैं. इति यवमध्य प्रतिमा तप ॥ ३ ॥ अब वज्रमध्य चन्द्र

अणगारस्स मासं वोसट्ठकाए चियत्तदेहे जे केइ उवसग्गा उववज्जंति तंजहा-दिव्वावा माणुस्सावा तिरिक्खजोणियावा अणुलोमावा पडिलोमावा तत्थ अणुलोमा ताव वंदेज्जावा णमंसेज्जावा सक्कारेज्जावा सम्माणेज्जावा कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासेज्जा ॥ तत्थ पडिलोमा- अण्णयरेण दंडेणवा अट्ठीणवा मुट्ठीणवा जोतेणवा वेत्तेणवा कसेणवा काए आउट्टेज्जा तेसव्वे उप्पन्ने सम्मं सहेज्जा खमेज्जा तितिक्खेज्जा अहियासेज्जा॥ ४ ॥ वइरमज्झणं चंदपडिमं पडिवण्णस्स अणगारस्स बहुलपक्खस्स पडिवए कप्पाति पण्णरस

अर्थ

प्रतिमा का तप करने की विधी कहते हैं. वज्रमध्य चन्द्र प्रतिमा रूप तप करने को प्रवर्त्या हुवा साधु एक महिने तक शरीर की ममता का त्याग करके जो कोइ उपसर्ग प्राप्त होवे उसे समभाव से सहे, वे उपसर्ग तीन प्रकार के तद्यथा—१ देवता सम्बन्धी, २ मनुष्य सम्बन्धी और ३ तिर्यंच पानिक सम्बन्धी अनुकूल और प्रतिकूल दोनों प्रकार के हैं इस में अनुकूल तो कोइ वंदना नमस्कार करे सत्कार सन्मान देवे, कल्याणकारी मंगलकारी जाने,धर्मदेव ज्ञानवंत यावत् पर्युपासना सेवा भक्ति करे और प्रतिकूल उपसर्ग सो दंडकर, हड्डीकर, मुष्टीकर, रस्सीकर, जोतीकर, बेतकर, चाबुक कर प्रहार करे संताप उत्पन्न करे उसे समभाव से सहन करे क्षमा करे दीनपना नहीं करे कायों का हलन चलन नहीं करे ॥ ४ ॥ वज्रमध्य चन्द्र प्रतिमा को प्रतिपन्न हुवे अनगार साधु कृष्ण (अन्धारे) पक्ष की प्रतिपदा को कल्पता है पन्द्रह दाती

सूत्र

दत्तीओ भोयणस्स पडिगाहित्तए पण्णरस पाणगस्स सव्वेहिं दुप्पय चउप्पयाइएहिं आहार कंखेहिं जाव नो आहारेज्जा तियाए से कप्पति चउद्दसदत्तीओ भोयणस्स पडिगाहित्तए जाव नो आहारेज्जा, ततियाए कप्पंति तेरसदत्तीओ भोयणस्स जाव नो आहारेज्जा चउत्थीए कप्पति बारसदत्तीओ भोयणस्स जाव नो आहारेज्जा पंचमीए कप्पति एगा रसदत्तीओ भोयणस्स जाव नो आहारेज्जा छट्ठीए कप्पति दस दत्तीओ भोयणस्स जाव नो आहारेज्जा सत्तमीए कप्पति नवदत्तीओ

अर्थ

आहार की ग्रहण करना और पन्दरा दाति पानी की ग्रहण करना, वह भी जिस वक्त द्वीपद मनुष्य पक्षी चतुष्पद गौ कुत्ते आदि गृहस्थ के यहां से आहार आदि लेकर चले गये हो उस वक्त स्थानक से नीकल कर उपरंग रहित अज्ञात कुलों में से जो अकेला ही मनुष्य भोजन करता है उस के पास से परंतु दो तीन चार भोजन करते हों, उन के पास से नहीं उस के दोनों पांव घर के अंदर तथा घर के बाहिर होवे तो ग्रहण नहीं करे परंतु एक पांव घर के अन्दर और एक देहली बाहिर होवे आहार दोष रहित होवे इस प्रकार गवेषणा करता मिलेतो उस आहार पानी को ग्रहणकर भोगवे, और नहीं मिलेतो आहार विनाही रहे॥ इस प्रकारही द्वीतीयाको चउदा दाति आहारकी व चउदह दाति पानीकी तृतियाको तेरह दाति आहार की तेरे

भोयणस्स जाव नो आहारेज्जा अट्ठमीए कप्पति अट्ठदत्तीओ भोयणस्स जाव णो आहारेज्जा णवमीए कप्पति सत्तदत्तीओ भोयणस्स जाव नो आहारेज्जा दसमीए कप्पति छदत्तीओ भोयणस्स जाव नो आहारेज्जा एगारसीए कप्पति पंच दत्तीओ भोयणस्स जाव नो आहारेज्जा बारसीए कप्पति चउदत्तीओ भोयणस्स जाव नो आहारेज्जा तेरसीए कप्पति तिदत्तीओ भोयणस्स जाव णो आहारेज्जा चउदसीए कप्पति दो दत्तीओ भोयणस्स जाव नो आहारेज्जा अमावासाए कप्पति एगादत्तीओ

अर्थ

दाति पानी की चतुर्थी को बारा दाति आहार की बारा दाति पानी की, पंचमी को इग्यारा दाति आहार की इग्यारा दाति पानी की, षष्टी को दश दाती आहार की दश दाती पानी की, सप्तमी को नव दाती आहार की नव पानी की, अष्टमी को आठ दाती आहार की आठ पानी की नवमी को सात दाति आहार की सात पानी की, दशमी को छ दाति आहार की छ पानी की, एकादशी को पांच दाती आहार की पांच दाती पानी की, बारस को चार दाति आहार की चार दाति पानी की, तेरस को तीन दाती आहार की तीन पानी की चौदस को दो दाति आहार की दो दाति पानी की अमावास्या को एक दाति आहार की एक दाति पानी की उक्त विधी प्रमाने मिले तो आहार करे नहीं तो आहार विना ही रहे

सूत्र

भोयणस्स पडिगाहित्तए जाव णो आहारेज्जा सुक्कपक्खस्स पडिवाए से कप्पति दो दत्तीओ भोयणस्स पडिगाहित्तए दो पाणस्स जाव णो आहारेज्जा बितियाए कप्पति तिण्णि दत्तीओ भोयणस्स जाव णो आहारेज्जा ततियाए कप्पति चउदत्तीओ भोयणस्स जाव नो आहारेज्जा चउत्थीए कप्पति पंचदत्तीओ भोयणस्स जाव णो आहारेज्जा ॥ पंचमीए कप्पति छ दत्तीओ भोयणस्स जाव नो आहारेज्जा छट्ठीए कप्पति सत्तदत्तीओ भोयणस्स जाव मो आहारेज्जा

अर्थ

फिर शुक्ल पक्ष की एकम को कल्पता है दो दाती आहार की और दो दाती पानी की ग्रहण करना द्वितीया को तीन दाति आहार की तीन दाति पानी की तृतिया को चार २ दाति आहार पानी की, चतुर्थी को पांच २ दाति आहार पानी की, पांचमी को छ २ दाति आहार पानी की, छठीको सात २ दाती आहार पानी की, सप्तमी को आठ २ दाती आहार पानी की, अष्टमी को नव २ दाति आहार पानी की नवमी को दश २ दाति आहारपानी की, दशमी को इग्यारे २ दाती आहार पानी की, एकादशी को बारा दाती आहार पानी की, द्वादशी को तेरा दाति आहार पानी की, तेरस को चउदा २ दाति आहार पानी की और चउदस को पंद्रह दात आहार की पंद्रह दाती पानी की ग्रहण करे फिर

सत्तमीए कप्पति अट्ठदत्तीओ भोयणस्स जाव णो आहारेज्जा ॥ अट्ठमीए कप्पति णवदत्तीओ भोयणस्स जाव णो आहारेज्जा नवमीए कप्पति दसदत्तीओ भोयणस्स जाव णो लभेज्जा नो आहारेज्जा ॥ दसमीए कप्पति एगारसदत्तीओ भोयणस्स जाव नो आहारेज्जा ॥ एगारसमीए कप्पति बारसदत्तीओ भोयणस्स जाव नो आहारेज्जा बारसीए कप्पति तेरस दत्तीओ भोयणस्स जाव नो आहारेज्जा तेरसीए कप्पति चोदसदत्तीओ भोयणस्स जाव णो आहारेज्जा चउदसीए कप्पति पण्णरस दत्तीओ भोयणस्स पडिगाहित्तए पण्णरस पाणगस्स

चतुर्दशी आहार ग्रहण कर चले गये हो यावत् पर्वोक्त विधि प्रमाणे मिलतो आहार ग्रहण करे और नहीं मिलतो आहारबिना रहे और पूर्णिमा को चौविहार उपवास करे यों निश्चय गए वज्र मध्य चन्द्र प्रतिमा की विधी सूत्र में कही विधी प्रमाने यथाकल्प यावत् जिनाज्ञा प्रमाने पालने वाले होते हैं ॥८॥ अब पांच व्यवहार का स्वरूप कहते हैं ॥ जिस से धर्म का व्यवहार चले सो व्यवहार नहीं आगे चले पूर्व व्यवहार पांच कहे हैं तद्यथा-१ तीर्थंकर, गणधर, अवधि ज्ञानी, मनःपर्यव ज्ञानी, केवल ज्ञानी, चौदहपूर्वधारी यावत् दश पूर्वधारी इन का चलाया प्रवर्त वह आगम व्यवहार, आचारांगादि सूत्र के कथन प्रमाण प्रवृत्ती कर वह सूत्र व्यवहार, ३ गीतार्थ बहुश्रुती गुरु आदि दशाश्रुत

पडिगाहित्ताए सव्वेहिं दुप्पय चउप्पय जाव नो लभेज्जा नो आहारेज्जा पुण्णिमाए अभत्तट्ठे भवंति ॥ एवं खलु एसा वइरमज्झं चंदपडिमा अहासुत्तं अहाकप्पं जाव अणुपालित्ता भवंति ॥ ५ ॥ पंचविहे ववहारे पण्णत्ते तंजहा-आगमे, सुए, आणा, धारणा, जीए ॥ ६ ॥ जहेव तत्थ आगमे सिया आगमेण ववहारं पट्ठवेज्जा, णो

में रहे पत्रादि द्वारा प्रायश्चित्तादि आज्ञा लिखे भेजे व कहला भेजे उस प्रमाने प्रवृत्ति करे वह आज्ञा व्यवहार, ४ गीतार्थ बहु सूत्री प्रायःश्चित देते थे उसे सुनकर धारन कर रक्खा हो वैसी प्रवृत्ति आगे चलावे वह धारन कर रक्खे [illegible] धारना व्यवहार और ५ पूर्वाचार्य की आचरना मुजब करे चार या पांच मनों मिलकर जो व्यवहार की स्थापना करे उस मुजब चले वह जीत व्यवहार ॥ ६ ॥ जहां २ आगम व्यवहार होवे तो आगमव्यवहार ही प्रवर्ते अर्थात् आगमविहारी की आज्ञा प्रमाने चले येप्रायःश्चितादि को ग्रहण करे कदाचित् आगम व्यवहारी का व्यच्छेद होजाय आगम व्यवहारी नहीं रहे [illegible] जहां जो सूत्र व्यवहार होवे तो सूत्र व्यवहार प्रमाने चले सूत्र अधिन प्रायःश्चितादि, कदाचित् सूत्र व्यवहार भी न रहे सूत्रों का व्यच्छेद हो अथवा उस [illegible] कथन सूत्र में नहीं किया हो तो जिस प्रकार अपने गुरु आदि जेष्ठ पुरुष आज्ञा देवे प्रदेश में हों तो पत्रादि द्वारा आज्ञा मंगावे और उस अनुसार चलना उस प्रमाने प्रायःश्चित दे. कदाचित् गुरू आदि जेष्ठ पुरुषों का ही व्यच्छेद होगया होतो जो पहिले अपने गुरुआदि

से तत्थ आगमे सिया जहा से तत्थ सुएसिया, सुएणं ववहारं पट्ठवेज्जा, नो से तत्थ सुए सिया जहा से तत्थ आणा सिया आणाए ववहारे पट्ठवेज्जा, नो से तत्थ आणा सिया जहा से तत्थ धारणा सिया धारणाए ववहारे पट्ठवेज्जा, णो से तत्थ धारणा सिया जहा से तत्थ जीए सिया जीएणं ववहारे पट्ठवेज्जा सिया एएहिं पंचहिं ववहारेहिं ववहारं पट्ठवेज्जा तंजहा-आगमेण सुएणं, आणाए धारणाए जीएणं ॥ जहा से आगमेसुए आणाधारणा जीए तहा तह ववहारं पट्ठवेज्जा ॥ ७ ॥ से किमाहु भंते ! आमवलिया समणा निग्गंथा इच्चेय पंचविहं ववहारं जया २ जेहिं २

वे उन के पास जो प्रायश्चित्तादि की विधी धारन थी उस प्रमाने चले, उस प्रमाने प्रायश्चित देवे और जो कदाचित् ऐसाही प्रयोजन आकर बन जावे कि इसकी धारना भी नहीं वो तब जीत व्यवहार प्रमाणे अर्थात् जो पूर्वपरंपरा से चलता आयाहै उसही प्रमाने आगे चलाया जावे (तथा पांचदश मनुष्य मिलकर जो कानून बांधदेवे उस प्रमाने चले)इन पांचो व्यवहार प्रमाने प्रवृति सदैव रखवे तद्यथा १आगम,२सूत्र,३आज्ञा४ धारणा और५जीत. जिसप्रकार आगम सूत्र आज्ञा धारणा जीत व्यवहार होवे उस२व्यवहार प्रमाणे चलना॥७॥ शिष्य पूछता है अहो भगवान् ? कि लिये व्यवहार प्रमाण चलना ? अहो शिष्य ! आगम वलिये श्रमण

सूत्र तया २ तहिं २ अणिसिओवस्सियं ववहारं ववहारमाणे समणे णिग्गंथे आणाए आराहए भवति ॥ ८ ॥ चत्तारि पुरिस जाता पण्णत्ता तंजहा-अट्ठकरेणाममेगे नो माणकरे,

अर्थ निर्ग्रन्थ ने कहा है पूर्वोक्त पांचो व्यवहार में से जिस २ वक्त जिस २ स्थान जो जो व्यवहार वर्तता हो उस वक्त उस २ स्थान उस व्यवहार प्रमाने वर्तने वाला, उस २ व्यवहार को उपदेशने वाला श्रमण निर्ग्रन्थ जिनाज्ञा का आराधक होता है ॥ ८ ॥ (पांच व्यवहार का खुलासा कहते हैं—जो व्यवहार में आवे उसे व्यवहार कहते हैं साधु को प्रवृत्ति करने रूप पांच व्यवहार हैं. तद्यथ—ज्ञान कर जाने वह आगम व्यवहार, २ सुनकर जाने वह सूत्र व्यवहार, ३ आदेश करदे वह आज्ञा व्यवहार, ४ धारन कर रखा वह धारना व्यवहार और ५ परम्परा से चला आया वह जीत व्यवहार. इस में प्रथम आगम व्यवहार वह—१ केवल ज्ञानी, २ मनः पर्यव ज्ञानी, ३ अवधि ज्ञानी, ४ चौदे पूर्व धारी यावत् ५ दश पूर्व धारी. इनमें से जो केवलज्ञानी का जोग होतो प्रथम आलोचक को आलोचना लेने कालिये केवली की पास जाना. केवल ज्ञानी का जोग नहो तो मनःपर्यव ज्ञानी पास लेना, मनःपर्यव ज्ञानी का जोग नहो तो अवधि ज्ञानी के पास लेना, अवधी ज्ञानी का जोग नहो तो चौदा पूर्व धारी. और चउदे पूर्व धारी का योग नहो तो यावत् दश पूर्व धारी के पास जाना. यों आलोचना करने वाला जब आगम विहारी के पास आवे तब आगम विहारी उसे कहे निकपट पने जिस प्रकार दोष लगा होवे

अर्थ

माणकरे णामेगे णो अट्ठकरे, एगे अट्ठकरेवि माणकरेवि, एगे णो अट्ठकरे णो

जैसा साफ कह दो. वह आलोचना करता जो सहज भाव से दोष भूलजाय तो ज्ञानी उसे स्मरण करादेवे और जो वह कपट कर छिपाने तो उस को याद भी न करावे और प्रायश्चित्त भी नहीं देवे, कहदे कि अन्य स्थान जाओ आलोचन [illegible], केवल ज्ञानी तो मनोगत जान कर कह सकते हैं और चउदे पूर्व के पाठी उपयोग लगाने से केवली जैसा ही जान सकते हैं. ॥ १ ॥ अब सूत्र व्यवहार कहते हैं-आचार प्रकल्प नीशीथ आदि इग्यार अंग से लगा पूर्व तक का ज्ञान सब सूत्र व्यवहार में समावेश होता है यह अतेन्द्रिय अर्थ में विशिष्टज्ञान हेतु आदि का सातिशय युक्त आगम केवली कथित केवली के समान ऐसे सूत्र ज्ञान के धारक हो उन के पास आलोचना करे जावे तब वे उसके मुख से तीन वक्त वह दोष कहावे. एक वक्त सुनकर कहे मुझे प्रमाद से स्मरण नहीं रहा, फीर कहो, दूसरी वक्त कहे चित्त विग्रह से स्मरण नहीं रहा फिर कहो, यों तीन वक्त एकसा ही दोष प्रकाशे तब समझे की यह आलोचक शुद्ध निष्कपटी है. तब यथा उचित-आलोचना उसे देवे और जो वह कपट कर दोष छिपावे तीनों वक्त अन्य २ प्रकार कहे तब उसे प्रथम कपट का प्रायश्चित्त देवे फिर दोष की आलोचना देवे ॥ २ ॥ अब आज्ञा व्यवहार कहते हैं. दो गीतार्थ आचार्य जंघा बल की क्षीणता से अलग २ देशांतर में रहे. उस में से एक आचार्य को आलोचना करने का अवसर प्राप्त हुवा परंतु दूसरे आचार्य के पास जाने को अशक्त हो अपना दोष

र्द्धार्थरूप बनाकर अपने पासके साधुको पढाकर उन दूसरे आचार्य के पास भेजे. वे दूसरे आचार्य गुह्यर्थमें क्षेत्र काल भाव धृति बलादि विचार कर आपकी सुदको जाने की शक्ति हो तो आप उन से जाकर मिले और आने की शक्ति न होतो उस शिष्य को पीछा गुह्यर्थ में प्रायश्चित्त पढाकर पीछा भेजे, उसे वे ग्रहण करे वह आज्ञा व्यवहार कहते हैं. कोइक आचार्य किसि शिष्य को किसी प्रकार के दोष की आलोचनादी वह उस ने धारन कर रखी और आचार्य के वियोग में दूसरने उस ही प्रकार दोष लगाया, उसे उस ही प्रकार प्रायश्चित देवे, वह धारणा व्यवहार, तथा कोइ वैयावच का करने वाला शिष्य है वह समस्त छेद देने योग्य नहीं है अर्थात् प्रायश्चित्त की विधी बताने योग्य नहीं है तब उस को आचार्य प्रमाद कर कितनेक प्रायश्चित्त के पद का उधृत कर उसे कहे, वह उसे मन में धार रखे प्रसंग से उस ही दूसरे को आलोचना दे वह धारणा व्यवहार ॥ ४ ॥ अब जीत व्यवहार कहते है—जिस अपराध की शुद्धि प्रथम साधुओं बहुत तप करके करते थे उस ही अपराध को प्राप्त हुने सो मत काल में द्रव्य क्षेत्र काल भाव विचार कर संघयन धृति बलादि की हानी जान कर यथा उचित योग्य तप का प्रायश्चित्त देवे समय का विचार करे, अथवा आचार्यों के गच्छ में आचार्य ने अलग २ प्रायश्चित्त देने की विधी बंधी है. पाने में लिख रखी है, उस मुजब उन के शिष्यादि प्रायश्चित्त दे सो जीत व्यवहार ॥ ५ ॥ इन पांचों व्यवहार में से जो इच्छा में आवे उस व्यवहार सहित गीतार्थ के पास प्रायश्चित्त ग्रहण करे उस से वह शुद्ध हो सकता है. परंतु अगीतार्थ पास प्रायश्चित्त लिये शुद्ध

माणकरे णामेगे णो अट्ठकरे, एगे अट्ठकरेवि माणकरेवि, एगे णो अट्ठकरे णो

अर्थ

जैसा साफ कह दो. वह आलोचना करता जो सरल भाव से दोष भूलजाय तो ज्ञानी उसे स्मरण करादेवे और जो वह कपट कर छिपावे तो उस को याद भी न करावे और प्रायश्चित्त भी नहीं देवे, कहदे कि अन्य स्थान जाओ आलोचना करो. केवल ज्ञानी तो मनोगत जान कर कह सकते हैं और चउदे पूर्व के पाठी उपयोग लगाने से केवली जैसा ही जान सकते हैं. ॥ २ ॥ अब सूत्र व्यवहार कहते हैं-आचार प्रकल्प नीशीथ आदि इग्यारे अंग से लगा पूर्व तक का ज्ञान सब सूत्र व्यवहार में समावेश होता है यह अतेन्द्रिय अर्थ में विशिष्टज्ञान हेतु आदि का सातिशय युक्त आगम केवली कथित केवली के समान एसे सूत्र ज्ञान के धारक हो उन के पास आलोचना को जावे तब वे उसके मुख से तीन वक्त वह दोष कहावे. एक वक्त सुनकर कहे मुझे प्रमाद से स्मरण नहीं रहा, फीर कहो, दूसरी वक्त कहे चित्त विग्रह से स्मरण नहीं रहा फिर कहो, यों तीन वक्त एकसा ही दोष प्रकाश दे तब समझे की यह आलोचक शुद्ध निष्कपटी है. तब यथा उचित आलोचना उसे देवे और जो वह कपट कर दोष छिपावे तीनो वक्त अन्य २ प्रकार कहे तब उसे प्रथम कपट का प्रायश्चित्त देवे फिर दोष की आलोचना देवे ॥ २ ॥ अब आज्ञा व्यवहार कहते हैं. दो गीतार्थ आचार्य जंघा बल की क्षीणता से अलग २ देशांतर में रहे. उन में से एक आचार्य को आलोचना करने का अवसर प्राप्त हुवा परंतु दूसरे आचार्य के पास जाने को अशक्त हो अपना दोष

अर्थ

दृष्टार्थरूप बनाकर अपने पासके साधुको पढाकर उन दूसरे आचार्य के पास भेजे. वे दूसरे आचार्य गुढ़ार्थमें क्षेत्र काल भाव धृति बलादि विचार कर आपको सुदकी जाने की शक्ति हो तो आप उन से जाकर मिले और जाने की शक्ति न होतो उसे शिष्य को पीछा गुढार्थ में प्रायश्चित्त पढाकर पीछा भेजे, उसे वे ग्रहण करे वह आज्ञा व्यवहार कहते हैं. कोइक आचार्य किसि शिष्य को किसी प्रकार के दोष की आलोचनादी वह उस ने धारन कर रखी और आचार्य के वियोग में दूसरने उस ही प्रकार दोष लगाया, उसे उस ही प्रकार प्रायश्चित देवे, वह धारणा व्यवहार, तथा कोइ वैयावच्च का करने वाला शिष्य है वह समस्त छेद देने योग्य नहीं है अर्थात् प्रायश्चित्त की विधी बताने योग्य नहीं है तब उस को आचार्य प्रसाद कर कितनेक प्रायश्चित्त के पद का उधृत कर उसे कहे, वह उसे मन में धार रखे प्रसंग से उस ही दूसरे को आलोचना दे वह धारणा व्यवहार ॥ ४ ॥ अब जीत व्यवहार कहते है—जिस अपराध की शुद्धि प्रथम साधुओं बहुत तप करके करते थे उस ही अपराध को प्राप्त हुवे सो मत काल में द्रव्य क्षेत्र काल भाव विचार कर संघयन धृति बलादि की हानी जान कर यथा उचित योग्य तप का प्रायश्चित्त देवे समय का विचार करे, अथवा आचार्यों के गच्छ में आचार्य ने अलग २ प्रायश्चित्त देने की विधी बंधी है. पाने में लिख रखी है, उस मुजब उन के शिष्यादि प्रायश्चित्त दे सो जीताचार ॥ ५ ॥ इन पांचों व्यवहार में से जो इच्छा में आवे उस व्यवहार सहित गीतार्थ के पास प्रायश्चित्त ग्रहण करे उस से वह शुद्ध हो सकता है. परंतु अगीतार्थ पास प्रायश्चित्त लिये शुद्ध

माणकरे ॥ ९ ॥ चत्तारि पुरिस जाया पण्णत्ता तंजहा-गणट्ठकरे णाममेगे नो माणकरे, माणकरे णाममेगे णो गणट्ठकरे, एगे गणट्ठकरेवि माणकरेवि, एगे णो गणट्ठकरे णो माणकरे ॥ १० ॥ चत्तारि पुरिस जाया पण्णत्ता तंजहा- गणसंगहकरे णाममेगे णो माणकरे, माणकरे णाममेगे णो गणसंगहकरे, एगे गणसंगहकरेवि माणकरेवि, एगे णो गणसंगहकरे णो माणकरे ॥ ११ ॥ चत्तारि

अर्थ

नहीं होता है) अब गच्छ नायक की चौभंगी कहते हैं. चार प्रकार के पुरुष जात कहे हैं, (यहां पुरुष शब्द से साधु ग्रहण करना) तद्यथा-१ एक उपकार तो करे किन्तु अभिमान नहीं करे, २ एक अभिमान करे परंतु उपकार नहीं करे, एक उपकार भी करे और अभिमान भी करे, और एक उपकार भी नहीं करे और अभिमान भी नहीं करे ॥ ९ ॥ चार प्रकार के पुरुष जात कहे हैं तद्यथा १ एक सम्प्रदाय का कार्य करे परंतु अभिमान नहीं करे, २ एक अभिमान करे परंतु कार्य नहीं करे, ३ एक कार्य भी करे और अभिमान भी करे, और एक कार्य भी नहीं करे अभीमान भी नहीं करे ॥ १० ॥ चार प्रकार के पुरुष जात कहे-१ एक साधुओं का संग्रह करे परन्तु अभिमान नहीं करे, २ एक अभिमान करे परंतु साधुओं का संग्रह नहीं करे, ३ एक समुदाय करे और अभीमान करे ४ एक साधुओं का संग्रह भी नहीं करे और अभिमान भी नहीं करे ॥ ११ ॥ चार प्रकार के पुरुष जात कहे हैं.

सूत्र

पुरिस जाया पण्णत्ता तंजहा गणसोभकरे णाम मेगे णो माणकरे, माणकरे णाममेगे णो गणसोभकरे, एगेगणसोभ करेत्ति माणकरेत्ति, एगेणो गणसोभकरे णो माणकरे ॥ १२ ॥ चत्तारि पुरिस जाया पण्णत्ता तंजहा गणसोहि करे णाममेगे नो माणकरे माणकरेणाममेगे नो गणसोहिकरेत्ति माणकरेत्ति, एगेनो गणसोहिकरे नो माणकरे ॥ १३ ॥ चत्तारि पुरिसा जाया पण्णत्ता तंजहा रूवेणामं एगे जहइ णो धम्मं, धम्मणामेगे जहइ णो रूवं, एगे रूवेपि जहइ धम्मंपि जहइ, एगे णो रूवं जहइ णो धम्मं ॥ १४ ॥ चत्तारि पुरिस जाया पण्णत्ता तंजहा

अर्थ

तद्यथा–१ एक समुदाय की शोभा करे, परंतु अभिमान नहीं करे, २ एक अभिमान करे परंतु समुदाय की शोभा नहीं करे, ३ अभीमान भी करे और ४ एक शोभा भी नहीं करे ॥ १२ ॥ चार प्रकार के पुरुष जात कहे हैं. तद्यथा–१ एक समुदाय की सुश्रुषा करते हैं परंतु मान नहीं करते हैं २ एक मान करते हैं परंतु सुश्रुषा नहीं करते हैं. एकसमुदाय की सुश्रुषाभी करते हैं और अभीमान करते हैं और एक सुश्रुषाभी नहीं करते हैं और अभीमान भी नहीं करते हैं ॥ १४ ॥ चार प्रकार के पुरुष जात कहे हैं. तद्यथा–१ एक साधु रूप

सूत्र

धम्मं णामेगे जहाति णो गणसंठियं णोममेगे जहाति णो धम्मं, एगे धम्मंपि जहइ गणसंठियंपि, एगे नो धम्मं जहाति नो गणसंठियं ॥ १६ ॥ चत्तारि पुरिस जाया

अर्थ

(भेष) को छोडे परन्तु धर्म को नहीं छोडे (द्रव्य वा प्रायश्चित्ताधिकारि आदि) २ एक साधु के गुन को तो छोडे परंतु साधु के रूप को नहीं छोडे (पासत्थादि) ३ एक गुन भी नहीं छोडे रूप को भी नहीं छोडे (उत्तम साधु) और एक रूपको भी छोडदे और गुनको भी छोडदे (सर्वथा संयम भ्रष्ट) ॥ १६ ॥ चार प्रकार के पुरुष जात कहे, तद्यथा—१ एक साधुने जिनाज्ञा रूप धर्म को तो छोडा परंतु गच्छ की मर्यादा को नहीं छोडी, जैसे किसी सम्प्रदाय में मर्यादा है कि अपनी सम्प्रदाय के साधु सिवाय अन्य किसी को भी ज्ञान नहीं देना. और जिनेश्वर की आज्ञा है कि जो ज्ञान ग्रहण करने योग्य देखाते उनको ज्ञान जरूर देना. उक्त गुण सम्पन्नने दूसरी सम्प्रदाय के साधु ज्ञान देने योग्य होने ही उनको ज्ञान नहीं दिया. यह उनने जिनाज्ञा रूप धर्म का तो भंग किया परंतु गच्छ मर्याद का भंग नहीं किया. २ एकने धर्म का भंग नहीं किया परंतु गच्छ की मर्याद का भंग कर दूसरे को ज्ञान दिया. ३ एकने पाखंडी भ्रष्टाचारी अविनीत को ज्ञानदे जिनाज्ञा का भी भंग किया और और सम्प्रदाय की मर्याद का भी भंग किया और ४ एकने ज्ञानदेने के लिये पर के शिष्य को अपने बनाकर ज्ञान दिया जिस से जिनाज्ञा की और गच्छ मर्याद का दोनों का पालन किया ॥ १७ ॥ चार प्रकार के पुरुष जात

पण्णत्ता तंजहा-पियधम्मे णाममेगे णो दढधम्मे, दढधम्मे नाममेगे णो पियधम्मे, एगे पियधम्मेवि दढधम्मेवि, एगे णो पियधम्मे णो दढधम्मे ॥ १७ ॥ चत्तारि आयरिया पण्णत्ता तंजहा-पव्वावणायरिए, णामं एगे णो उवट्ठावणायरिए, उवट्ठावणायरिए णाममेगे णो पव्वावणायरिए, एगे पव्वावणायरिएवि उवट्ठावणायरिएवि, एगे णो पव्वावणायरिए णो उवट्ठावणायरिए ॥ १८ ॥ चत्तारि आयरिया पण्णत्ता तंजहा-उद्देसणायरिए नामं एगे नो वायणायरिए, वायणायरिए णाममेगे नो

कहे. तद्यथा—१ एक को धर्म प्रियकर है परंतु वह दृढधर्मी नहीं है. परिणाम चल विचल हो जाते हैं. २ एक दृढधर्मी किसी का चलाया चलता नहीं, परंतु धर्म करने का उत्साह प्रेम नहीं है ३ एक दृढधर्मी भी है, और प्रियधर्मी है. उत्तम पुरुष और एक दृढधर्मी नहीं है और प्रियधर्मी भी नहीं है. पाखंडी ॥ १७ ॥ अब आचार्य की चौभंगी कहते हैं चार प्रकार के आचार्य कहे हैं. तद्यथा-१ एक आचार्य प्रव्रज्या (दीक्षा) के देने वाले हैं परंतु महाव्रत आरोपन करने वाले (बडी दीक्षा देने वाले) नहीं २ एक आचार्य महाव्रत आरोपन करने वाले हैं परंतु दीक्षा देने [illegible] दीक्षा देने वाले भी हैं और महाव्रत आरोपने वाले भी हैं [illegible] और न पर [illegible] आरोपता है ॥ १८ ॥ [illegible] [illegible] परंतु सूत्र [illegible]

उद्देसणायरिए, एगेउद्देसणायरिएवि वायणायरिएवि, एगे णो उद्देसणायरिए णो वायणायरिए ॥ १९ ॥ धम्मायरियस्स चत्तारि अंतेवासी पण्णत्ता तंजहा-पव्वावणंतेवासी णाममेगे णो उवट्ठावणंतेवासी, उवट्ठावणंतेवासी नाममेगे णो पव्वावणंतेवासी, एगे पव्वावणंतेवासीवि उवट्ठावणंतेवासीवि, एगे नो पव्वावणंतेवासी नो उवट्ठावणंतेवासी ॥ २० ॥ चत्तारि अंतेवासी पण्णत्ता तंजहा-उद्देसणंतेवासी नाम एगे नो वायणंतेवासी, वायणंतेवासी णाम एगे नो उद्देसणंतेवासी, एगे उद्देसणंतेवासीवि वायणंतेवासीवि, एगे णो उद्देसणंतेवासी नो वायणंतेवासी चत्तारिधम्मायरिया

और ४ एक नतो उपदेशदाता है और न वाचना दाता है॥१९॥चार प्रकार के अन्तेवासी शिष्य कहे हैं तद्यथा-१ एक को दीक्षा देकर शिष्य बनाया परंतु महाव्रतारोपण करके नहीं बनाया, २ एक को महाव्रतारोपण कर शिष्य बनाया परंतु दीक्षा देकर शिष्य नहीं बनाया, ३ एक को दीक्षा देकर और महाव्रतारोपण दोनों प्रकार शिष्य बनाया और ४ एक को नतो दीक्षादी और न महाव्रतारोपण किये ऐसेही शिष्य बनालिया ॥ २० ॥ धर्माचार्य के चार प्रकार के अन्तेवासी (शिष्य) कहे हैं, तद्यथा—१ एक उपदेश से अन्तेवासी हुवा है परंतु वाचना देकर नहीं, २ एक वाचना देकर अन्तेवासी हुवा है परंतु उपदेश से नहीं, ३ एक उपदेश और वाचना दोनों से अन्तेवासी हुवा, और ४ एक उपदेश और वाचना दोनों बिना ही अन्तेवासी [illegible] है [illegible] प्रकार

सूत्र

पण्णत्ता तंजहा-पव्वावणधम्मायरिया नाममेगे नो उवट्ठावणधम्मायरिए उवट्ठावणा धम्मायरिए नाममेगे नो पव्वावणाधम्मायरिए एगेपव्वावणधम्मायरिएवि उवट्ठावणा धम्मायरिएवि एगे नो पव्वावणायरिए नो उवट्ठावणा धम्मायरिए चत्तारि धम्मायरिया पण्णत्ता तंजहा-उद्देसणाधम्मायरिए नाममेगे नो वायणाधम्मायरिए वायणाधम्मायरिए णाममेगे नो उद्देसणाधम्मायरिए एगे उद्देसणाधम्मायरिए विवायणाधम्मायरिएवि एगे नो उद्देसणा धम्मायरिएवि नो वायणाधम्मायरिए, चत्तारिधम्मंतेवासी पण्णत्ता तंजहा-पव्वावण धम्मंतेवासी नाममेगे नो उवट्ठावण धम्मंतेवासी उवट्ठावण धम्मंतेवासी नाममेगे नो पव्वावणधम्मंतेवासी एगे पव्वावणधम्मंतेवासीवि उवट्ठावणधम्मंतेवासीवि एगे नो

अर्थ

के धर्माचार्य कहे हैं. तद्यथा—१ एक दीक्षा देने वाले धर्माचार्य हैं परंतु महाव्रतारोपन करने वाले नहीं, २ एक महाव्रतारोपन करने वाले धर्माचार्य हैं परंतु दीक्षा देने वाले नहीं, एक दीक्षा देने वाले भी हैं और महाव्रतारोपण करने वाले भी हैं, और एक नतो दीक्षा देने वाले हैं और न महाव्रतारोपण करने वाले हैं ॥ १३ ॥ चार प्रकार के धर्माचार्य कहे हैं. तद्यथा—१ एक उपदेश दाता धर्माचार्य हैं परंतु वाचना दाता नहीं, २ एक वाचना दाता धर्माचार्य हैं परंतु उपदेश दाता नहीं; एक उपदेश दाता भी हैं और वाचना दाता भी है, और ४ एक उपदेश दाता भी नहीं है और वाचना दाता भी नहीं है ॥ १४ ॥ चार धर्म अन्तेवासी (धर्म शिष्य) कहे तद्यथा—१ एक दीक्षा दे धर्म शिष्य हुआ है परंतु महाव्रतारोपन का नहीं, २ एक महाव्रतारोपण करने धर्म शिष्य हुआ है परंतु दीक्षा देने से नहीं, ३ एक दीक्षा देने

सूत्र

पढआवणधम्मंतेवासी नो उवट्ठावणाधम्मंतेवासी चत्तारिधम्मंतेवासी उद्देसणधम्मंते-नामेगे णो वायणाधम्मंतेवासी वायणाधम्मंतेवासी नाममेगे नो उद्देसणाधम्मंतेवासी एगेउद्देसणाधम्मंतेवासीवि वायणाधम्मंतेवासी वि एगे नो उद्देसणा धम्मंतेवासी नो वायणाधम्मंतेवासी ॥ २१ ॥ तओ थेर, भूमीओ पण्णत्ताओ तंजहा-जाइ थेरे,सुय थेरे,पव्वज्जा थेरे सट्ठिवासजायए समणे णिग्गंथे जाइ थेरे, ठाणसमवायधरे समणे णिग्गंथे सुयथेरे वीसवास परियाए समणे निग्गंथे परियाय थेरे ॥२२॥ तओ सेहभूमीओ पण्णत्ताओ तंजहा सत्तराइंदिया, चउमासिया,

अर्थ

से और महाव्रतारोपण करने से दोनों प्रकार से धर्म शिष्य हुआ है और ४ एक नतो दीक्षा देने से और न महाव्रतारोपण करने से परंतु योंही धर्म शिष्य बनगया है ॥ १८ ॥ चार प्रकार के धर्म अंतेवासी कहे है तद्यथा-१ एक उपदेश से धर्म शिष्य हुआ वाचना देने से नहीं;२एक वाचना देने से धर्म शिष्य हुआ है परंतु उपदेश से नहीं. ३एकउपदेशसे और वाचना देनेसे दोनोंसे धर्म शिष्य हुआ है. और४एक उपदेश व वाचना दोनोंसे नहीं॥२१॥ अब स्थविरका अधिकार कहते है,तीन प्रकारके स्थविर कहे हैं तद्यथा-१जाति स्थविर सूत्र स्थविर और ३ दीक्षा स्थविर ॥ जिन साधु निर्ग्रन्थ की ६० वर्ष की वय होगइ होवे सो जाति स्थविर, २जो साधु निग्रंथ स्थानांग समवायांग के धारक होवे सो सूत्र स्थविर, और जिनको दीक्षा धारन किये बीस वर्ष होगये होवे वे दीक्षा स्थविर ॥ २२ ॥ तीन प्रकार की शिष्यकी भूमिका कही है तद्यथा-१ सातदिन की २ चार महिने की, और छ महिनेकी, दीक्षा लिये बाद छपहीने में महाव्रतारोपण करे वह उत्कृष्ट भूमि

छमासिया ॥ छमासिया उक्कोसिया, चउमासिया मज्झमिया, सत्तराइंदिया जहन्निया॥२३॥नो कप्पति निग्गंथाणवा णिग्गंथीणवा खुड्डगस्सवा खुडियाएवा उणट्ठवासजायं उवट्ठावित्तए वा संभुजित्तएवा ॥ २४ ॥ कप्पति निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा खुड्डगस्सवा खुडियाएवा साइरेगट्ठवासजायं उवट्ठावित्तएवा संभुजित्तएवा॥२५॥ नो कप्पति निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा खुड्डगस्सवा खुड्डियाएवा अवंजणजायस्स आयारकप्पे नामज्झयणे उद्दिसित्तएवा ॥ २६ ॥ कप्पति निग्गंथाणवा णिग्गंथीणवा खुड्डगस्सवा खुडियाएवा वंजणजाइस्स आयारकप्पे नामं अज्झयणे उद्दिसित्तएवा।

२ दीक्षा लिये बाद चार महिने में महाव्रतारोपन करे वह मध्यम शिष्य भूमी. और ३ दीक्षा लिये बाद सात दिन महाव्रतारोपण करे वह जघन्य शिष्य भूमिका ॥ २३ ॥ अब बालक को दीक्षा देने आश्रिय कहते हैं. साधु साध्वी को आठ वर्ष से कम उम्मर वाले बच्चे साधु बच्ची साध्वी के साथ आहार पानी करना नहीं कल्पता है ॥ २४ ॥ परंतु जिस की उमर आठ वर्ष से कुछ अधिक हो ऐसे बच्चे ऐसी बच्ची साध्वी के सामिल अन्य साधु साध्वीयों को आहार पानी सामिल करना कल्पता है ॥ २५ ॥ साधु साध्वी को छोटी उम्मर वाले साधु साध्वी जिस के कक्षादि के रोम प्रगट न हुवे हो ऐसे को आचारांग सूत्र पढाना नहीं कल्पता है ॥ २६ ॥ परंतु जिस छोटी उम्मर वाले साधु साध्वी को कक्षा मूछादि के रोम प्रगट होगये हो [१६ वर्ष की उम्मर होगई] उन को आचारांग सूत्र पढाना

॥ २७ ॥ तियामपरियाए समणस्स निग्गंथस्स कप्पति आयार कप्पे नामं अज्झयणे उद्दिसित्तएवा ॥ चउवास परियाए समणाणिग्गंथस्स कप्पति सुयगड णामं अंगउद्दिसित्तएवा ॥ पंचवास परियायस्स समणस्स निग्गंथस्स कप्पति दसाकप्प ववहार नाम अज्झयणे उद्दिसित्तएवा ॥ अट्ठवास परियागस्स समणस्स निग्गंथस्स कप्पति

अर्थ

कल्पता है ॥ २७ ॥ १ तीन वर्ष की दीक्षा वाले साधु निग्रन्थ को आचारांग सूत्र पढाना कल्पता है, २ चार वर्ष की दीक्षा वाले साधु को सुयगडांग सूत्र पढाना कल्पता है, ३ पांच वर्ष की दीक्षा वाले साधु को दशाश्रुतस्कंध, व्यवहार, वेदकल्प नामक शास्त्र पढाना कल्पता है, ४ आठ वर्ष की दीक्षा वाले साधु निग्रन्थ को स्थानांग समवायांग सूत्र पढाना कल्पता है, ५ दश वर्ष की दीक्षा वाले साधु को विवाह प्रज्ञप्ति (भगवती) सूत्र पढाना कल्पता है, ६ इग्यारे वर्ष की दीक्षा वाले साधु को-(१) लघुविमान विभक्ती, २ + महाविमान विभक्ती (३) अंग चूलिका, (४) वंग चूलिका (५) विवाह

+ इन दोनों सूत्र का लिखा है इस में प्रथम के तीन वर्ग-प्रथम वर्ग के ३७ उपदेशन कालाध्ययन, दूसरे वर्ग के ३८ उपदेशन काल अध्ययन, तीसरे वर्ग के ४० उपदेशन कालाध्ययन सब ११५ अध्याय थे. महाविमान विभक्ती के ५ वर्ग जिस में-प्रथम वर्ग के ४१, दूसरे के ४२, तीसरे के ४३, चौथे के ४४ और पांचवे के ४५ उपदेशन काल अध्ययन सर्व २१५ अध्ययन थे.

सूत्र

ठाणसमवाए णामं अंगे उद्दिसित्तए ॥ दसवास परियागस्स समणस्स णिग्गंथस्स कप्पति वियहेनामं अंगे उद्दिसित्तए ॥ एकारस वासपरियागस्स समणस्स निग्गंथस्स कप्पति खुड्डियाविमाण. पविभत्ती, महाल्लियाविमाण पविभत्ती, अंगचूलिया वंगचूलिया विवाह चूलिया णामं अज्झयणे उद्दिसित्तए ॥ बारस वास परियागस्स कप्पति समणस्स निग्गंथस्स अरुणोववाए, गरुलोववाए, धरणोववाए, वेसमणोववाए वेलंधरोववाए णामं अज्झयणे उद्दिसित्तए ॥ तेरसवास परियागस्स कप्पति समणस्स निग्गंथस्स उट्ठाणसुए समुट्ठाणसूए देविंदोववाए. नागपरियावणिए नामं अज्झयणं उद्दिसित्तए ॥ चउदसवास परियागस्स समणस्स णिग्गंथस्स कप्पति सुविण

अर्थ

चूलिका यह सूत्र पढ़ना कल्पता है. ७ बारावर्ष की दीक्षा वाले साधु को-(१) अरुणोववाइ, (२) गरुलोववाइ (३) धरणोववाइ, (४) वैश्रवणोववाइ, (५) वेलंधरोववाइ यह पांच सूत्र पढाना कल्पता है, ८ तेरा वर्ष की दीक्षा वाले साधु को (१) उपस्थान सूत्र, (२) समुत्स्थान. सूत्र, (३) देविन्द्रोपपात सूत्र, (४) नाग परियावणिक सूत्र पढ़ना कल्पता है. ९. चउदा वर्ष की दीक्षा वाले साधु को स्वप्न भावना नामक सूत्र पढ़ाना कल्पता है १० पन्द्रा वर्ष का दीक्षा वाले साधु को चारण भावना सूत्र पढाना कल्पता है, ११ सोला वर्ष की

णामं अज्झयणे उद्दिसित्तए ॥ पन्नरसवास परियागस्स समणस्स णिग्गंथस्स कप्पति चारण भावणा णामं अज्झयणे उद्दिसित्तए ॥ सोलसवासपरियागस्स समणस्स निग्गंथस्स कप्पति वेयणीसियं णामं अज्झयणे उद्दिसित्तए ॥ सत्तरस वास परियागस्स समणस्स णिग्गंथस्स कप्पति आसीविसं भावणा णामं अज्झयणे उद्दिसित्तए ॥ अट्ठारस वास परियागस्स समणस्स णिग्गंथस्स कप्पति दिट्ठिविसं भावणा णामं अंग उद्दिसित्तए ॥ एगूणवीसति वास परियागस्स समणे निग्गंथे कप्पति दिट्ठिवाए णाम अंगे उद्दिसित्तए ॥ वीसवास परियागस्स समणस्स णिग्गंथस्स कप्पति सव्वसुयाणुवादी भवति ॥ २८ ॥ दसविहे वेयावच्चे पण्णत्ते तंजहा-आयरिय वेयावच्चे, उवज्झाय

दीक्षा वाले साधु को वेदनी शतक सूत्र पढाना कल्पता है, १२ सतरा वर्ष की दीक्षा वाले साधु को आशीविष भावना सूत्र पढाना कल्पता है, १३ अठारा वर्ष की दीक्षा वाले साधु को दृष्टिविष भावना सूत्र पढाना कल्पता है, १४ गुनीस वर्ष की दीक्षा वाले साधु को दृष्टिवाद नमक बारवा अध्ययन पढाना कल्पता है १५ और बीस वर्ष की दीक्षा वाले साधु को सब शास्त्रानुवाद भाव भेद सहित पढाना कल्पता है ॥२८॥ दश प्रकार की वैयावच्च कही है, तद्यथा—१ आचार्य की वैयावच्च करे, २ उपाध्याय की वैयावच्च

सूत्र

वेयावच्चे, थेर वेयावच्चे, तवस्सी वेयावच्चे, सेहे वेयावच्चे, गिलाण वेयावच्चे, साहम्मिय वेयावच्चे, कुलवेयावच्चे, गणवेयावच्चं, संघवेयावच्चे, ॥ २९ ॥ आयरिय वेयावच्चं करेमाणे समणे निग्गंथे महाणिज्जरे महापज्जवसाणे भवति ॥ १ ॥ उवज्झाय वेयावच्चं करेमाणे समणे णिग्गंथे महानिज्जरे महापज्जवसाणे भवति ॥ थेरे वेयावच्चं करेमाणे

अर्थ

करे, ३ स्थविर की वैयावचकरे, ४ तपस्वी की वैयावच करे, ५ नवदिक्षित शिष्य की वैयावच करे, ६ गिलानी- वृद्धावस्था कारन से अशक्त बने साधु की वैयावच करे, ७ कुल-एक गुरु के बहुत शिष्य हों उन की परस्पर वैयावच करे ८ गण-सम्प्रदाय के साधु की वैयावचकरे, ९ संघ- साधु साध्वी श्रावक श्राविका चतुर्विध संघ की यथा उचित वैयावच करे, १० स्वधर्मिक- एक सरीखे शुद्ध चार वन्त साधु जो अन्य सम्प्रदाय के होवे उनकी भी वैयावच करे, ॥ २९ ॥ आचार्य की वैयावच करते हुवे साधु निग्रन्थ महा कर्मों की निर्जरा करते हैं उपाध्याय की वैयावच करते हुवे साधु निग्रन्थ महा कर्मों की निर्जरा का लाभ प्राप्त करते हैं. इस ही प्रकार उक्त दशोंही की वैयावच करते हुवे साधु निग्रन्थ महाकर्मों की निर्जरा करते हैं. महा धर्म रूप लाभकी प्राप्ति करते हैं. यह वैयावच इस प्रकार करे- १ आहार लावे, २ पानी लावे, ३ शैय्यासंथारा बिछोना बिछावे, ४ बैठे वहां आसन बिछावे ५ उपधि आदि की पडिलेहना करदे

नामंअज्झयणे उद्दिसित्तए ॥ पन्नरसवासं परियागस्स समणस्स णिग्गंथस्स कप्पति चारण भावणा णामंअज्झयणे उद्दिसित्तए ॥ सोलसवासपरियागस्स समणस्स निग्गंथस्स कप्पति वेयणीमयं णामं अज्झयणे उद्दिसित्तए ॥ सत्तरस वासपरियागस्स समणस्स णिग्गंथस्स कप्पति आसीविसं भावणा णामंअज्झयणे उद्दिसित्तए॥अट्ठारस वास परियागस्स समणस्स णिग्गंथस्स कप्पति दिट्ठिविसं भावणा णामं अंग उद्दिसित्तए ॥ एगूणवीसति वास परियागस्स समणे निग्गंथे कप्पति दिट्ठिवाए णाम अंगे उद्दिसित्तए ॥ वीसवास परियागस्स समणस्स णिग्गंथस्स कप्पति सव्वसुयाणुवादी भवति ॥ २८ ॥ दसविहे वेयावच्चे पण्णत्ते तंजहा-आयरिय वेयावच्चे, उवज्झाय

अर्थ

दीक्षा वाले साधु को वेदनी शतक सूत्र पढाना कल्पता है, १२ सतरा वर्ष की दीक्षा वाले साधु को आशीविष भावना सूत्र पढना कल्पता है, १३ अठारा वर्ष की दीक्षा वाले साधु को दृष्टिविष भावना सूत्र पढाना कल्पता है, १४ गुनीस वर्ष की दीक्षा वाले साधु को दृष्टिवाद नामक बारवा अध्ययन पढाना कल्पता है १५ और वीस वर्ष की दीक्षा वाले साधु को सब शास्त्रानुवाद भाव भेद सहित पढाना कल्पता है ॥२८॥ दश प्रकार की वैयावच्च कहे हैं. तद्यथा—१ आचार्य की वैयावच्च करे, २ उपाध्याय की वैयावच्च

सूत्र

वेयावच्चे, थेर वेयावच्चे, तवस्सी वेयावच्चे, सेहे वेयावच्चे, गिलाण वेयावच्चे, साहम्मिय वेयावच्चे, कुलवेयावच्चे, गणवेयावच्चे, संघवेयावच्चे, ॥ २९ ॥ आयरिय वेयावच्चं करेमाणे समणे निग्गंथे महाणिज्जरे महापज्जवसाणे भवति ॥ १ ॥ उवज्झाय वेयावच्चं करेमाणे समणे णिग्गंथे महानिज्जरे महापज्जवसाणे भवति ॥ थेरे वेयावच्चं करेमाणे

अर्थ

करे, ३ स्थविर की वैयावच्च करे, ४ तपस्वी की वैयावच्च करे, ५ नवदिक्षित शिष्य की वैयावच्च करे, ६ गिलानी- वृद्धावस्था कारन से अशक्त पने साधु की वैयावच्च करे, ७ कुल-एक गुरु के बहुत शिष्य हों उन की परस्पर वैयावच्च करे ८ गण-सम्प्रदाय के साधु की वैयावच्चकरे, ९ संघ- साधु साध्वी श्रावक श्राविका चतुर्विध संघ की यथा उचित वैयावच्च करे, १० स्वधर्मिक- एक सरीखे शुद्ध चार न के साधु जो अन्य सम्प्रदाय के होवे उनकी भी वैयावच्च करे, ॥ २९ ॥ आचार्य की वैयावच्च करते हुवे साधु निग्रन्थ महा. कर्मों की निर्जरा करते हैं उपाध्याय की वैयावच्च करते हुवे साधु निग्रन्थ महा कर्मों की निर्जरा का लाभ प्राप्त करते हैं. इस ही प्रकार उक्त दशोंही की वैयावच्च करते हुवे साधु निग्रन्थ महाकर्मों की निर्जरा करते हैं. महा धर्म रूप लाभकी प्राप्ति करते हैं. यह वैयावच्च इस प्रकार करे- १ आहार लादे, २ पानी लादे, ३ शैय्यासंथारा, बिछोना बिछादे, ४ बैठे वहां आसन बिछावे ५ क्षेत्र उपधि की पडिलेहना करदे

सूत्र

समणे निग्गंथे महानिज्जरे महापज्जवसाणे भवति तवसी वेयावच्चं करेमाणे समणे णिग्गंथे महानिज्जरे महापज्जवसाणे भवति ॥ सेह वेयावच्चं करेमाणे समणे णिग्गंथे महानिज्जरे महापज्जवसाणे भवति ॥ गिलाण वेयावच्चं करेमाणे समणे निग्गंथे महानिज्जरे महापज्जवसाणे भवति ॥ साहम्मियवेयावच्चं करेमाणे समणे निग्गंथे महानिज्जरे महापज्जवसाणे भवति ॥ कुलवेयावच्चं करेमाणे निग्गंथे महानिज्जरे महापज्जवसाणे भवति ॥ गणवेयावच्च करेमाणे समणे णिग्गंथे महानिज्जरे महापज्जव-

अर्थ

६ बाहिर आवे तब पांव पूजे, ७ औषध उपचार लादे, ८ थके होवे तो हाथ पांव दाब दे, ९ उनकी उपधि शास्त्र का वजन उठा लेवे, १० राजा आदि के उपेसना से कष्ट में पडे तो उन से बचावे, ११ रोगादि कारण से निद्रा न आवे तो रात्री को आप भी सावध रहे, १२ उच्चार (बडी नीत) परिठावे, १३ प्रश्रवण (लघुनीत) परिठावे, १४ श्लेष्म खेंक रादि परिठावे, इन चउदे प्रकार से आचार्य की वैयावच्च करे, ऐसे ही चउदा प्रकार से उपाध्याय की वैयावच्च करे. यों दशों ही की वैयावच्च १४ प्रकार से कर सब १४० बोल वैयावच्च के व्यवहार सूत्र की टीका में से ग्रहण किये हैं. और भी वैयावच्च का बहुत अधिकार है. वैयावच्च महालाभ का कारण है ऐसा जान वैयावच्च करे. इति व्यवहार सूत्र का दसरा उद्देशा ॥ १० ॥ २४ ॥ प्रायश्चित्त का खुलासा—१ भिक्षपाद-हस्तभादार के, २ लघुपाम-

सूत्र

साणे भवति संघवेयावच्चं करेमाणे समेण णिग्गंथे महाणिज्जरे महापज्जवसाणे भवति ॥ ३० ॥ त्तिबेमि ॥ ववहारसूयस्स दसमोउद्देसो सम्मत्तो ॥ १० ॥ इति विवहार सूयं सम्मत्तं ॥ २४ ॥ * * * * * * *

अर्थ

पुरिमढ करे, ३ गुरुमास, एकासना, ४ चार लघुमास-आंबिल. ५ चार गुरुमास-उपवास, ६ षट्लघुमास-बेला ७ षट्गुरु मास तेला, और भी प्रकार-भिन्नमास २५ दिन का तप, छेद लघुमास २७॥ दिन का तप, छद्गुरु मास ३० दिन का तप. छेद चार लघुमास १०५ दिन का तप, छेद चार गुरुमास १२० दिन का तप, छेद षट्लघु मास १६५ दिन का तप, छेद षट्गुरु मास १८० दिन का तप. उपघातिक लघु प्रायःश्चित्त २७ दिन का तप, अनुघातिक गुरुमास ३० दिन का तप, छेद तथा मूल छेद छे महिने के उपरांत नहीं है, तथा तपमास १८० उपरांत नहीं है ॥ अ कूटी-जानकर परवश स्वेच्छा रे तथा देवतादि के वश दोष लगावे तो मिथ्यादुष्कृत्य क्योंकि परवशपना. स्वयंकारणे अज्ञानपने अयमंत कुमार जो दोष लगावे पुरिमढ १, पांच प्रमाद के वश दोष लगावे तो पुरिमढ ११ मूलगुण उत्तरगुण का संकल्प से सेवका ११ पुरिमढ, आभिमान, दर्प कंदर्प सहित दोषका १२.१२ पुरिमढ. इति संक्षेप से प्रायश्चित विधि ॥

इति व्यवहार सूत्र समाप्तम् ॥ :: :: ::

* इति चतुर्विंशतितम *

॥ व्यवहार सूत्र-समाप्तम् ॥

वीर संवत २४४९ चैत्र शुदी ११ वार शुक्र




शास्त्रोद्धार प्रारंभ

वीराब्द २४४२ ज्ञान पंचमी




इति
व्यवहार सूत्र
समाप्तम्



शास्त्रोद्धार समाप्ति

वीराब्द २४४६ विजयादशमी